JSECR, Vol. 7, No. 15, July.-Dec., 2021 **ISSN : 2394-2878**
Impact Factor : 6.125(IIFS) Peer Reviewed Journal

लिव–इन–रिलेशनशिप का समाज पर सकारात्मक एवं नकारात्मक प्रभाव :एक विश्लेषण

प्रो. रेखा
समाजशास्त्र विभाग
म.गा.का.वि. वाराणसी

सारांश

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, जिसकी कई प्राणिशास्त्रीय आवश्यकतायें भी हैं, जिसमें से दैहिक संतुष्टि एक आधारभूत आवश्यकता है। मनुष्य के अतिरिक्त अन्य प्राणी भी दैहिक इच्छाओं की पूर्ति करते हैं, लेकिन इसका उनमें केवल दैहिक आधार होता है, मनुष्यों में यौन–इच्छाओं की पूर्ति का आधार अंशतः दैहिक है, विशेषतः सामाजिक व सांस्कृतिक है। परिवार के बाहर भी दैहिक संतुष्टि सम्भव है किन्तु समाज ऐसे सम्बन्धों को अनुचित व अनैतिक मानता है। बदलते सामाजिक परिवेश में भारतीय समाज में कई ऐसी व्यवस्थाओं को भी बल मिला है जो अबतक समाज में निषिद्ध के रूप में चिन्हित थी, जिन्हें विधिक स्वीकृति तो प्राप्त हो चुकी है और अब ये अपनी सामाजिक स्वीकृति प्राप्ति के लिए प्रयासरत है। हमारा समाज तब से धीरे–धीरे ऐसी प्रथाओं व व्यवस्थाओं से अनुकूलन कर रहा है जाति, धर्म, प्रथा अन्य सामाजिक, सांस्कृतिक बंधन व्यक्ति की आवश्यकता के आगे शिथिल पड़ते जा रहे हैं। लिव–इन–रिलेशनशिप या सहनिवास भी इन्हीं का एक परिणाम है। लिव–इन–रिलेशनशिप के नाम पर अब भी समाज में हर विवेकशील व्यक्ति विशेष के मस्तिष्क में उसकी व्यक्तिगत सोच के हिसाब से एक विचारणीय मुद्दा उभरता है। यह आधुनिक भारतीय समाजमें एक बड़ी चुनौती के रू‍प में उभरा है। यह व्यवस्था भारतीय समाज पर पश्चिमीकरण के प्रभावों की एक झलक है जो आजकल महानगरों में खुलेआम तथा अन्य नगरों में छिट–पुट तौरपर दिखाई देती है। जिसका समाज पर सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों तरह के प्रभाव पड़ रहा है जो हमारे समाज के लिए एक बड़ी चुनौती बन गयी है। प्रस्तुत विषय पर विवेचन या विचार–विमर्श करने से पूर्व हमें यह जान लेना चाहिए कि विवाह और लिव–इन रिलेशनशिप का वास्तविक अर्थ क्या है ?

मुख्य शब्द– दैहिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, लिव–इन रिलेशनशिप।

विवाह का शब्दिक अर्थ है, ''उद्वह'' अर्थात् वधु को वर के घर ले जाना। हम कह सकते हैं कि विवाह वस्तुतः दो विषम लिंगियों का पारिवारिक जीवन में प्रवेश करने की सामाजिक, धार्मिक तथा कानूनी स्वीकृति है। विवाह एक मौलिक एवं सार्वभौमिक संस्था है।

बोगार्डस कहते हैं कि, ''विवाह स्त्री और पुरूष के पारिवारिक जीवन में प्रवेश करने की संस्था है।''

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि विवाह एक ऐसी संस्था है जिसमें दो विषम लिंगी स्त्री एवं पुरूष परिवारिक जीवन में प्रवेश करके जीवन उपार्जन करते हैं और इनसे जो सन्तान जन्म लेता है उसे समाज वैध मानती है।

जब हम विवाह के उद्देश्यों पर विचार करते हैं तो पाते हैं कि विवाह दो विषम लिंगियों को यौन सम्बन्ध स्थापित करने की सामाजिक या कानूनी स्वीकृति प्रदान करता है। विवाह ही परिवार की आधारशिला है और परिवार में ही बच्चों का समाजीकरण एवं पालन–पोषण होता है। समाज की निष्ठा विवाह एवं परिवार से ही सम्भव है। यह नातेदारी का भी आधार है। विवाह के कारण कई नातेदारी सम्बन्ध पनपते हैं। विवाह आर्थिक हितों की रक्षा एवं भरण–पोषण के लिए भी आवश्यक है। विवाह संस्था व्यक्ति

को शारीरिक मानसिक एवं सामाजिक सुरक्षा प्रदान करती है। मरडॉक ने 250 समानों का अध्ययन करने पर सभी समाजों में विवाह के तीन उद्देश्यों का प्रचलन पाया–

1– यौन सन्तुष्टि
2– आर्थिक सहयोग
3– सन्तानों का समाजीकरण एवं पालन

संक्षेप में विवाह के उद्देश्यों को हम इस प्रकार से प्रकट कर सकते हैं–

- यौन इच्छाओं की पूर्ति एवं समाज में यौन क्रियाओं का नियमन करना।
- परिवार का निर्माण करना एवं नातेदारी का विस्तार करना।
- वैध सन्तानोत्पत्ति करना व समाज की निरन्तरता को बनाये रखना।
- सन्तानों का लालन–पालन एवं समाजीकरण करना।
- स्त्री पुरूषों में आर्थिक सहयोग उत्पन्न करना।
- मनसिक सन्तोष प्रदान करना।
- माता–पिता एवं बच्चों में नवीन अधिकारों एवं दायित्वों को जन्म देना।
- संस्कृति का एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरण करना।
- धार्मिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक उद्देश्यों की पूर्ति करना।
- समाजिक सुरक्षा प्रदान करना।

विवाह के महत्व की अगर हम चर्चा करें तो–

- विवाह एक मौलिक और सार्वभौमिक समाजिक संस्था है जो प्रत्येक देश, काल, समाज और संस्कृति में पायी जाती है।
- विवाह की मान्यता उसी समय प्राप्त होती है जब उसे समाज की स्वीकृति मिल जाती है। यह स्वीकृति प्रथा या कानून के द्वारा अथवा धार्मिक संस्कार के रूप में हो सकती है। सामाजिक स्वीकृति के अभाव में यौन सम्बन्धों को अनुचित एवं अनैतिक माना जाता है।
- वेस्टरमार्क ने विवाह को एक सामाजिक संस्था के अतिरिक्त एक आर्थिक संस्था भी माना है। इसका कारण यह है कि विवाह सम्बन्ध के आधार पर पति–पत्नी के सम्पत्ति के अधिकार भी निश्चित होते हैं।
- विवाह संस्था व्यक्ति की सामाजिक स्थिति के निर्धारण में योग देता है। विवाह सम्बन्ध के आधार पर उत्पन्न सन्तानों को ही समाज में वैधता या मान्यता प्राप्त होती है। अवैध सम्बन्धों से उत्पन्न सन्तानों की सामाजिक स्थिति वैध सम्बन्धों से उत्पन्न सन्तानों की तुलना में काफी निम्न होती है। उनकी प्रतिष्ठा कम होती है।
- विवाह से सम्बन्धित पद्धतियाँ विभिन्न समाजों में भिन्न–भिन्न होती हैं। प्रत्येक समाज की विवाह–पद्धति उस समाज की प्रथाओं, मान्यताओं और संस्कृति पर निर्भर करती है और ये अलग–अलग समाजों में भिन्न–भिन्न होती है।
- विवाह संस्था के आधार पर लैंगिक या यौन सम्बन्धों को मान्यता प्राप्त होती है। अन्य शब्दों में यह संस्थापति–पत्नीको एक दूसरे के साथ यौनसम्बन्धों का अधिकार एवं आज्ञा प्रदान करती है।

- विवाह सम्बन्ध एक स्थायी सम्बन्ध है। विवाह के आधार पर पति पत्नी के बीच स्थायी सम्बन्ध की स्थापना होती है। यौनइच्छाओं की पूर्ति, सन्तानोत्पत्ति, बालकों का पालन–पोषण तथा उनके समाजीकरण एव ंव्यक्तित्व के विकास की दृष्टि से विवाहसम्बन्ध का स्थायी होना आवश्यक है। बिना स्थायी सम्बन्ध के स्थापित पारिवारिक जीवन की दृढ़ता खतरे में पड़ सकती है इसलिए विवाह का स्थायी रूप से होना अति आवश्यक है।

स्पष्ट है कि विवाह केवल वैयक्तिक संतुष्टि का साधन मात्र हीन हीं है वरन् सामाजिक क्रिया–विधि भी है। जिससे समाज की संरचना को सुदृढ़ता प्राप्त होती है। मजूमदार व मदान के शब्दों में, विवाह से व्यक्तिगत स्तर पर शारीरिक, यौन और मनोवैज्ञानिक, सन्तान प्राप्ति व संतोष प्राप्त होता है, जो व्यापक सामूहिक स्तरपर इससे समूह और संस्कृति के अस्तित्व को बनाए रखने में सहायता मिलती है।

लिव–इन–रिलेशनशिप–

सोशल मीडिया के कारण भारतीयों की सोच बदल रही है, रिश्तों को लेकर भी और उसके निभाने के तरीकों को लेकर भी। कलतक जो वर्जनाएँ थी आज वह स्वतंत्रता है। स्वच्छन्दता और साथ ही अपने, अपनी जिंदगी के फैसले खुदलेने का हक भी। विवाह अबमहज एक ऐसी ही परंपरा मात्र है जिसे लेकर छोटे–बड़े शहरों में रहने वाले नव युवाओं की सोच बदल रही है। अब विवाह करके दो लोगों को साथ रहने के लिए सामाजिक सहमति और परिवार की सहमति की अनिवार्यता की आवश्यकता नहीं है। अब युवापीढ़ी साथरहने का फैसला करते हैं तो सामाजिक व पारिवारिक स्वीकृति के बजाए स्वयं की स्वतंत्रता व स्वच्छन्दता को अधिक महत्व देते हैं। लिव–इन–रिलेशनशिप भी इसी मानसिकता का परिणाम है।

जब कोई युवक और युवती शादी किये बिना स्वेच्छा से एक ही छत के नीच ेपति–पत्नी की तरह रह रहे हैं तो उस रिश्ते को लिव–इन–रिलेशनशिप कहा जाता है।

सकारात्मक पक्ष–

पार्टनर को जानने में आसानी–

लिव–इन–रिलेशनशिप में लड़के या लड़की को पार्टनर को जानने के लिए पूरा समय मिलता है। इसमें लड़के या लड़की के हर व्यवहार को बेहद करीब से देखते और समझते हैं। इसके अलावा लड़का–लड़की उनके व्यक्तित्व के बारे में भी जानने में मुश्किल नहीं होती है। जबकि शादी में एक या दो दिन मिलने से लड़का–लड़की सामने वाले के बारे में कुछ नहीं जानपाते हैं।

आर्थिक रूप से निर्भर–

इस तरह के रिलेशनशिप में आर्थिक रूप से किसी भी पक्ष को किसी के ऊपर बोझ बनने की जरूरत नहीं होती है। हालांकि सम्बन्ध खत्म होने पर भी किसी पर कोई आर्थिक बोझ नहीं पड़ता है। इस रिश्ते में लड़का–लड़की अपनी मर्जी से अपने पार्टनर पर पैसे खर्च कर सकते हैं। सामने वाले पर पैसे खर्च करने के लिए लड़का–लड़की बाध्य नहीं होते हैं।

सामाजिक दायित्वों से आजादी–

लिव–इन–रिलेशनशिप में रहने का फैसला ही लड़का–लड़की को सामाजिक और पारिवारिक दायित्वों से मुक्ति देता है। इस रिश्ते में सामाजिक और पारिवारिक नियम लड़के या लड़की पर लागू नहीं होते हैं। ऐसे मे इनको मानने का भी किसी के ऊपर कोई दबाव नहीं होता है। साथ ही एक दूसरे के पास खुद के लिए भी पूरा समय मिल पाता है।

किसी भी विषय पर जबाव देही नहीं होती–

लिव–इन–रिलेशनशिप में रहने के बाद किसी बात के लिए जबाव देही नहीं रहती हैं। बेशक इस रिश्ते में रहते हुए लड़का–लड़की अपने कार्यों के बारे में खुलकर बात करते हों, ऐसा कार्य क्यों कर रहे हैं, इस बात के लिए किसी को भी जबाव देने की जरूरत नहीं होती है।

कानूनी मामलों में फंसने से मुक्ति–

लिव–इन–रिलेशनशिप में लड़का–लड़की शादी की तरह कानूनी प्रक्रिया से नहीं गुजरते हैं। इसके अलावा शादी के टूटने पर कई तरह की कानूनी प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है। लेकिन इसमे रिश्ते को खत्म करने में इतनी मुश्किल नहीं होती है।

एक दूसरे को सम्मान देना

इस तरह के रिश्ते में किसी को भी किसी भी तरह की परेशानी होने पर वो व्यक्ति रिश्ते से आसानी से बाहर जा सकता है। रिश्ते से बाहर जाने की पूरी आजादी होने के कारण दोनों ही पार्टनर को एक–दूसरे के सम्मान का पूरा ध्यान रखना पड़ता है।

नकारात्मक पक्ष–

अविश्वास का डर :–

लिव–इन–रिलेशनशिप में रहने वालों में अविश्वास का डर हमेशा ही सताता रहता है। इस रिश्ते में दोनों ही पार्टनर रिश्ते से बाहर आने के लिए आजाद होते हैं। इसलिए दोनों में ही डर सताता रहता है और इसी कारण ही वह अपनी जिन्दगी को खुलकर खुशी–खुशी व्यतीत नही कर पाते हैं।

रिश्ता टूटने में आसान–

लिव–इन–रिलेशनशिप की वैसे तो यह खासियत है, लेकिन कुछ लोग इसको बुरा भी मानते हैं। कई बार एक पार्टनर दूसरे को आहत कर आगे बढ़ जाता है। इस रिश्ते में वादे अैर कसमें तो हैं पर सब अपनी इच्छा पर निर्भर करते हैं। रिश्ते के टूटने में आसानी है इसलिए इससे आसानी से बाहर आसकते हैं, जबकि शादी से रिश्ते से बाहर आने में कई तरह की कानूनी प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है और कई बार कानूनी प्रक्रिया में सालों लगजाते हैं।

रिश्ते का महत्व कम होना–

लिव–इन–रिलेशनशिप में कई मामलों में दोनों ही पार्टनर मे रिश्ते के सम्मान व महत्व को कम देखा जाता है। इसकी बड़ी वजह है दोनों के ही मन में यह बात पहले से ही होती है कि वो इस रिश्ते में कभी भी बाहर आसकते हैं। इस तरह के रिश्ते में अपनी आर्थिक और व्यक्तिगत आजादी के लिए शादी करने के फैसले को टालते रहते हैं।

बच्चों पर बुरा प्रभाव पड़ता–

लिव–इन–रिलेशनशिप में रहने वालों के बच्चों के दिमाग पर बुरा प्रभाव पड़ता है। इनके बच्चों में नियमों के प्रति सम्मान नहीं होता है। इसके अलावा वो समाज में दूसरे बच्चों से ज्यादा असुरक्षित महसूस करते हैं। यदि उनके मॉ बाप किसी कारणवश अलग हो जाते हैं तो उनको पारिवारिक मान्यताओं व उनकी जरूरतों के बारे में सही से कुछ पता नहीं चल पाता है।

सामाजिक निंदा का सामना करना–

भले ही आज समाज में लिव–इन–रिलेशनशिप तेजी से युवाओं के बीच प्रचलन में हों, लेकिन आज भी भारतीय समाज में इसको सामाजिक मान्यता नहीं मिल पायी है। इसलिए इस रिलेशनशिप में रहने वालों को खराब दृष्टि से देखा जाताहै। लिव–इन–रिलेशनशिप में रहने वाले लोगों को कोई आसानी से अपना कमरा किराए पर भी नहीं देता है।

औरतों के लिए बन जाती है बड़ी मुश्किल–

भारतीय समाज में आज लोगों की मानसिकता में पुरूष प्रधान सोच में थोड़ी तो कमी आयी है, परन्तु फिर भी इस मानसिकता को कई लोग बढ़ावा दे रहे हैं। ऐसे में लिव–इन रिलेशनशिप में यदि पुरूष साथी चला जाएँ, तो महिला को समाज में कई तरह की प्रताड़ना का सामना करना पड़ता है, इसके अलावा महिला को फिर से दोबारा पार्टनर मिलने में मुश्किल होता है। परन्तु पुरूषों को आसानी से मिल जाता है।

भारतीय संस्कृति अपनी विशिष्टता के कारण ही विश्व प्रसिद्ध रही है, भारतीय सामाजिक व्यवस्था को बनाए रखने में कई संस्थाऐं अपना महत्वपूर्ण योगदान देती रही है, जैसे– परिवार, विवाह, नातेदारी, जाति व्यवस्था आदि। ये सभी संस्थाऐं भारतीय समाज को वैश्विक पटल पर एक अलग पहचान प्रदान करती है, इसमें विवाह संस्था भी प्रमुख स्थान रखती है, लिव–इन–रिलेशनशिप समलैंगिक विवाह आदि अनैतिक व असामाजिक व्यवस्था इस संस्था की आदिकाल से चली आ रही गरिमा व जनकल्याण की भावना को ठेस पहुँचा रही है, क्योंकि ये व्यवस्थाऐं सामूहिकता की जगह व्यक्तिवादिता को बढ़ाती है जोकि सीभी व्यक्ति को सम्पूर्ण समूह, समुदाय, समाज की बजाए वैयक्तिक दृष्टि से सोचने की ओर प्रेरित करती है, इस दिशा में सुधार हेतु कुछ सुझाव निम्नवत् है–

- महानगरों में शिक्षा के पश्चिमीकरण के साथ–साथ भारतीय करण पर बल देना चाहिए, बच्चों को प्रारम्भ से युवावस्था तक भारतीय समाज की विशिष्टता से परिचित कराना चाहिए। भारतीय समाज को विदेशी चाल–चलन व तौर तरीके के अंधानुकरण के बजाए भारत की देशीयता से पोषित व पल्लवित होना चाहिए। इसके लिए सरकार को विद्यालयों से लेकर विश्वविद्यालयों तक पढ़ाऐ जाने वाले पाठ्यक्रमों में भारतीय संस्कृति से परिचित कराये जाने की व्यवस्था होनी चाहिए।
- विवाह को सामाजिक जिम्मेदारी के रूप में परिभाषित किया जाना चाहिए न कि सामाजिक बाध्यता के रू‍प में। भारतीय समाज में एक वर्ग के लोग अभी भी विवाह को ऐसे बोझ के रूप में देखते हैं जिसमें मुख्यतः सामाजिक दायित्वों व कर्त्तव्यों का भार होता है, इस विचारधारा को बदलने की आवश्यकता है।
- महानगरों में सरकार को ऐसे निवास स्थान की व्यवस्था करनी चाहिए, जहाँ एक अविवाहित व कामकाजी महिलाएँ सुविधापूर्वक रह सकें। महानगरों में आवास की समस्या युवावर्ग को सहनिवास की ओर ले जाने के लिए बाध्य करती है।
- महानगरों में अकेली महिलाओं के रहने के लिए एक सुरक्षित वातावरण बनाना चाहिए। महानगरों में असुरक्षा की भावना भी इस तरह के रिश्तें को अपनाने में एक अहम भूमिका निभाती है।
- महिलाओं कों आत्मनिर्भर बनाना चाहिए, जिससे उनमें पुरूष साथी की आवश्यकता की भावना का अंत हो। समाज में पुरूष प्रधानता की भावना में कमी तो आई है परन्तु यह भावना पूर्णतः समाप्त नहीं हो सकी है। इस ओर समाज व सरकार दोनों को ध्यान देना चाहिए।
- अगर एकवर्ग इस तरह के रिश्ते को अपनाना चाहता है तो समाज को इसे सहर्ष स्वीकार कर लेना चाहिए, जिससे लोग खुलकर इस विषय पर बात कर सके। आज भी जो लोग इस रिश्ते में रहते हैं अधिकांशतः वो स्वयं को विवाहित बता कर रहते हैं जोकि अनैतिक है।
- जो लोग विवाहित होते हुए भी इस तरह के रिश्ते में प्रवेश करते हैं तथा अपने साथी का विश्वास भंग करते हैं उन पर कठोर कानूनी कार्यवाही होनी चाहिए, जिससे कोई भी स्त्री या पुरूष विवाह जैसी पवित्र सामाजिक संस्था का उपहास (अपमान) न करें साथ ही किसी भी पक्ष का कोई नुकसान न हो।

- महानगरों या अन्य स्थानों पर जहाँ भी ऐसे जोड़े रहते हैं समाज उन्हें निंदनीय नजरों से देखता है। समाज की इस सोच को बदलने का प्रयास करना चाहिए क्योंकि कानूनी मान्यता प्राप्ति के बाद ऐसे रिश्ते अनैतिक माने जा सकते हैं, परन्तु ये अवैध नहीं है।
- हिन्दू विवाह में तलाक के नियमों को थोड़ा लचर बनाना चाहिए क्योंकि तलाक जैसी भयावह स्थिति से बचने के लिए भी युगल इस व्यवस्था को महत्व दे रहे हैं, क्योंकि भारतीय कानून व्यवस्था में हिन्दू विवाह में तलाक अत्याधिक कानूनी दावपेंचों से भरी प्रक्रिया है। महिला व पुरूष दोनों के लिए यह मानसिक प्रताड़ना के साथ सामाजिक प्रताड़ना भी साथ लाती है। समाज को इस दिशा में भी बदलाव की आवश्यकताहै।
- अनुलोम व प्रतिलोम विवाहों से संबंधित सामाजिक वर्जनाओं को भी कम करने की आवश्यकता है, क्योंकि यह बाध्यता भी युवापीढ़ी कोलिव–इन–रिलेशनशिप की ओर आकर्षित होने में सहायक बन रही है।
- लिव–इन–रिलेशनशिप में रहने का फैसला लड़का–लड़की को पारिवारिक व सामाजिक दायित्वों से मुक्ति देता है। भारतीय युवावर्ग की इस सोच को बदलने पर बल देना चाहिए। पारिवारिक व सामाजिक नियमों को व्यक्ति के अनुकूल बनाने का प्रयास किया जाना चाहिए, जिससे व्यक्ति इन्हें बोझ न माने व सहर्ष स्वीकार करें।
- रिश्ते तोड़ने की आसानी लिव–इन–रिलेशनशिप की खासियत है, कईबार एक पार्टनर दूसरे को आहत कर आगे बढ़ जाता है। इसका परिणाम कई बार गम्भीर अपराध के रूप में सामने आता है। कानून व्यवस्था को कठोर करके इस स्थिति का हल निकालना चाहिए।
- लिव–इन–रिलेशनशिप में रहने वाले बच्चों के लिए विशेष कानून होने चाहिए। इन बच्चों के दिमाग पर बुरा प्रभाव पड़ता है, ये सामाजिक नियमों का सम्मान नहीं करते तथा समाज में दूसरे बच्चों की तुलना में अधिक असुरक्षित महसूस करते हैं। ऐसा कानून होना चाहिए कि महिला के गर्भवती होने पर विवाह की अनिवार्यता हो ताकि इस गम्भीर स्थिति से बचा जा सके।
- लिव–इन–रिलेशनशिप में रहने वाले युवावर्ग को अपने रिश्ते के बारेमें अपने माँ–बाप से बता देना चाहिए ताकि अगर आगे चलकर कोई भी परेशानी होती है। तो उस समस्या का समाधान किया जा सके और यह व्यक्तिगत समस्या न होकर सामाजिक हो और कानून का सहारा लिया जा सके।

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि सुप्रीम कोर्ट व इस व्यवस्था के समर्थकों के प्रयासों के बावजूद भी लिव–इन–रिलेशनशिप भारतीय सामाजिक व्यवस्था में अब भी हासिए पर है। समाज के एक बड़ेवर्ग द्वारा इसे अभी भी वर्जित माना जाताहै। विवाह, जितना पवित्र व अटूट बंधनहै, लिव–इन–रिलेशनशिप उतना ही सामाजिक निंदनीय व कमजोर बंधन मानाजाताहै, क्योंकि इस पर सामाजिक नियम व दायित्वों का कोई अंकुश नहीं है जो इसे दिशाहीन होने की प्रबल संभावना को दर्शाता है। साथ ही साथ यह व्यवस्था महिलाओं को अधिक हानि पहुँचाती है। भारतीय पितृ–सत्तात्मक समाज में अभी भी महिलाएं, रूढ़ियों व कई सामाजिक मानदण्डों व नियमों से स्वयं केलिए लड़ रहीहै। विशेषकर, भारतीय समाजमें यदि महिला किसी पुरूष के साथ एक रिश्ते से गुजर कर आइ है तो उसे उचित सम्मान प्राप्त नही होता बल्कि उसे सामाजिक निंदा का पात्र बनना पड़ताहै। दूसरी तरफ इस प्रकार के रिश्ते से पैदा होने वाले बच्चों को भी उपेक्षा व निंदा का सामना करना पड़ता है। इस व्यवस्था में पुरूषों की बजाए महिलायें अधिक प्रभावित व प्रताड़ित हो रही हैं। इस व्यवस्था ने विवाह व्यवस्था की विश्वसनीयता को बहुत

अधिक प्रभावित किया है, जिससे समाज की एक बहुतही सम्मानित व आवश्यक सामाजिक संस्था की नींव खतरेमेंहै।

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

- जैन शोभित, (2010), भारत में परिवार, विवाहऔरनातेदारी, रावतपब्लिकेशन्स, जवाहरनगर, जयपुर
- कपाड़िया के.एम., (1958), मैरिज एण्ड फैमिलीइनइंडिया, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटीप्रेस, मुंबई
- Singh Sachindra Kumar, (2010), Women's Empowerment in India: Philosophical Perspective, DK Fine Art Press P. Ltd., Delhi
- Rayaran Kalpana, (2011), Facts of Indian Culture, Spectrum Books (P) Ltd., New Delhi
- गुप्ता एम.एल., (2003), समाजशास्त्र; साहित्य भवन पब्लिकेशन, जयपुर, पृ0सं0 314–317
- गोयल अनुराधा, लिव–इन–रिलेशनशिप : जरूरी हैसावधानी, 22 फरवरी 2013, अमरउजाला।
- डागाकीर्ति,shortessay on live in relationship;www.ukessay.com
- www.wikipedia.com.
- https://www. the betterindia.com/want to Get into a live in Relationship? mustneed to know, March 3, 2018
- https://www.webdunia.com/लिव इनरिलेशनशिपअपनीअपनीनैतिकता;
- https://www.ukessays.com /लिवइनरिलेशनशिपपरअलग–अलगविचार ।
- https://www.Differencebetween.into/Difference between marriage and live in Relationship;
- https://www.scotbuzz.org. 2018/ विवाह का अर्थ, परिभाषा, प्रकार, नियम एवंउद्देश्य–Scotbuzz.
- https://www. kanooniggan. com. in.

****

JSECR, Vol. 7, No. 15, July.-Dec., 2021 **ISSN : 2394-2878**
Impact Factor : 6.125(IIFS) Peer Reviewed Journal

वैश्वीकृत युग में उभरती भारतीय लोक कलाएं–एक समीक्षा

डॉ0 वेद पाल सिंह
एसोसिएट प्रोफेसर
ललित कला विभाग, डी0ए0वी0(पी0जी0) कॉलेज, मुजफ्फरनगर

सारांशिका–

मनुष्य आदि काल से ही अपने मन की भावनाओं को कला के विभिन्न स्वरूपों में प्रकट करता आया है। कला मानव क्रियाकलाप का सबसे प्राचीन व सर्वाधिक सार्थक रूप है, वहीं सम्पूर्ण विश्व में भारत अपनी समृद्ध पारम्परिक लोक कलाओं की सांस्कृतिक विरासत और उसकी जन्मभूमि के रूप में जाना जाता है। प्रत्येक कला अपने क्षेत्र के लोक जीवन एवं अपने जाति धर्म से पूर्णतः प्रभावित होती है और उस क्षेत्र की विशिष्ट पहचान बन जाती है। भारत में हर क्षेत्र की कला की अपनी एक शैली है, जो उसे अन्य जातियों से अलग करती है। इस दृष्टि से भारत एक धनी देश है, यहाँ विभिन्न जाति धर्म के लोग रहते हैं। किसी भी देश में लोक कला का अभाव मानव जीवन की सांकृतिक पहचान को कम करता है। कला के विभिन्न स्वरूपों के बारे में आम जन में जागरूकता सीमित है, क्योंकि इसका क्षेत्र व्यापक है। समय के साथ–साथ लोक कलाओं के क्षेत्र व उनके कलाकारों की सोच में भी परिवर्तन आया है, क्योंकि परिवर्तन प्रकृति का नियम है। बीते समय की कला निःस्वार्थ भाव से की गई साधना थी। सजावट, मनोरंजन, धार्मिक अनुष्ठान एवं उपयोगिता के उद्देश्य से की जाने वाली यह कला किसी भी आर्थिक लाभ व ख्याति के लालच से परे थी, जो मन के सुकून व ईष्ट की आराधना, आनन्द, उत्साह व मंगलमयी भावनाओं से युक्त मानी जाती थी तथा परन्तु अब सब बदल गया है। लोक जीवन में भी धन के अभाव ने धन संचय की ओर कलाकारों को आकृष्ट किया है। यह उचित ही हुआ क्योंकि कलाकृतियों के विक्रय से यह अन्य स्थानों पर पहुँची। उनके विषय में जितना विस्तार होता गया उतनी ही माँग बढ़ती गई और लोक कलाकृतियाँ साज सज्जा, वस्त्रों, टाईल्स, पोट्री, चादरों में आज न जाने कितने घरों, संग्रहालयों, होटलों, कार्यालयों में सजावट का साधन बन चुकी है। आज लोक कलाएं फैशन के क्षेत्र में भी अपने पैर पसार रही है। यदि यह केवल लोक जीवन तक सीमित रह गई होती, तो आज यह किसी अकेले कोने में दम तोड़ चुकी होती, जबकि आज इसे पहचान मिली है और इसकी लावण्यता तथा एक मूल्यवान धरोहर के बारे में विश्व इसके महत्व को जान रहा है।

इस समीक्षा की प्रस्तुति के लिए विभिन्न पुस्तकों, पत्रिकाओं, व इन्टरनेट के द्वारा अध्ययन तथा विश्लेषण किया गया, जिससे ज्ञात हुआ कि भारतीय लोक कलाओं जो कि कई पीढ़ियों से परम्परा के रुप में चलती रही हैं के उचित संरक्षण हेतु विभिन्न प्रकार के प्रचार प्रसार की आवश्यकता है। इसी के साथ कार्यशालाओं, गोष्ठियों एवं प्रदर्शनियों आदि के आयोजन तथा उपयोग में आने वाली वस्तुओं में इसके नवीनतम प्रयोगों द्वारा रचनात्मक परिणाम प्राप्त हो सकते हैं, जिससे दम तोड़ती लोककलाओं को पुनर्जीवन मिल सकता है और साथ ही सामान्यजन तक पहुँचने और इसकी माँग बढ़ने से यह धनोपार्जन का साधन बन सकेगी।

मुख्य शब्द– मॉडना, गोदना, पट्चित्र, कलमकारी।

प्रस्तावना–लोक कलाएं सामुदायिक मूल्यों को दर्शाने के साथ अपने क्षेत्र की विशिष्ट पहचान भी कराती हैं। इस शोध पत्र में हमने भारत की कुछ प्रसिद्ध लोककलाओं और वर्तमान युग में उनकी उपयोगिता दर्शायी है–

वरली पेन्टिग–यह महाराष्ट्र राज्य की प्रसिद्ध लोक कला है। यहाँ की कला, संस्कृति, रीति रिवाजों, पर्वों व स्थलों से आकर्षित होकर प्रतिवर्ष लाखों पर्यटक भ्रमण करने के लिए आते हैं। इस राज्य के विभिन्न क्षेत्रों में भील, गोंड, मेडिया, कोली, ओरन तथा वरली आदिवासी जातियां निवास करती हैं। परम्परागत रूप से वरली जनजाति के लोग मिट्टी के घरों में रहते थे और घरों की दीवारों को प्रतिदिन की दिनचर्या के चित्रों से सुसज्जित करते हैं, इनमें यें देवताओं और प्रकृति से अपने सम्बन्धों व भावनाओं को भी चित्रित करते हैं। चित्रों में अधिकतर ज्यामीतिय डिजाइन त्रिकोण, वृत्त, वर्ग, बिन्दुओं और टेढ़ी मेढ़ी रेखाओं आदि के प्रयोग के साथ मानवाकृतियॉ, जानवरों की आकृतियाँ तथा घरों, फसलों आदि को चित्रित किया जाता है। इस प्रकार इनके चित्रों की विषय वस्तु बहुत साधारण होती है। चावल की खेती अधिक होने के कारण वे चित्रों में सफेद रंग के लिए चावल के आटे का ही प्रयोग किया जाता है।

मधुबनी पेन्टिगं –मधुबनी या मिथिला की लोक कला बिहार राज्य के मिथिला क्षेत्र दरभंगा, पूर्णिया, सहरसा, मुजफ्फरपुर व नेपाल के कुछ क्षेत्र में प्रचलित है। मधुबनी क्षेत्र शहद का जंगल (मधु–बन) के नाम से जाना जाता है। इस लोक कला की विषय वस्तु धार्मिक व सामाजिक है। प्रारम्भ में यह महिलाओं द्वारा पूजाघर में रंगोली के रूप में बनाई जाती थी परन्तु वर्तमान में यह दीवारों, कागजों व वस्त्रों आदि पर भी चित्रित होने लगी है। विषय वस्तु के रूप में इसमें पौराणिक कथाओं की तस्वीरें, विवाह, जन्मचक्र आदि घटनाओं को चित्रित किया जाता है, जिनमें कमल के फूल, बांस, चिड़िया, सर्प आदि आकृतियों को माचिस की तिल्ली, बांस की कलम व अंगुलियों के प्रयोग से बनाया जाता था। आजकल निब व ब्रश का प्रयोग किया जाता है। इन चित्रों में पहले प्राकृतिक रंगों चावल का आटा, हल्दी, चन्दन, पराग, गोबर, मिट्टी व दीपक की स्याही का प्रयोग होता था वहीं वर्तमान में एक्रेलिक रंगों का प्रयोग किया जाता है। इस कला को लोकप्रियता मिलने के कारण आज इसका प्रयोग विभिन्न परिधानों, घरों की आन्तरिक साज सज्जा की वस्तुओं (परदे, कुशन, वाल पेपर, आदि) में होने लगा है। इन वस्तुओं के आकर्षण के कारण इनकी माँग बढ़ रही है, जिससे यह व्यवसाय का साधन बन रहा है।

काली घाट पेन्टिगं–9वीं शताब्दी में बंगाल के कलकत्ता शहर में काली मन्दिर में की जाने वाली कला को काली घाट पेन्टिगं के नाम से प्रसिद्ध है। 19वीं शताब्दी में एक समृद्ध कला के रूप में उभरी यह लोक कला पटुआ कलाकारों द्वारा की गई। कपड़े पर बनाए गए इन चित्रों की मुख्य विषय वस्तु धार्मिक थी, जिसमें मॉ काली सबसे प्रिय विषय था। इसके अतिरिक्त राम सीता, राधा कृष्ण तथा हनुमान एवं चैतन्य महाप्रभु व उनके शिष्यों का चित्रण भी हुआ। आधुनिक कलाकारों में यामिनी राय एक ऐसे प्रख्यात् कलाकार हैं जिन्होने इस लोक कला को अपने चित्रों का आधार बनाया।

कलमकारी–यह आन्ध्र प्रदेश की प्रसिद्ध एवं प्राचीन लोक कला है। इसका इतिहास 3000 ई0पू0 का माना गया है। प्रदेश के ग्रामीण अंचलों में कुछ लोक गायक व चित्रकार धार्मिक व पौराणिक कथाओं को कपड़े पर की गई चित्रकारी के माध्यम से लोक गाथाएं सुनाते थे जिन्हे चित्रकथी कहा गया। इनमें जैन, बौद्ध व हिन्दु धर्मो की गाथाएं वर्णित हैं। मोहन जोदड़ो से भी कलमकारी के कुछ नमुने प्राप्त हुए हैं। 13वीं से 18वीं शताब्दी में कलमकारी को मुगल शासकों का भी संरक्षण व प्रोत्साहन मिला। यह कला न केवल भारत में अपितु ईरान में भी विख्यात है। इसके निर्माण हेतु कपड़े को रातभर गाय के गोबर में भिगोकर रखा जाता है, अगले दिन इसे धूप में सुखाकर दूध व मांड के घोल में डुबोया जाता है तथा फिर से सुखाकर इस पर प्राकृतिक रंगों का द्वारा चित्र बनाए जाते हैं। भारत में कलमकारी के दो रुप विकसित हुए हैं, जिनमें एक है मछिलिपटनम कलमकारी जिसमें कपड़े पर ब्लॉक की सहायता से छापा चित्रण किया जाता है, दूसरा रूप है श्रीकलाहस्ति कलमकारी जिसमें बांस से बनाई कलम द्वारा चित्रकारी की जाती है। आजकल इस कला का प्रयोग साड़ी, कपड़ों के बॉर्डर, परदे, दीवारों की सजावट आदि में किया जाता है।

गोदना –यह छत्तीसगढ़ की अतिप्राचीन कला है, जो शरीर पर शब्द, नाम, चिन्ह, धार्मिक या अन्य प्रकार की आकृति बनाकर की जाती है। इसके पीछे आदिवासी जनजातिय लोगों की कई धार्मिक व सामाजिक मान्यताएं हैं कि बिना गोदना किए स्वर्ग की प्राप्ति नही होती, जिसके हाथ में गोदना नही उसके हाथ से पानी नही पीना, कुछ स्वाथ्य सम्बन्धी विकारों जैसे चोट का दर्द, वात रोग या अन्य शारीरिक दर्द आदि के निवारण हेतु इसका प्रयोग किया जाता है। सभी जातियों में गुदवाने का तरीका भिन्न होता है जिसको देखकर जनजातियों की पहचान की जा सकती है। गोदना हाथों, पैरों, जंघाओं, कोहनी, ठाड़ी, नाक, कलाई, पंजों सहित शरीर पर गुदवाया जाता है। महिलाओं में यह पुरुषों की अपेक्षा अधिक प्रचलन में है। बरसात के मौसम को छोड़कर गोदना कभी भी गुदवाया जा सकता है। अधिकतर महिलाएं ही गोदने का कार्य करती हैं। बादी, देवार, भाट, कंजर, बंजारा व मलार इस कला की दक्ष जातियॉ मानी जाती हैं। गोदना बनाने में रंग के लिए किसी भी तेल के काजल को पानी में मिलाकर एक पेस्ट तैयार किया जाता है, फिर इसमें बबूल का कांटा या सुई डुबोकर त्वचा पर चुभाकर आकृतियॉ बनाई जाती हैं। इसमें सूजन न आए इसके लिए इसे गोबर के घोल से धोकर हल्दी व अरंडी के तेल का लेप लगाया जाता है। वर्तमान में गोदना में प्रयुक्त आकृतियों का प्रयोग वस्त्रों, पेन्टिंग्स आदि सजावटी वस्तुओं पर किया जा रहा है।

पटचित्र–उड़ीसा के पटचित्र कला की उत्पत्ति 12वीं शताब्दी में पुरी स्थित जगन्नाथ मन्दिर से हुई। इसे उड़ीसा की कला का सबसे प्राचीन व लोकप्रिय रूप माना जाता है। पटचित्र पट्टे या कैनवास पर किया गया चित्रण कार्य को कहते हैं जिसमें धार्मिक, पौराणिक व सामाजिक विषयों को चित्रित किया जाता है। इस कला का प्रयोग भी आजकल वाल पेपर व सोफा कवर आदि में किया जाता है।

ऐपण–यह कला उत्तराखण्ड के कुमाऊॅ, गढ़वाल की गौरवमयी परम्परा रही है। यह धार्मिक आस्था एवं सामाजिक मान्यताओं की अभिव्यक्ति है। इसमें धार्मिक अनुष्ठान, त्योहारों, नामकरण संसकार व विवाह समारोह के अवसर पर शुभ, मंगलकामना हेतु घर–घर में कमेडा सफेद मिट्टी व गेरु, चावल, रोली, कुमकुम और अष्टगन्ध के द्वारा व ऊॅ, स्वास्तिक, मयूर, तोता, कमल, त्रिशूल, शंख, डमरु आदि रूपों व प्रतीक चिन्हों का प्रयोग कर ऑगन, देहरी व दीवारों पर ऐपण सजाया जाता है। अब यह खास अवसरों पर घर के ऑगन, देहरी व दीवारों की शोभा बढ़ाने तक ही सीमित नही रही, अपितु इसने व्यवसायिक रुप धारण कर रोजगार के नए दरवाजे खोले हैं। इसके प्रयोग फाईल कवर, फोल्डर, वस्त्र उद्योग में अपनी छाप छोड़ रहे हैं साथ ही पेन स्टैन्ड, दुपट्टे, बैग, स्टेशनरी, पूजा की थाली, नेम प्लेट व टी कोस्टर सहित कई उत्पादों को ऐपण के प्रिन्ट से तैयार किया जा रहा है, अल्मोड़ा व हल्द्वानी इसके हब बने हुए हैं।

अन्य लोक कलाएं– राजस्थान एवं मध्य प्रदेश की मॉडना, बंगाल की अल्पना व संथाल, उत्तर प्रदेश के ब्रज क्षेत्र की सांझी कला तथा भारत की ही अन्य लोक कलाएं जिनमें हस्तशिल्प, वस्त्रों की बुनाई व रंगाई, कढ़ाई आदि का कार्य किया जाता है इनमें बस्तर की ढोकरा कला, छत्तीसगढ़ की तुम्बा कला, उत्तर प्रदेश की चिकनकारी व जरदोज़ी, बंगाल की कान्था, राजस्थान की गोटापट्टी, बॉधनी व पिछवई, गुजरात की कच्छकारी व मिरर वर्क, पंजाब की फुलकारी, कश्मीरी कशीदाकारी एवं असम के हतकरघे की मेखला चादर आदि प्रचलन में आने व बढ़ती माँग के कारण व्यवसाय के रुप में खूब फल–फूल रही हैं।






निष्कर्ष–उपरोक्त के आधार पर कहा जा सकता है कि आज इस आधुनिकता के दौर में जहाँ हम अपनी परम्पराओं व अमूल्य कलाओं से दूर होते जा रहे हैं, वहीं इनका उक्त वर्णित विभिन्न प्रकार की वस्तुओं में प्रयोग जनसामान्य तक पहुँचकर इसके महत्व को और अधिक बढ़ा रहा है, जिससे यह रोजगार का भी साधन बनकर यह एक व्यवसाय के रुप में उभरकर सामने आ रही है।

सन्दर्भ सूची–

1. Indian Folk And Tribal Painting- C.S.Gupta [2008] 1st Edition Roli Books, New Delhi.
2. folk and tribal art www.archive.india.in/knowindia/culture
3. उत्तर प्रदेश की लोक कलाएं–डॉ0 विद्याबिन्दु सिंह (मार्च 1994) प्रथम संस्करण, सांस्कृतिक कार्य विभाग, उ0प्र0।
4. Unique Art Of Warli Painting- S.Satyawadi [2010] D.K.Print World.
5. Kalighat Painting: Images From a Chainging World- J.Jain [1999]. Middle Town, Grantha Corporation.
6. भारतीय चित्रकला का संक्षिप्त इतिहास– डॉ0 लोकेश चन्द्र शर्मा, कृष्णा प्रकाशन, मेरठ ।

JSECR, Vol. 7, No. 15, July.-Dec., 2021 **ISSN : 2394-2878**
Impact Factor : 6.125(IIFS) Peer Reviewed Journal

किशोरो में इंटरनेट की लत तथा व्यवहार पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन

डॉ0 रमेन्द्र कुमार सिंह
स्नातकोत्तर मनोविज्ञान विभाग
महाराजा कालेज आरा, विहार

प्रिती कुमारी
शोध छात्रा, मनोविज्ञान विभाग
वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा, विहार

सारांश–

इंटरनेट का उपयोग लगभग सभी क्षेत्रों में व्यापक रूप से हो रहा है। जीवन की व्यक्तिगत कार्य से लेकर इसका उपयोग शैक्षणिक वित्तिय, शोध समाचार अपड़ेट सामाजिकरण एवं और भी बहुत कुछ कार्यो में हो रहा है। इंटरनेट पर कोई भी कार्य करते समय व्यक्ति अपना ट्रैक खो सकता है। इंटरनेट पर कोई भी कार्य करते समय व्यक्ति विज्ञापन को देखकर कोई और ही कार्य करने लगता है। जैसे विडियों बनाना, मैसेज चेक करना इत्यादि।

1996 में गोल्डवर्ग द्वारा इंटरनेट की लत शब्द का प्रयोग किया गया था। इंटरनेट युवा के जीवन के कुछ क्षेत्रों के विकास में हस्तक्षेप कर रहा है। जैसे परिवारिक, सामाजिक, शैक्षणिक इत्यादि। इंटरनेट पर समय बिताने से बच्चे मानसिक रोग का शिकार भी हो रहा है।

मुख्य शब्द–इंटरनेट की लत, व्यवहार, किशोर परिवारिक, इंटरनेट समाजिक और शैक्षणिक

वर्तमान समय में ज्यादातर बच्चे और युवा इंटरनेट का उपयोग करते दिखाई दे रहा है। इंटरनेट का उपयोग लाभदायक है, लेकिन इसका अत्यधिक उपयोग करना इंटरनेट की लत बन जाती है। शराब, ड्रग्स की लत की तरह ही इंटरनेट की लत भी किशौर के लिए खतरनाक साबित हो रहा है इंटरनेट युवा के जीवन के कुछ क्षेत्रों के विकास में हस्तक्षेप कर रहा है। जैसे परिवारिक, समाजिक, शैक्षणिक इत्यादि। युवा में उन दोस्तो से भावनात्मक लगाव विकसित करते है जो उन्हे इंटरनेट से बनाई जाने वाले माध्यम से मिले है। वो उनसे मिलकर अपने विचारो का आदान-प्रदान करते है। और एक दुसरे के प्रति आकर्षित हो जाते है। या वो मनोरंजन के लिए गेम या विडियो इत्यादि पर अधिक समय बिताने लगते है। जिससे उन्हे एक आनंद की प्राप्ति होती है।

फेसबुक, टिवटर, इस्ट्रग्राम, यूटयूब आदि का इस्तेमाल निश्चित तौर पर ज्ञानवर्धक भी है। लेकिन इनका जरूरत से ज्यादा उपयोग युवाओं को 'एडिक्ट' बनाता जा रहा है। इंटरनेट पर मौजुद सारे ज्ञान सही ही नही है। इंटरनेट के उपयोग से भाषा ज्ञान में गिरावट के साथ–साथ जीवन मूल्य में भी गिरावट आ रहा है।

इंटरनेट के प्रसार प्रचार बढ़ने से अष्लीलता की भी समस्या पैदा हो रही है। शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य में भी गिरावट आ रहा है। अपराध और हिंसावृति भी बढ़ रही है। कुछ उसी तरह जिस तरह शराब पीने पर होता है।इंटरनेट की लत भी शराब से कम नही)

किशोरो में इंटरनेट की लत के लक्षण

- मोबाईल एवं कम्प्यूटर पर अधिक समय देना
- मित्रों एवं अन्य गतिविधियों से दुरी बना लेना

- थकान
- हमेशा नींद आना
- शैक्षणिक काम के प्रदर्षन में कमी
- इंटरनेट का उपयोग नही मिलने पर आसानी से चिढ़ जाना/गुस्सा आना

किशोरो में इन्टरनेट की लत का प्रभाव

इंटरनेट का अत्यधिक प्रयोग करने से युवा मानसिक रोग का शिकार हो रहे हैं। इंटरनेट युज के लिए मना करने पर बच्चों में चिड़िचिड़ापन दिखता है।

इन्टरनेट पैक खत्म होने से बच्चों में अवसाद, अकेलापन एवं आक्रमणकता दिखाई दे रहा है। इंटरनेट के उपयोग के लिए बच्चे घंटो एक जगह बैठकर बिताते है जिसके वजह से उनके शारीरिक गतिविधिया अवरोधित होती है, मेटवलोजिम कम काम करता है। जिस वजह से प्रतिरोधक क्षमता कमजोर हो जाता है। और तरह तरह के शारीरिक बिमारी होता है।

किम्बली यंग ने पहला अनुभवजन्य प्रस्तुत किया कि इंटरनेट के अधिक उपयोग से युवा समस्या ग्रस्त व्यवहार कर रहे है।

Object of the study

1. किशोरो में इंटरनेट की लत का अध्ययन।
2. किशोरो पर इंटरनेट की लत का उनके व्यवहार पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन।

Research Methodology

यह अनुसंधान कार्य समय और धन सीमा को ध्यान में रखते हुए 100 युवा को शामिल किया गया जिनकी उम्र 15 से 25 साल का है। जिसके परिवार उच्च, मध्यम एवं निम्न आय वर्ग के अन्तर्गत आते है। जो बिहार के भोजपुर जिला के वासी है।

प्रतिदर्श का चयन करने में स्नोवॉल प्रतिदर्श तकनीक (snow sampling technique) के द्वारा किया जाएगा।

Tools-

Internet usage Questionnaire by www.haverfard.edu

1. इंटरनेट उपयोग का सर्वेक्षण इन्टरनेट का उपयोग करने वाले प्रतिभागियो को एक प्रश्नावली भेजी गई जिसमें इंटरनेट उपयोग से संबंधित प्रश्न है।
2. **Internet Addiction Test by Dr. Kimberly S. Young.**

इंटरनेट लत टेस्ट की डॉ किमब्रेली एस. यंग द्वारा विकसित किया गया है। यह इंटरनेट का पहला वैध और विश्वासनीय माप है यह एक 20 प्रश्नों की प्रश्नावली है, जो मनोवैज्ञानिक निर्भरता, बाध्यकारी उपयोग, और वापसी के साथ–साथ शिक्षा, नींद, परिवार और मानसिक प्रबंधन से संबंधित समस्याओ को मापता है। इसका अधिकतम स्कोर 100 है। जितना अधिक स्कोर उतना ही अधिक इंटरनेट की लत का स्तर होगा। 0 से 30 अंक प्राप्त करने वाले किशोर समान्य श्रेणी 31 से 49 अंक प्राप्त करने वाले किशोर लत के श्रेणी में 50 से 79 अंक प्राप्त करने वाले किशोर मध्य लत के श्रेणी में और 80 से 100 तक अंक प्राप्त करने वाले किशोर इन्टरनेट पर ही आश्रित हो गये है।

Addiction Test Score point

Score points	Internet Addiction
00 to 30	Normal level problem
31 to 49	Mill level problem
50 to 79	Moderate level
80 to 100	Dependence upon the Internet.

प्रतिदर्शः–

इस अध्ययन में धन और समय के अभाव में प्रतिदर्श कि संख्या 35 ही रखा गया है। जिसमें किशोर और किशोरी विभिन्न आयु एवं विभिन्न शैक्षणिक स्तर के है।

प्रतिदर्श की आयु	किशोर संख्या
15 से 18 वर्ष	06
19 से 20 वर्ष	16
21 से 25 वर्ष	13
कुल	35

मेरे द्वारा किया गये सर्वे में .06 किशोर 15 से 18 वर्ष के 16 किशोर 19 से 20 वर्ष के एवं 13 किशोर 21 से 25 वर्ष के बीच पाये गये जिन पर इन्टरनेट कि उपयोगिता एवं लत का अध्ययन किया गया।

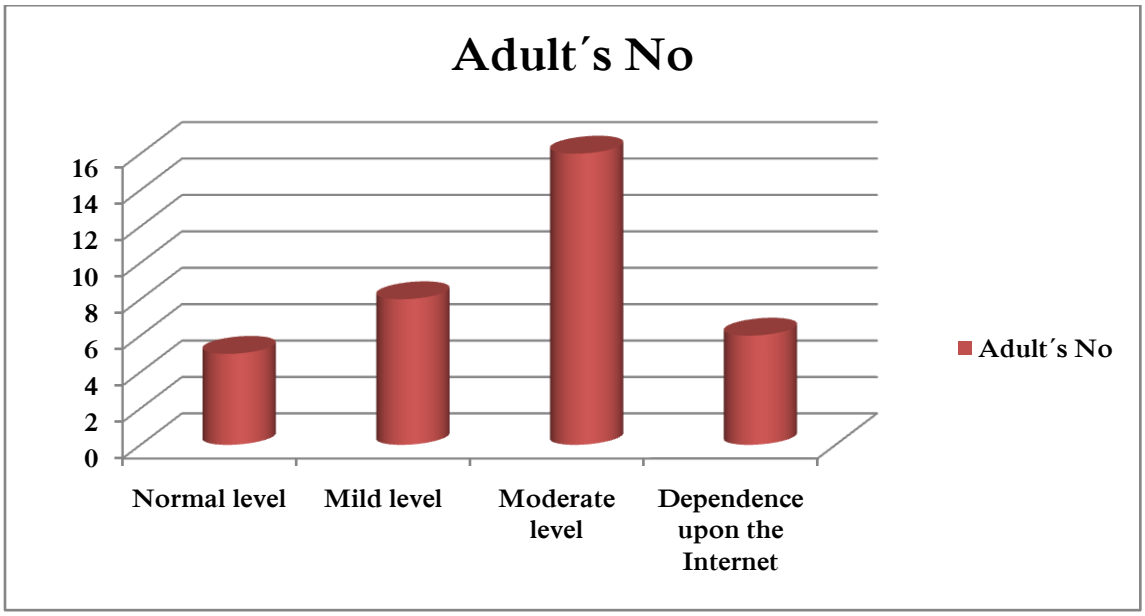
<u>प्रतिदर्श की शैक्षणिक स्तर</u>

प्रतिदर्श की शैक्षणिक स्तर	किशोर संख्या
इन्टरमिडियट	05
स्नातक	17
स्नाकोत्तर	13
कुल	35

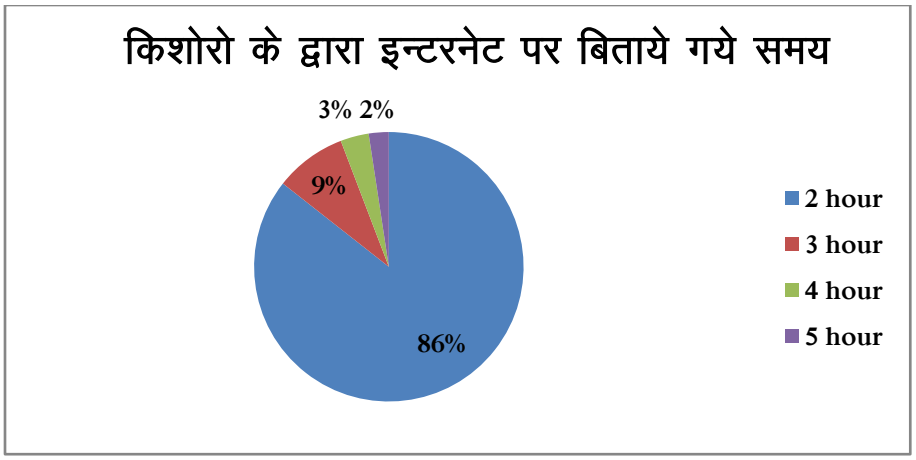
इस सर्वे में 05 किशोर इन्टरमिडियट, 17 किशोर स्नातक एवं 13 किशोर स्नाकोत्तर शैक्षणिक स्तर के है।

प्रदत विष्लेषण

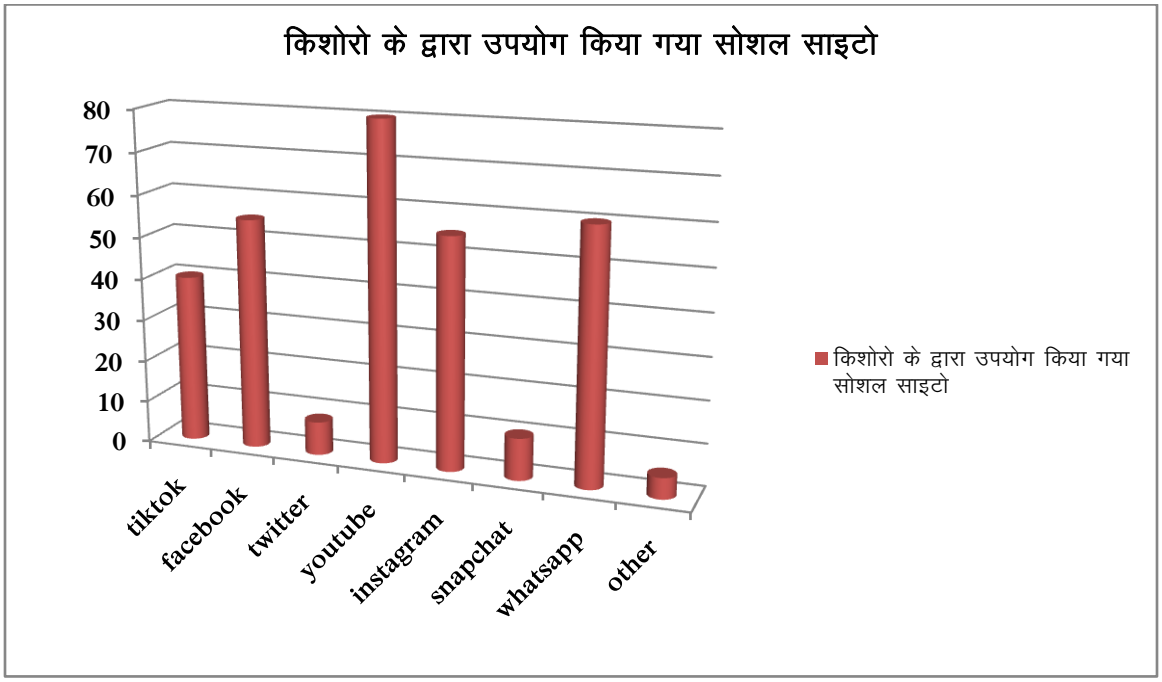
Adult´s No	Score points	Internet Addiction
05	00 to 30	Normal level
08	31 to 49	Mild level
16	50 to 69	Moderate level
06	80 to 85	Dependence upon the Internet
Total No. 35		



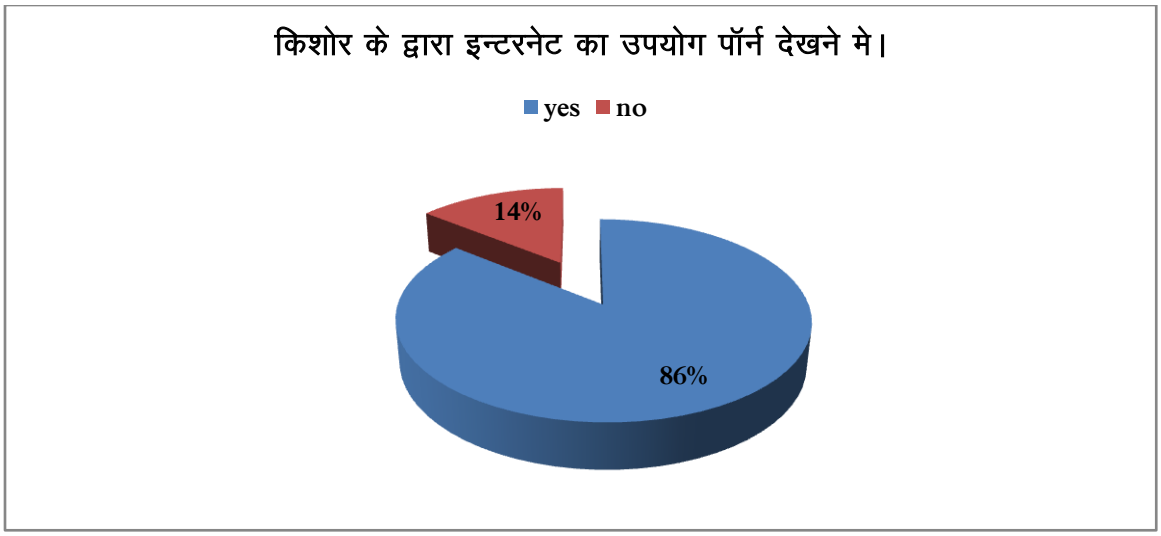
इस शोध का उद्देश्य था कि वर्तमान समय में युवा के द्वारा इन्टरनेट का उपयोग एवं उसके प्रभाव का अध्ययन था मेरे प्रदत्त को देखने से पता चला है कि 05 किशोर ही ऐसे है जो डॉ किमब्रेली एस. यंग द्वारा बनाई गई Internet Addiction Test के score points के 00 से 30 तक में है जो समान्य है। 8 किशोर 31 से 49 के score points के बीच में है। जो लत के निम्न श्रेणी में आते है। 16 किशोर का 50 से 79 score points के बीच है। जो लत के मध्य श्रेणी में आते है। बल्कि 06 किशोर 80 से 85 score points के बीच है। जो सबसे अधिक लत के अन्तर्गत आते है।

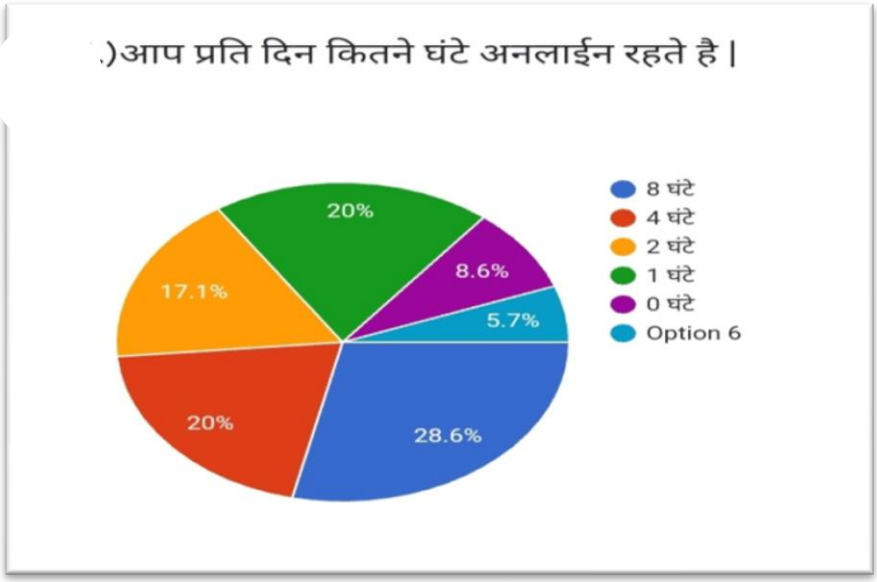


वर्तमान समय में किशोरो के द्वारा कौन कौन सा सोशल साइटो का उपयोग किया गया।



किशोर के द्वारा इन्टरनेट का उपयोग पॉर्न देखने मे।





निष्कर्ष

इस शोध का उद्देष्य था कि किशोर एवं किशोरी लत तथा व्यवहार का अध्ययन इस प्रकार कि हम अपने प्रदत में प्रतिदर्ष कि संख्या 35 रखा गया हें जिसमें सभी किशोर एवं किशोरी विभिन्न आयु एवं विभिन्न शैक्षणिक स्तर के है। मेरे द्वारा सर्वे में देखा गया है कि 06 किशोर 15 से 18 वर्ष के 16 किशोर 19 से 20 वर्ष के एवं 13 किशोर 21 से 25 वर्ष के बीच पाये जिसमे यह देखे गये कि इंटरनेट कि उपयोगिता सबसे ज्यादा खेल/संगीत देखने वाले किशोर और किशोरी है। मै अपने Respones में देखी कि सबसे ज्यादा समय किशोर एवं किशोरी सोशल साइट पर ही समय बिताते पाये गये।

References

- **(Bhumika 2018, Internet Addiction family communication patterm and perceived social support Among Adolesconts. Periodic Rescharch (vil-7 issue-1, page No- 229-232**
- www.m.hindi-webdunia.org/articalesTrastomes-emocionals/internet addiction acces date 11/04/2021
- **(ishrat shahnaz,"A.K.M Rezaul karim psychology university of Dhaka (2014)universal Journal of Psychology 2 (9): page No. 273-284**
- **www.haverfard.edu**
- नवभारत टाइम्स 14 नवम्बर 2019

JSECR, Vol. 7, No. 15, July.-Dec., 2021 **ISSN : 2394-2878**
Impact Factor : 6.125(IIFS) Peer Reviewed Journal

21वीं सदी में नारी सशक्तिकरण यथार्थ व स्वप्न : एक सिंहावलोकन

निर्मालिका सिंह
शोध छात्रा–समाजशास्त्र विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

सारांश–

सम्पूर्ण राष्ट्रीय विकास से सम्बन्धित जिन आधारभूत विषयों पर विचार किये जाने की नितान्त आवश्यकता है, उनमें महिला सशक्तिकरण महत्त्वपूर्ण है। भारत में महिलाओं की स्थिति में कई बड़े बदलाव आये हैं। स्वतन्त्रता से पूर्व महिला विभिन्न प्रकार के शोषणों का शिकार थी। स्वतन्त्रता पश्चात् महिलाओं की दयनीय स्थिति में सुधार हेतु भारत सरकार ने अथक प्रयास प्रारम्भ किये। इसके अन्तर्गत महिलाओं को शिक्षित कर उन्हें कौशल प्रशिक्षण द्वारा आत्मनिर्भर बनाने के लिए प्रयासरत है। आज 21वी सदी में महिलाओं ने स्वयं को मुख्यधारा से जोड़ लिया है। पिछले वर्षों में भारत सरकार ने महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए महत्त्वपूर्ण योजनाओं एवं कानूनों का निर्माण किया, जिससे महिला के अधिकारों में, उसकी शैक्षिक स्थिति एवं रोजगार से सम्बन्धित क्षेत्रों में काफी परिवर्तन आया है। परन्तु एक तरफ जहाँ महिला प्रत्येक क्षेत्र में अपनी उपस्थिति दर्ज करती रही है, वहीं दूसरी तरफ उसे विभिन्न कुरीतियों, रूढ़ियों से जकड़ दिया जा रहा है। सभी प्रावधानों एवं प्रयत्नो के बावजूद उसे दोयम दर्जे का सामना करना पड़ रहा है। प्रस्तुत शो पत्र में महिला सशक्तिकरण के दावों, आँकड़ों को यथार्थ के पैमाने पर तोलने की कोशिश की गई है।

मुख्य शब्द– नारी सशक्तिकरण, आवश्यकता, विश्व महिला सशक्तिकरण, लिंगानुपात, विवाह, प्रजनन, शिक्षा, राजनीति

महिला सशक्तिकरण से अभिप्राय ऐसी शक्ति से है जो महिलाओं को सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक और कानूनी रूप से सोचने, समझने और जीने की स्वतन्त्रता देती है। सशक्तिकरण का सम्बन्ध महिलाओं के जीवन के आत्म–निर्णय से है। सशक्तिकरण की प्रक्रिया समाज को पारम्परिक पितृसत्तात्मक दृष्टिकोण के प्रति जागरुक बनाती है। महिला सशक्तिकरण , भौतिक या आध्यात्मिक, शारीरिक या मानसिक, आंतरिक या बाहरी सभी स्तरों पर महिलाओं में आत्मविश्वास जागृत करता है। महिला सशक्तिकरण में महिला की आत्म अभिव्यक्ति और उनके व्यक्तित्व की आत्मा सम्मिलित है। सशक्तिकरण के द्वारा महिला अपने अंदर एक चेतना, संवेदनशीलता, सकारात्मक छवि, रचनात्मकता, पूर्णता महसूस करती है। महिलाओं की स्थिति में सुधार तथा उनके सशक्तिकरण के विषय में सर्वत्र चिंतन, मनन तथा जागरुकता आज के समय की आवश्यकता भी है और जरूरत भी।

महिला सशक्तिकरण आज के समय का सबसे ज्वलंत विषय और आज के समाज की सबसे बड़ी चुनौती है, क्योंकि पुरुषों के मुकाबले महिलायें ज्यादा संवेदनशील, ज्यादा कार्य करने वाली और आर्थिक रूप से पुरुष पर निर्भर रहने वाली और सांस्कृतिक बन्धनों की जंजीरों मे बंधी होती है। किसी भी देश की आर्थिक गतिविधि में महिलाओं की उचित भागीदारी के बिना सामाजिक प्रगति की आशा रखना गलत है। पैलिनी थूराई के अनुसार, ''महिला सशक्तिकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा समाज के विकास की प्रक्रिया में राजनीतिक संस्थाओं के द्वारा महिलाओं को पुरुषों के बराबर मान्यता दी जाती है। लीला मीहेन के अनुसार, ''महिला सशक्तिकरण निडरता, सम्मान और जागरुकता तीनों शब्द महिला सशक्तिकरण में

सहायक है। यदि डर से आजादी महिला सशक्तिकरण का पहला कदम है, तो तेजी से न्याय से उसकी आवश्यकता पूरी हो सकेगी। यदि महिलाओं को वास्तव में न्याय दिलाना है तो उनकी जाँच–परख प्रणाली को और अधिक कार्य कुशल बनाना होगा तथा अराजकता फैलाने वाले तत्त्वों को सजा देनी होगी। महिला सशक्तिकरण का उद्देश्य महिलाओं की प्रगति और उनमें आत्मविश्वास का संचार करना है। महिलाओं के लिए **डॉ0 बी0आर0 अम्बेडकर** का कथन है कि– भारतीय नारी श्रम से नहीं घबराती किन्तु आँसुओं की चिन्ता करते हुए वह रोटी, असमान व्यवहार, शोषण से अवश्य डरती हैं, इसमें बाबा साहेब ने महिलाओं की वास्तविक वेदना को मुखरित किया है महिला सशक्तिकरण की आवश्यकता, बहुआयामी है, यह कोई पुरुष निरपेक्ष नहीं बल्कि सापेक्ष विमर्श है और इसके लिए पुरुषों को भी आगे आना होगा। महिलाओं के सामाजिक सशक्तिकरण में शिक्षा की अहम् भूमिका है। यह महिलाओं के सर्वांगीण विकास के लिए प्रथम एवं मूलभूत साधन है, क्योंकि महिलाओं के शिक्षित होने पर जागरुकता, चेतना आयेगी। अधिकारों की सजगता होगी, रूढ़ियों, कुरीतियों, कुप्रथाओं का अन्धेरा छटेगा और वैचारिक क्रान्ति से प्रकाश पुंज फूट निकलेगा। शिक्षा के माध्यम से महिलाएँ, समाज में सशक्त समान एवं महत्वपूर्ण भूमिका दर्ज करा सकती है। इसके साथ ही अपनी आर्थिक व राजनैतिक भागीदारी भी सुनिश्चित कर सकती हैं, जिसमें राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की महिलाओं से जुड़ी योजनाएं महत्त्वपूर्ण है।

महिला सशक्तिकरण को प्राथमिकता देने के क्रम में वर्तमान भारतीय प्रधानमंत्री द्वारा महिलाओं को पुरुषों के बराबर अवसर प्रदान करने का प्रयास किया है जो सुरक्षा के पाँच पहलुओं पर आधारित एक व्यापक मिशन है। ये पाँच पहलू हैं– माँ एवं शिशु की स्वास्थ्य सुरक्षा आधारित, सामाजिक सुरक्षा वित्तीय सुरक्षा, शैक्षणिक सुरक्षा एवं वित्तीय कार्यक्रमों के माध्यम से भविष्य की सुरक्षा तथा महिलाओं की सलामती। इस प्रकार हम पाते हैं कि जब भी राष्ट्र को सशक्त करने की बात आती है तो महिला सशक्तिकरण के पहलू को अनदेखा नहीं किया जा सकता।

किसी संस्कृति को अगर समझना हैं तो सबसे आसान तरीका है कि उस संस्कृति में नारी के हालात को समझने की कोशिश की जाये। किसी भी देश के विकास सम्बन्धी सूचकांक को निर्धारित करने हेतु उद्योग व्यापार, खाद्यान्न उपलब्धता, शिक्षा इत्यादि के स्तर के साथ ही इस देश की महिलाओं की स्थिति का भी अध्ययन किया जाता है। नारी की सुदृढ़ एवं सम्मानजनक स्थिति एक उन्नत, समृद्ध तथा मजबूत समाज की द्योतक है।

भारत के सम्बन्ध में कई बार वर्ल्ड बैंक ग्रुप आदि ने कहा है कि अगर यहाँ पर महिलाओं की आर्थिक भागीदारी में वृद्धि की जाये तो भारत की विकास दर में तीव्र वृद्धि हो सकती है। गौरतलब है कि 1994 से 2012 के मध्य कई लाख भारतीय गरीबी रेखा से बाहर निकल चुके हैं। इन आँकड़ों में और बढ़ोत्तरी होती, अगर कार्यबल में महिलाओं की भागीदारी में और इजाफा होता। 2012 में सिर्फ 27 प्रतिशत वयस्क भारतीय महिलाएँ विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत थी। कार्यबल में महिलाओं की भागीदारी के मामले में भारत की रैंकिंग विभिन्न देशों के मध्य निम्न है, परन्तु लिंग आधारित हिंसा की दर के मामले में यह काफी उच्च है। देश के कार्यबल में महिलाओं की भागीदारी 2016 के 37 प्रतिशत से नीचे गिरकर 2019 में 18% रह गई है एवं जेंडर गैप के मामले में 23% पर आ गई है। यह माना जाता है कि कार्यबल में महिलाओं में प्रवेश को सुनिश्चित करने और उनकी भागीदारी बढ़ाने में जेंडर सेंसेटिव इन्फ्रास्ट्रक्चर महत्त्वपूर्ण भूमिका निर्भाता है। जेंडर सेंसेटिव इन्फ्रास्ट्रक्चर के तहत बच्चों हेतु पूर्णकालिक शिशुगृह, कार्यशील महिलाओ हेतु वहनीय एवं सुरक्षित हास्टल एवं आधारभूत सार्वजनिक सुविधाएं शामिल है।

इन सबके बावजूद सिक्के का एक अन्य पहलू यह भी है कि आज भी महिला कार्यबल का एक बड़ा हिस्सा अन्याय एवं शोषण का शिकार होता है, जिसके लिए महिलाओं को अपने स्वतंत्र अस्तित्व का निर्माण करने और उसे कायम रखने हेतु स्वावलम्बी और आत्मनिर्भर होना बहुत जरूरी है, साथ ही जो समाज और रिवाज स्त्रियों के विकास को उचित नहीं समझता, उसे बदल देना आवश्यक है।

भारत में महिला सशक्तिकरण की आवश्यकता–

भारत में महिला सशक्तिकरण की आवश्यकता के बहुत से कारण सामने आते हैं। प्राचीनकाल के अपेक्षा मध्यकाल में भारतीय महिलाओं के सम्मान स्तर में काफी कमी आयी। भारत में महिला सशक्तिकरण की आवश्यकता विभिन्न कारणों से हो, जो कि निम्न है–

(i) आधुनिक में कई भारतीय महिलाओं, कई सारे महत्त्वपूर्ण राजनैतिक तथा प्रशासनिक पदों पर पदस्थ है, फिर भी सामान्य ग्रामीण महिलाएं आज भी अपने घरों में रहने के लिए बाध्य है और उन्हें सामान्य स्वास्थ्य सुविधा और शिक्षा जैसी सुविधाएं भी उपलब्ध नहीं है।

(iii) भारत के शहरी क्षेत्रों की महिलाएँ (ii) शिक्षा के मामले में भी भारत में महिलाएँ पुरुषों की अपेक्षा काफी पीछे है। भारत में पुरुषों की शिक्षा दर 81.3% है, जबकि महिलाओ की शिक्षा दर मात्र 60. 6% ही है।

(iv) भारत के शहरी क्षेत्रों की महिलाएँ, ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाओं के अपेक्षा अधिक रोजगारशील है, आँकड़ों के अनुसार भारत के शहरों में साफ्टवेयर इंडस्ट्री में लगभग 30% महिलाएँ कार्य करती है, वहीं ग्रामीण क्षेत्रों में लगभग 90% महिलाएँ मुख्यतः कृषि और इससे जुड़े क्षेत्रों में दैनिक मजदूरी करती हैं।

(v) भारत में महिला सशक्तिकरण की आवश्यकता का एक और मुख्य कारण भुगतान में असमानता भी है। एक अध्ययन में सामने आया है कि समान अनुभव और योग्यता के बावजूद भी भारत में महिलाओं को पुरुषों की अपेक्षा 20 प्रतिशत कम भुगतान दिया जाता है।

(vi) हमारा देश काफी तेजी और उत्साह के साथ आगे बढ़ता जा रहा है, लेकिन इसे हम तभी बरकरार रख सकते है, जब हम लैंगिक असमानता को दूर कर पाये और महिलाओ के लिए भी पुरुषों के समान शिक्षा, तरक्की और भुगतान सुनिश्चित कर सके।

(vii) भारत की लगभग 50 प्रतिशत आबादी केवल महिलाओं की है, मतलब पूरे देश के विकास के लिए इस आधी आबादी की जरूरत है, जो कि अभी भी सशक्त नहीं है और कई सामाजिक प्रतिबंधों से बंधी हुई है। ऐसी स्थिति में हम नहीं कह सकते है कि भविष्य में बिना हमारी आधी आबादी को मजबूत किए हमारा देश विकसित हो पायेगा।

(viii) महिला सशक्तिकरण की जरूरत इसलिए पड़ी, क्योंकि प्राचीन समय से भारत में लैंगिक असमानता थी और पुरुषप्रधान समाज था। महिलाओं को उनके अपने परिवार और समाज द्वारा कई कारणों से दबाया गया तथा उनके साथ कई प्रकार की हिंसा हुई और परिवार और समाज में भेदभाव भी किया गया, ऐसा केवल भारत में ही नहीं बल्कि दूसरे देशों में भी दिखाई पड़ता है।

(ix) भारतीय समाज में महिलाओं को सम्मान देने के लिए माँ, बहन, पुत्री, पत्नी के रूप में महिला देवियों को पूजने की परम्परा है, लेकिन आज केवल यह एक ढोंग मात्र रह गया है।

(x) पुरुष पारिवारिक सदस्यों द्वारा सामाजिक, राजनीतिक अधिकार (काम करने की आजादी, शिक्षा का अधिकार आदि को पूरी तरह प्रतिबंधित कर दिया गया।

(xi) पिछले कुछ वर्षों में महिलाओ के खिलाफ होने वाले लैगिंक असमानता और बुरी प्रथाओं को हटाने के लिए सरकार द्वारा कई सारे संवैधानिक और कानूनी अधिकार बनाए और लागू किए गए हैं, हालाँकि ऐसे बड़े विषय को सुलझाने के लिए महिलाओं सहित सभी के लगातार सहयोग की जरूरत है।

(xii) आधुनिक समाज महिलाओं के अधिकार को लेकर ज्यादा जागरुक है जिसका परिणाम हुआ कि कई सारे स्वयं–सेवी समूह और एन0जी0ओ0 आदि इस दिशा में कार्य कर रहे है।

(xiii) महिलाएँ ज्यादा खुले दिमाग की होती है और सभी आयामों में अपने अधिकारों को पाने के लिए सामाजिक बंधनों को तोड़ रही है, हालांकि हालाकि अपराध इसके साथ–साथ चल रहा है।

अध्ययन का उद्देश्य– प्रस्तुत शोध पत्र के उद्देश्य निम्न प्रकार से है–

(i) महिला सशक्तिकरण का अध्ययन करना।

(ii) भारतीय समाज में महिलाओ की वर्तमान स्थिति का अध्ययन करना।

(iii) महिला सशक्तिकरण के विविध आयामों का अध्ययन करना।

(iv) महिला सशक्तिकरण के लिए सुझाव प्रस्तुत करना।

परिकल्पना–

(i) महिला की स्थिति में धीरे–धीरे परिवर्तन आ रहा है।

(ii) वे अपने मानवाधिकारों के प्रति जागृत हुई है।

(iii) महिला सशक्तिकरण के लिए बनी संवैधानिक उपबंध, अधिनियम, योजना, नीतियां आयोग आदि के क्रियान्वयन के फलस्वरूप समाज में सकारात्मक परिवर्तन देखने को मिले है।

शोध प्रविधि– प्रस्तुत अध्ययन की प्रकृति विश्लेषणात्मक एवं वर्णनात्मक है। प्रस्तुत शोध पत्र में सम्पूर्ण रूप से द्वितीयक समंकों का प्रयोग किया गया है। द्वितीयक समंकों के लिए नेशनल क्राइम रिकार्ड ब्यूरो की रिपोर्ट्स, विभिन्न एन0जी0ओ0 की रिपोर्ट्स, यूनिसेफ, द्वारा प्रकाशित रिपोर्ट्स, मानव संसाधन विकास मंत्रालय की रिपोर्ट,विश्व आर्थिक मंच की रिपोर्ट्स, भारत सरकार द्वारा जारी आर्थिक सर्वेक्षण आदि के माध्यम से प्राप्त आँकड़ो, प्रसिद्ध पुस्तकों, पत्र–पत्रिकाओं, समाचार पत्रों एवं वेबसाइट आदि के माध्यम से भी प्राप्त की गई है।

साहित्य समीक्षा– सम्बन्धित साहित्य के सर्वेक्षण से तात्पर्य उस अध्ययन से है जो शोध समस्या के चयन के पहले अथवा बाद में उस समस्या पर पूर्व में किये गये शोध कार्यों, विचारों, सिद्धान्तों, कार्यविधियों, तकनीक शोध के दौरान होने वाली समस्याओं आदि के बारे में जानने के लिए किया जाता है। महिला सशक्तिकरण पर किये गये कुछ प्रमुख अध्ययन अग्रलिखित है–

- शुभ्रा परमार की नारीवादी सिद्धान्त और व्यवहार
- चव्हाण पंजाब, आनन्दराव की पुस्तक ''भारतीय राजनीति एवं महिलाये''।
- प्रेम नारायण शर्मा, झा संजीव कुमार, विनायक वाणी, विनायक सुषमा की पुस्तक ''महिला सशक्तिकरण एवं समग्र विकास।

- सुनील गोयल, संगीता गोयल की पुस्तक 'भारतीय समाज में नारी'।
- शाप सानप की पुस्तक ''महिला सशक्तिकरण ''।
- वी0एन0 सिंह, जनमेजय सिंह, की पुस्तक 'नारीवाद'।
- रेखा कस्तवार की स्त्री चिन्तन की चुनौतियाँ।
- डॉ0 अमिता सिंह का 'लिंग एवं समाज'।
- ममता मेहरोत्रा का महिला अधिकार।

अमेरिका की एक प्रसिद्ध शोध संस्था वर्ल्ड इकोनॉमिक फोरम के अनुसार महिला सशक्तिकरण की पहचान और परख, आर्थिक, शिक्षा, स्वास्थ्य और राजनीतिक क्षेत्रों में उनकी भूमिका से की जा सकती है। इन चार घटकों को यूनेस्कों ने सशक्तिकरण के चार स्तम्भ बतलाया है। प्रामाणिक तथ्यों के आधार पर यह अनुमान किया जा सकता है कि किस देश में महिला विषमता कितनी है और अन्य देशों की तुलना में उसका स्थान क्या है।

तालिका–1

विश्व महिला सशक्तिकरण में भारत का रैंक

क्षेत्र	2006	2021
समग्र रैंक	95	140
आर्थिक	110	120
शिक्षा	112	114
स्वास्थ्य	103	155
राजनीति	20	51
कुल देश	115	156

विश्व आर्थिक मंच (World Economic Forum's- WEF) द्वारा जारी वैश्विक लैंगिक अंतराल रिपोर्ट, 2021 में भारत 28 पायदन नीचे आ गया है, जबकि पहली रिपोर्ट 2006 के समय भारत की रैकिंग 95 थी, जबकि 2021 में भारत का प्रदर्शन दक्षिण एशियाई देशों में सबसे खराब रहा है, 156 देशों में से, 190 वां स्थान है। भारत के राजनीतिक सशक्तिकरण सूचकांक में 13.5 प्रतिशत की गिरावट आयी है। शिक्षा प्राप्ति सूचकांक में भारत को 114 वें स्थान पर रखा गया है। रिपोर्ट के अनुसार भारत में इस वर्ष आर्थिक भागीदारी में अंतर भी 3% बढा है। भारत में महिलाओं की अनुमानित आय पुरुषों की केवल 1/5 है, जो इस संकेतक पर देश को वैश्विक स्तर पर 10 पायदान नीचे रखता है। विषम लिंग अनुपात, तथा लड़कों की चाह में प्रसवपूर्व पक्षपातपूर्ण तरीके से लिंग चयन के कारण भारत स्वास्थ्य व उत्तरजीविता सूचकांक में 155 वें स्थान (बेहद खराब) पर रहा। अतः तालिका 1 से स्पष्ट होता है कि ग्लोबल जेण्डर इन्डेक्स के केवल एक क्षेत्र (राजनीति) को छोड़कर भारत अन्य देशों के बीच बेहद पिछड़ा है।

तालिका–2

भारत में लिंगानुपात

गणनापूर्व	सामान्य लिंगानुपात	बाल लिंगानुपात
1971	930	964
1981	934	962
1991	927	945
2001	933	933
2011	943	919

प्रजनन विशेषज्ञों के अनुसार एक आदर्श जनसंख्या में महिला पुरुष के बीच अनुपात 995 से 1005 के मध्य होना चाहिए। साथ ही सामान्य लिंगानुपात की अपेक्षा बाल लिंगानुपात की स्थिति बेहतर होनी चाहिए। तालिका 2 में दर्शायी गयी दरों का तुलनात्मक विश्लेषण स्पष्ट करता है कि देश में सामान्य की अपेक्षा बाल महिलाओ की स्थिति 1971–2001 के बीच थोड़ी अच्छी रही किन्तु इसके बाद के वर्षों में गिरावट आ गई।

विवाह और प्रजनन– विवाह और प्रजनन दोनों में गहरा सम्बन्ध है। कम आयु मे विवाह करने वाली महिलाओं की अपेक्षा अधिक आयु में विवाह करने वाली महिलाओं की स्थिति सुदृढ़ है, वह उनके सशक्तिकरण का परिचायक है।

तालिका–3

विवाह और प्रजनन

मद	2005–06	2015–16	अन्तराल
20–25 आयु समूह (18 वर्ष से कम आयु में विवाहित महिला)	47.4	26.8	20.6
25–49 आयु समूह (20 वर्ष के बाद विंवाहित महिला)	32.3	26.8	5.5
15–49 आयु समूह की महिलायें जो पारम्परिक परिवार नियोजन अपनाती है	56.3	53.5	2.9
आधुनिक नियोजन विधि अपनाती है	48.5	47.5	1.0
बंध्याकृत महिलाएं	37.3	36.00	1.3
परिवार नियोजन आवश्यक है	13.9	12.9	1.0

स्त्रोत NFHS-3 और NFHs-4

उपर्युक्त तालिका के आंकड़े महिला सशक्तिकरण की प्रखर स्थिति दर्शाती है।

मृत्यु दर और महिला सशक्तिकरण – पिछली 4 दशकों में मृत्युदर सम्बन्धी आंकड़े महिला सशक्तिकरण में वृद्धि के संकेत देते है। तालिका 4 इस सम्बन्ध में अवलोकनीय है।

तालिका–4

शिशु/बाल मृत्युदर और महिला सशक्तिकरण

सर्वेक्षण	शिशु मृत्यु दर	बाल मृत्यु दर
NFHS-1	79	109
NFHS-2	68	96
NFHS-3	57	74
NFHS-4	41	50

तालिका से स्पष्ट होता है कि एक वर्ष और 5 वर्ष से कम के बच्चों की मृत्यु दर में (प्रति 1000 जीवित जन्में बच्चों में समयोत्तर कमी आ रही है। यह महिला सशक्तिकरण का सकारात्मक पक्ष है।

स्वास्थ्य सेवाएं और सशक्तिकरण – राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन (NHM) के त्रिस्तरीय कार्यक्रम है– ASHA (Accredited Social Health Activist). ANM (Auxillary Nurse Midwife) और AWW (Aganwari Workers)। इनके अतिरिक्त राज्य स्तर पर अनेक स्वास्थ्य कार्यक्रम चलाये जा रहे है। इन सभी का मिलाजुला प्रभाव महिला सशक्तिकरण पर पड़ा है। इसे तालिका 5 व तालिका 6 में दिखाया गया है।

तालिका–5

संस्थागत प्रसव की लाभार्थी (प्रतिशत में)

सर्वे	ग्रामीण	शहरी	कुल
NFHS-3	29	68	39
NFHS-4	75	89	79

स्त्रोत NFHS (2005-06) और (2015-16

तालिका–6

पूर्ण टीकाकरण के लाभार्थी

(12–23 महीनों के शिशुओं का प्रतिशत)

सर्वे	ग्रामीण	शहरी	कुल
NFHS-3	39	58	44
NFHS-4	61	64	52

स्त्रोत NFHS (2005-06) और (2015-16)

स्पष्टतः दशक में महिला सशक्तिकरण में वृद्धि हुई है। शहरों की अपेक्षा ग्रामीण क्षेत्रों में गति थोड़ी कम है। **शिक्षा क्षेत्र में महिला सशक्तिकरण –**सामान्यतः शिक्षा के प्रति महिलाओं का रूझान बढ़ रहा है, जिसका प्रमुख कारण राष्ट्रीय शिक्षा मिशन 1988 और सर्व शिक्षा अभियान 2009 के अन्तर्गत राज्यों द्वारा

संचालित विभिन्न कार्यक्रम है। जिसका सम्मिलित प्रभाव महिला सशक्तिकरण पर पड़ा है। तालिक 7 में शिक्षा सम्बन्धी आंकड़े प्रस्तुत हैं।

तालिका–7

वर्ष	जेण्डर गैप	पुरुष	महिला
1971	23.99	45.96	21.97
1981	26.62	56.38	29.73
1991	24.84	64.13	39.29
2001	21.59	75.26	53.67
2011	16.68	82.14	35.46

स्त्रोत–भारत की जनगणना 2011

तालिका 7 से स्पष्ट होता है कि थोड़े जेण्डर गैप में गिराव–उछाल के बावजूद 1971 से 2011 तक औसतन शिक्षा दर में वृद्धि हो रही है। तालिका 11 की तुलना में तालिका 12 से करने पर शिक्षा में प्रगति की स्थिति और भी स्पष्ट है।

तालिका–8

शिक्षा के क्षेत्र में महिलाओं की प्रगति

मद	NFHS-3(%)	NFHS-4(%)
प्रारम्भिक औपचारिक शिक्षा प्राप्त महिला जनसंख्या (6 वर्ष से अधिक)	58.3	68.8
10 अथवा अधिक वर्षो तक औपचारिक शिक्षा प्राप्त (15–19 वर्ष)	22.3	35.7
15–49 आयु वाली शिक्षित महिलाएं	55.1	68.4
15–49 आयु वाले शिक्षित पुरुष	78.1	85.6

स्त्रोत–N.F.H.S. प्रतिवेदन 2006–2016

उपर्युक्त तालिका में सभी मदों पर प्रतिशतता में वृद्धि महिला सशक्तिकरण की दशा और दिशा को इंगित करती है।

आर्थिक क्षेत्रों में महिला सशक्तिकरण

तालिका–9

महिला कार्य सहभागिता दर (प्रतिशत में)

वर्ष	पुरूष	महिला	ग्रामीण महिला	शहरी महिला
1981	52.62	19.67	23.18	8.32
1991	51.61	22.27	26.67	9.17
2001	51.68	25.63	30.98	11.15
2011	53.30	25.50	30.00	15.40

स्त्रोत–Statistical Profile of India on Labour force-2012-13

उपर्युक्त प्रतिशत भारतीय जनगणना के आंकड़ो पर आधारित है। यहाँ दो बातों पर ध्यान देना आवश्यक है जो सशक्तिकरण की दिशा बताने में कारगार हो–

- 1981 से अब तक पुरुष–महिला दरों में आंशिक वृद्धि हो रही है किन्तु जेण्डर गैप 50% है।
- ग्रामीण महिलाओं की श्रम शक्ति शहरी महिलाओं से दो गुनी है।

निसन्देह आर्थिकी मामलों में शहरी महिलाएं पिछड़ी दिखती है तथापि उनकी शिक्षा दर ग्रामीण महिला से अधिक है।

राजनीतिक क्षेत्र में सशक्तिकरण –

महिला स्थिति का यह पक्ष अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा प्रबल रहा है। राजनति में सहभागिता मापने में निम्नलिखित घटक सम्मिलित किए जाते हैं।

- केन्द्र व राज्य स्तर को चुनावो में वोट देना।
- केन्द्र–राज्य स्तरों की विधायकी में सहभागिता।
- स्थानीय निकायों में सहभागिता।

तालिका–10

लोकसभा चुनाव में वोटिंग पैटर्न

वर्ष	महिला (%)	पुरुष (%)
1962	46.63	58.60
1984	63.39	68.18
2014	67.09	65.63

तालिका 10 से यह स्पष्ट है कि आरम्भिक वर्षों में महिलाओं का प्रतिशत 46.63 से 1984 में 63.31 हो गया अर्थात् लगभग 16.68 प्रतिशत उछाल आया। पुरुषों की तुलना में जेण्डर गैप, 1962 में 16.7 प्रतिशत था जबकि 2009 में 4.4 प्रतिशत। नवीनतम आंकड़े (2014) बताते हैं कि 29 राज्यों में से 16 राज्यों की वोट देने वाली महिलाओं की संख्या पुरुषों से अधिक थी। यह बड़ी उपलब्धि है। वर्ल्ड इकोनॉमिक फोरम के प्रतिवेदन में स्पष्ट किया गया है कि वर्ष 2012 में राष्ट्रीय सदनों में 10.9 प्रतिशत महिला उम्मीदवार चयनित थी। यह अनेक देशों में भारत की उच्चतर स्थिति को प्रदर्शित करता है।

निष्कर्ष– प्रस्तुत आलेख में महिला सशक्तिकरण के प्रदीप्त पक्षों के साथ विषमता को भी उजागर किया गया है। आंकड़ों के विश्लेषण से कतिपय सामान्यीकरण निम्न कथनों के रूप में व्यक्त किया जा सकता है–

(i) प्रजनन एवं इससे जुड़े विभिन्न मृत्यु दरों में कमी, महिला सशक्तिकरण की दिशा चित्रित करता है।

(ii) प्रजनन स्वास्थ्य के क्षेत्र में महिलाएँ अधिक जागरुक प्रतीत होती है।

(ii) शिक्षा के प्रति महिलाओं का रुझान बढ़ रहा है। आर्थिकी और शिक्षा सहसंबधित नहीं हैं।

(iii) शिक्षा के प्रति महिलाओं का रुझान बढ़ रहा है। आर्थिकी और शिक्षा सहसंबंधित नहीं है।

(iv) राजनीतिक क्षेत्र में महिला सहभागिता प्रबल हो रही है।

(v) आर्थिकी क्षेत्र में शहरी महिलाएं ग्रामीण महिलाओं से पिछड़ी है।

(vi) देश का लिंगानुपात असंतुलित है। उपर्युक्त वर्णित 1 से 4 मदों में वृद्धि के बावजूद लिंगानुपात में विषमता महिला शक्ति को निर्बल बना रही है।

प्रस्तुत आंकड़ो का अध्ययन करने से यह निष्कर्ष निकलता है कि क्षमता के सम्बन्ध में महिलाओं में उल्लेखनीय प्रगति हुई है जैसे परिवार से सम्बन्धित महत्त्वपूर्ण निर्णय आदि लेने में महिला सशक्त हुई है पर वही महिलाओं के खिलाफ घटित होने वाले अपराधों में बढ़ोत्तरी देखी गई है। महिला की शैक्षिक स्तर में सकारात्मक सुधार हुआ है तथापि यह सुधार देश में हो रहे विकास के अनुरूप नहीं है। आर्थिक सुदृढ़ीकरण से सम्बन्धित आंकड़ों के सम्बन्ध में कोई सकारात्मक परिणाम देखने को नहीं मिले। आर्थिक क्षेत्र में आज भी वह दूसरों पर ही आश्रित है, हालांकि महिला के आर्थिक सशक्तिकरण को लेकर सरकार द्वारा निरंतर प्रयास जारी है। सरकार ने भी महिला को आर्थिक क्षेत्र में बढ़ाने के लिए उसके निजी एवं सार्वजनिक दोनों क्षेत्रों में नियोजित महिलाओ के लिए मातृत्व अवकाश को भी बढ़ाकर 26 सप्ताह अनिवार्य कर दिया। इसके साथ ही सरकार द्वारा आर्थिक रूप से सशक्त करने के लिए विभिन्न योजनाएं भी क्रियान्वित की गयी है, के प्रति समाज के दृष्टिकोण में भारी परिवर्तन आया है। 21वी सदी में महिलाओं साथ ही विभिन्न कानून भी बनाये गये हैं। आज 21वीं सदी में महिलाओं ने स्वयं को मुख्यधारा से जोड़ लिया है। पिछले कुछ वर्षों में भारत सरकार ने महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए महत्त्वपूर्ण योजनाओं का निर्माण किया एवं कानूनों का निर्माण किया, जिससे महिलाओं के अधिकारों में, उसकी शैक्षिक स्थिति एवं रोजगार से सम्बन्धित क्षेत्रों में काफी परिवर्तन आया है। एक समय था जब पुलिस, सेना, पायलट, कमाण्डो आदि पोस्ट जो सिर्फ पुरुषो के लिए ही था, उस पर भी महिलाओं ने अपनी अभूतपूर्व शक्ति का प्रदर्शन किया है। अब महिलाओं की स्थिति में सकारात्मक रूप से परिवर्तन आ रहा है। आज वे भेदभाव, अत्याचार और शोषण के विरूद्ध आवाज उठा रहीं है, वह स्त्री–शक्ति की मिसाल बन रही है।

लेकिन अभी महिलाओं को सशक्त करने में समाज को एक लम्बा सफर तय करना होगा, एक तरफ जहाँ महिलाएं प्रत्येक क्षेत्र में अपनी उपस्थिति दर्ज करवा रही हैं, वहीं दूसरी तरफ उसे विभिन्न कुरीतियों, रूढ़ियों से जकड़ दिया जा रहा है। सम्पूर्ण प्रावधानों एवं प्रयत्नों के बावजूद भी उसे दोयम दर्जे का सामना करना पड़ रहा है। आज 21वीं सदी में भी न केवल विकासशील राष्ट्रों में अपितु विकसित देशों में भी लिंग आधारित भेदभाव देखने को मिल रहा है। आज भी समाज में अधिकतर लड़कियों के जन्म की तुलना में लड़कों के जन्म को प्राथमिकता दी जा रही है।

इस बात को नहीं नकारा जा सकता है कि समाज में महिला सशक्तिकरण को लेकर सकारात्मक परिवर्तन हुये, लेकिन अभी भी पूर्ण रूप से इस दिशा में जागरुकता लाने की आवश्यकता है। महिला सशक्तिकरण के लिए आवश्यक है कि न सिर्फ सरकार को अपितु समाज, समुदाय सभी को जागरुक होना होगा एवं समाज में बढ़ रहे अधिक पुत्र मोह पर भी विचार करना होगा। अब जिम्मेदारी सरकार द्वारा लाये गये कानून, योजना, को ईमानदारी से वास्तविक धरातल पर लाने के लिए समाज एवं देश निवास करने वाले नागरिको की है। वर्तमान परिदृश्य में जिस प्रकार से भारत प्रत्येक क्षेत्र में आगे बढ़ने के प्रति प्रतिबद्ध है, उसी तरह लिंग सम्बन्धी सकारात्मक परिणामों को प्राप्त करने के लिए भी प्रतिबद्धता दिखानी होगी।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची–

- वर्ल्ड इकोनॉमिक फोरम, मानव विकास सूचकांक तथा राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वे (NFHS)
- भारत की जनगणना (Census of India)
- राधाकृष्णन, सर्वपल्ली, ग्रेट वीमन ऑफ इण्डिया, सं0 स्वामी माधनन्दन, अद्वैत आश्रम, दिल्ली, 2008, पृ0 10
- सिंह, डॉ0 वी0एन, आधुनिकता एवं नारी सशक्तिकरण, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, नई दिल्ली, अंसारी रोड, दरियागंज, 2010, पृ0 19
- मिश्रा, सरस्वती, भारतीय स्त्रियों की प्रस्थिति, शारदा पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, पृ0 51
- जोशी, गोपा, भारत में स्त्री असमानता, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, 2006, पृ0 46
- परमार, शुभ्रा, नारीवादी सिद्धान्त और व्यवहार, ओरियंट ब्लैकस्वॉन प्राइवेट लिमिटेड तेलंगाना, भारत, 2007, पृ0 102
- सिंह, डॉ0 अमिता, लिंग एवं समाज, विवेक प्रकाशन, जवाहर नगर, दिल्ली–7, 2015, पृ0 95
- श्रीवास्तव, सुधारानी, भारत में महिलाओं की वैधानिक स्थिति, कामनवेल्थ पब्लिशर्स,अन्सारी रोडद्व दरियागंज, नई दिल्ली, तृतीय संस्करण, 2007, पृ0 112
- चौधरी, एम0पी0, महिलाएं सामाजिक अधिकार, ठाकुर एण्ड संस, कृष्ण कुंज एक्सटेंशन पार्ट, लक्ष्मीनगर, दरियागंज, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2006, पृ0 80
- श्रीवास्तव, सुधारानी, श्रीवास्तव, आशा, महिला शोषण और मानवाधिकार, अर्जुन पब्लिशिंग हाउस, दरियागंज, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2004, पृ0 95
- व्होरा, आशारानी, भारतीय नारी अस्मिता और अधिकार, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दरियागंज, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1986, पृ0 36
- गुप्ता, कमलेश कुमार, भारतीय महिला शोषण, उत्पीड़न एवं अधिकार, बुक एनक्लेव, जैन भवन, शान्तिनगर, जयपुर, प्रथम संस्करण, 2005, पृ0 116
- व्होरा, आशा रानी, और कल आज और कल, कल्याणी शिक्षा परिषद, जेटवाड़ा, दरियागंज, नई दिल्ली, 2011, पृ0 143
- नसरीन, तसलीमा, औरत के हक में, अनुवाद, मुनमुन सरकार, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, 1994, पृ0 94
- नारायणी, प्रकाश नारायण, ज्योतिगौतम, लिंग एवं समाज, रिसर्च पब्लिकेशन्स, जयपुर, नई दिल्ली, पृ0 15
- सिह, वी0एन, सिंह जनमेजय, नारीवाद, रावत पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, पुनमुदित, 2013, पृ0 25
- खुराना एवं चौहान, भारतीय इतिहास में महिलाएँ, लक्ष्मी नारायण अगवाल, आगरा, प्रथम संस्करण, 2012, पृ0 73

- शर्मा, जी0एल0, सामाजिक मुद्दे, रावत पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2015, पृ0 216
- आहूजा, राम, साामजिक समस्याएँ, रावत पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2010, पृ0 298
- मेहरोत्रा, ममता, महिला अधिकार, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, द्वितीय संस्करण, 2017 , पृ0 46
- यादव, श्रीकान्त, स्त्री अलक्षित–बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध का स्त्री– विमर्श लोकभारती पेपरबैक्स, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 2018, पृ0 25
- कस्तवार, रेखा, स्त्री चिन्तन की चुनौतियाँ, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2013, पृ0 63
- भारतीय समाज एवं सामाजिक न्याय, दृष्टि पब्लिकेशन्स, पृ0 125
- राधा कमल मुकर्जी, चिन्तन परम्परा, पत्रिका, समाज विज्ञान, विकास संस्थान, जुलाई–दिसम्बर, 2019

JSECR, Vol. 7, No. 15, July.-Dec., 2021 ISSN : 2394-2878
Impact Factor : 6.125(IIFS) Peer Reviewed Journal

GOOD GOVERNANCE : INDIAN PERSPECTIVE

MOHAMMAD AKIF TAUFIQUE
Assistant Professor, Political Science
Government Girls Degree College Aurai Bhadohi UP.

BINOD KUMAR
Assistant Professor, Economics
Government Girls Degree College Aurai Bhadohi UP.

ABSTRACT

The concept of good governance has multiple meanings, but it most generally refers to a standard or model for how states or other political entities should govern and be governed. This usually includes a long list of normative principles to which these entities should adhere, such as transparency, accountability, inclusiveness, effectiveness, and impartiality. Quite commonly, good governance is defined in terms of its antonyms— that is, by referring to phenomena that indicate its absence, such as corruption, nepotism, favoritism, particularism, or patrimonialism. Within policy circles of the developmental aid community, the concept has been used as an agenda for reform of developing countries, such as civil service reforms, securing property rights, or installing judicial independence. Within the academic community, where close synonyms such as institutional quality or quality of government have been developed, the concept has been systematically linked to several highly desirable outcomes, most notably economic growth and long-term development. Good governance refers not only to the institutions of government, but also to all the players involved in the process of governance. A fundamental principle is that those who govern are accountable to those who will be directly or indirectly affected by their decisions or actions.Transparency and rule of law are prerequisites for ensuring accountability. Moral or ethical behavior is essential for sustainability of the dynamic relationships formed during the conduct of the governance. Incorruptibility requires a clean conscience and keeping the public good above the private. These factors, including various impediments to good governance, are equally pertinent in the resource-starved developing world, where corruption further impoverishes the state, affecting the poorest of the poor.

KEYWORDS : Consensus, Corruption, Political Pathologies, Corruption, Political Governance, Legitimacy, Pluralism, Rule of Law, Transparency.

The concept of governance is as old as human civilization. In their 2002 article, "Comparing Governance across Countries and Over Time," Goran Hoyden and Julius Court note that there are those who view governance, on the one hand, "as concerned with the rules of conducting public affairs, and on the other, those who see it as steering or controlling public affairs". In essence, governance means the process of decision

making and the procedure by which decisions are carried out, or not carried out, by those who govern. It is distinguished from government, which refers to an institution consisting of a set of instruments through which people of a state govern themselves by means of laws, rules, and regulations enforced by the state apparatus. Good governance is a subset of governance, and its essential ingredients depend on such fundamental values as accountability, transparency, justice, fairness, equity, and ethics as practiced in a liberal democratic polity. Good governance is also part of a government's goal of sustaining a good quality of life for its public. Ultimately, governance links an administrative system to a collaborative arrangement with interest groups, citizens, industry, legislators, and a judiciary, creating legitimacy of the public domain while letting each group share its perspective on governance with the rest.

Good governance has become a catchphrase used widely by various international agencies such as the United Nations, the World Bank, and the International Monetary Fund (IMF). It means "governing well" by establishing a system of clean governance to achieve the anticipated goals and objectives of the public and the government.

The concept was first launched by the World Bank in the late 1980s and early 1990s in a series of reports that sought to develop a new strategy for aid conditionality. Previously, the Bank had refrained from taking political criteria into account in its donor policy. By demanding that recipient countries adhere to the agenda of "good governance reforms," this stance was changed. By the late 1990s, the concept started to surface on the research agenda of several academic fields in the social sciences, most notably in economics and political science. To a considerable extent, this development was propelled by the appearance of empirical measures, or worldwide governance indicators, made publicly available by the World Bank Institute.

Good Governance is based on at least ten values :

(1) Democratic pluralism, which is essential to maintain cultural sensitivity in a pluralistic society to ensure empathy and tolerance of diversity, fundamental freedom and equality for all, and universal participation in the governing process.

(2) Legitimacy in the eyes of the public under the law of the land, that is, through constitutional instruments such as free and fair elections.

(3) Consensus among competing interests and equity in approach.

(4) Public participation in decision making.

(5) Rule of law to ensure fairness and nonpartisanship.

(6) Responsiveness of the governing systems toward the needs of the various stakeholders.

(7) Efficient and effective accountability of the institutions responsible for the governance, so that power is not misused and outcomes are delivered as anticipated or planned.

(8)Transparency in action to build confidence in the state or other institutions.

(9) Moral governance, which refers to public service ethics and moral accountability in the process of governance.

(10) A strategic vision for sustainable long-term human development.

To apprehend the scope of meanings attached to the concept, a series of distinctions is needed.

First, good governance may be defined in terms of what it is (as a good in itself) or in terms of what it is good for (e.g., good for economic development). The former may be called an internal definition and the latter an external (or functionalist) definition of good governance. In the internal case, some properties of the governance system of a country must be singled out in advance, together with a notion of why these properties make the system better or of a higher quality. This could, for example, be the idea that good governance is to be equated with the rule of law. Countries abiding by this principle are then considered to have good governance, regardless of whether the rule of law leads to other desirable consequences. In the external case, empirical scrutiny is required to determine what properties of the system are considered to be good, namely, those that are found to exert an influence on some preferable, external outcome. In this case too, rule of law might be considered to be part of good governance but only to the extent that rule of law can be shown to influence, for example, economic growth or other desirable phenomena.

Second, good governance may be defined in terms of procedures or policy content. Procedural definitions refer to regulatory principles, codes of conduct, norms, or other value-laden criteria that constrain the forms in which politics may be conducted. Definitions demanding certain contents, by contrast, require certain policies to be enacted by the political system, such as market deregulation or state privatization.

Third, there is a fundamental difference between procedural definitions referring to the input and the output sides of the political system. The former, where access to public authority is regulated, is the realm of decision-making bodies, such as parliaments, cabinets, juntas, party executive committees, or royal councils. The output side concerns, instead, the exercise of public authority: how reforms are implemented, rules enforced, court cases decided, and so on. This is the realm of the public administration, the courts, and the law enforcement bodies of the state apparatus. Different regulatory principles guide our general thinking as to what makes different political systems better than others on these two sides of the political system. On the input side, democracy and the principle of political equality (one person, one vote; civil and political rights, etc.) is the most well-established norm. On the output side, key guiding principles are the rule of law, administrative effectiveness (or efficiency), and impartial policy implementation. The most comprehensive procedural definitions of good governance encompass all these normative views and facets of the political system, whereas other more specific notions concentrate on the output side, or even on certain aspects of the output side (such as administrative corruption).

There is a general approach to understanding the prevalence of corruption or other forms of illicit behavior on behalf of government officials.Principal–agent model view, a collective body of actors (e.g., the top political leadership in a country) are the principals who delegate the performance of some government task to another collective body of actors (e.g., the bureaucracy), the agents. As in any situation where authority is being delegated, the problem from the perspective of the principal is that the agents may acquire specific information about the task at hand that they do not disclose to the principal, or that they may have other private motivations affecting their behavior than the goals of performing the delegated task. In the case

of corruption, administrators delegated the task of collecting a tax, for example, may collude with firms and collect bribes rather than taxes. The principals will try to monitor the behavior of their agents by exacting legal remedies for those being caught collecting bribes. Seen from this principal–agent perspective, the level of corruption—or, more generally, the extent to which good governance is being upheld—in a country is primarily a function of the individual incentives and risk perceptions of the agents.

As for as Good Governance in the Indian context is concerned, we should know the meaning of the word 'good'. This word is derived from the word 'God', which means an ability to distinguish between right and wrong, just and unjust, fair and foul, right and wrong, moral and immoral. A judgment is good if it is just, fair, right and moral. In the context of good governance, it is so if it is taken in the public interest and serves the public interest. What is public interest. It is the interest of the largest number of people, even if it is not all the people. Bentham described it as the greatest good of the greatest number while in India we believe in 'Sarva jana heath, sarva jana sukaiah', which implies welfare of all and happiness of all. Thus good in the context of good governance means those decisions, policies and actions which aim at the welfare of all. Because of a generally implied orientation of the people in favour of a democracy, defined as a government of the people, by the people and for the people, the 'good', or 'welfare' or 'interest' of people. The statement of Aristotle that 'the state came into existence for life but continues to exist for good life' expresses the Indian concept of good governance s assumed to be the necessary and sufficient condition of governance and its legitimacy.

In ancient Indian thought, Kautilya, the great scholar, dwelt upon some important parameters of good governance in his famous treatise Arthashtra that can be summed up as follows, The king should be the servant of the state. He must merge his individuality with his duties. He should consider his welfare and happiness in the welfare and happiness of his subjects. The king should be just and honest. He must have the knowledge to apply dand niti to control the worst impulses of men but dand should be applied with justice. Maintenance of law and order is another important indicator of good governance. Kautilya says that the chief duty of a king is to maintain law and order, that is, to protect the life, liberty and property of citizens.According to Kautilya, the salaries and allowances of all public servants, including the king, should be fixed and reasonable. The king should follow a disciplined life and an elaborate code of conduct. To ensure people's welfare, which is the objective of good governance, there must be properly guided public servants or bureaucracy. There should be a clear code of conduct to control bureaucracy. So far as Kautilya's indicators of good governance are concerned, these may be summed up as limited government, rule of law, properly guided bureaucracy, disciplined rulers, having fixed salaries and allowances, maintenance of law and order, and curbing corruption in administration and uniformity in administration. All these are still relevant as they used to be in ancient India.

The tests of good governance lie in the goals and objectives of a government, in its policies and programmes, in the manner of their execution, in the results achieved and, above all, in the general perception of the people about the quality of functioning of its various agencies, their attitudes and behaviour towards the public, their sincerity, honesty, and commitments towards public duties. It is also important to see that there is no undue concentration of power.

The Preamble to the constitution of India broadly reflects the goals and ideas, the Indian state should pursue for the well being of its people. The most important goal is 'to secure to all its citizen justice—social, economic and political. This, in fact, summarises the very purpose of any good state.

The several aspects of this goal and the way to achieve them have been more explicitly spelt out in Part IV of the constitution containing the 'Directive Principles of State Policy' (Articles 37 to 51).

Article 37 says that these directive principles, though not enforceable by any court of law, 'are nevertheless fundamental in the governance of the country and it shall be the duty of the State to apply these Principles in making laws.

Article 12 defines 'the State' to include 'the Government and Parliament of India and the government and the Legislature of each of the states and all local or other authorities within the territory of India or under the control of the Government of India'. Fundamental Rights.

While pursuing the socio-economic objectives as mentioned in the previous section, the many valuable fundamental rights guaranteed by the constitution to all citizens also need to be protected. These rights include freedom of speech, expression, association, profession, movement, belief and faith, equality before law, non-discrimination on grounds only of religion, race, caste, sex, or place of birth, and equality of opportunity in matter of public employment. The government has also to respect the dignity of the individual and promote national unity. Thus in assessing the quality of governance, the means employed and the results achieved in fulfilling the objectives have to be the real criteria. Directive Principles of State Policy All the agencies of the State as mentioned before in this chapter have to play their respective roles in implementing the various directive principles of State policy. Some of these directives require the State, by way of good governance, to ensure :

(1) A social order for the promotion of welfare of all the people [Article 38(1)]

(2) Minimization of inequalities in income and elimination of inequalities in status [Article 38(2)]

(3) The right to adequate means of livelihood to all men and women [Article 39(1)]

(4) The operation of an economic system to prevent concentration of wealth in a few hands [Article 39(c)]

(5) Equal pay for equal work for men and women [Article 39(d)]

(6) Protection against abuse of health and strength of workers and the tender age of children [Article 39(f)]
(7) The right to work, to education and to public assistance, in cases of unemployment, old age, sickness and disabilities [Article 41]
(8) That village panchayats be organized as units of self-government [Article 40]
(9) Just and humane conditions of work and maternity relief [Article-42]
(10) Living wages for workers to ensure decent standard of life and adequate leisure [Article 43]
(11) Free and Compulsory education for all children below 14 years of age [Article 45]
(12) Higher level of nutrition and public health [Article 4].

Some Practical efforts for Good Governance in india Since independence, there have been significant efforts to bring about structural and behavioural changes in the administrative setup to fulfill the aspirations of the people and to bring about good governance are as follows

(a) A. D. Gorawala, in his report of 1951, pointed out that a clean, efficient and impartial administration was the first condition to the success of a democratic government. So there should be re- organization of the administrative machinery to ensure speedy, effective, and responsive administration.

(b) In his report for the training of lAS officers, T. T. Krishnanmachari made suggestions , for improvement in the district level administration.

(c) In 1983, the Economic Reforms Commission under L. K. Jha advocated the need for accountability so that greater importance is given to performance than and not to mere adherence to rules and procedures.

(d) In 1954, Ashok Chanda suggested ways to remove delay in the execution of projects.

(e) In the conference of the Chief Secretaries, held on 20 November 1996, the need for urgent efforts in this direction was realised. It was realised there was a crisis in Indian administration, and hence the need for urgent efforts in this direction. In the agenda note entitled 'For an Effective and Responsive Administration in India', it was admitted that the public image of the bureaucracy was one of the inaccessibility, indifference, procedure, procedure orientation, poor quality and sluggishness, corruption proneness and no accountability for results'. The need of the hour was, therefore, 'to ensure to the people of India an efficient, open, responsive, clean, accountable and dynamically adjusting administration at all levels. Very significantly, the conference recognized that 'governance has to be extended beyond conventional bureaucracies to involve active citizens and consumer groups at all levels, to empower and inform the public and disadvantaged groups, and to ensure service delivery and programme execution through autonomous elected local bodies.

(f) Right to Information Act, 2005, and National Rural Employment Guarantee Act, 2005, are efforts in this direction.

(g) Ths second Administrative Reforms Commission has been constituted for overall systematic reforms in the system.

Among major impediments to good governance, corruption and corrupt behavior among public officials constitute a most insidious challenge; however, institutional or bureaucratic hurdles and inadequate compliance mechanisms are equally responsible for bad governance.
The biggest challenge to good governance faced by many countries is inefficiency in the implementation of various policy programs and effective delivery of service. While a country may have adequate legal mandates to solve problems, the gaps in policy implementation mechanisms indicate that enforcement of policies is rather weak and at times nonexistent. In addition, there always exists jurisdictional fighting across levels of government and among various ministries desperate to safeguard their jurisdictions, so policies and programs enthusiastically initiated by one ministry or department may be considered unnecessary or problematic by others and, thus, are slow to be embraced. Many poor nations have crafted various laws concerning social welfare, environmental protection, and economic development, but they are rarely enforced because of insufficient financial, technical, and administrative resources. Powerful interest groups are often able to influence the regulatory system or bypass compliance measures that are in place. Finally, for government regulators, the cost of enforcement in time and resources is higher than the cost of nonenforcement. Government officials thus suffer from a negative public image and lack of public credibility, both of which contribute to a level of inertia that can inhibit good governance.
The study of good governance or quality of government is a fairly new and rapidly growing field of research. The future of this field will in large part hinge on how well the literature resolves a number of tensions inherent in the concept itself. These include, above all, the tensions between narrow (e.g., corruption) and broader (e.g., impartial government institutions) concepts of good governance, between functionalist and internal understandings, between definitions referring to policy contents and those referring to procedures, and between definitions stressing the input and those stressing the output side of the political system.

References :

(1) Acemoglu, D., Johnson, S., & Robinson, J. A. (2005). Institutions as the fundamental cause of long-run growth.
(2) P. Aghion & S. Durlauf (Eds.), Handbook of economic growth (385–472). Amsterdam: North-Holland.
(3) Adserà, A., Boix, C., & Payne, M. (2003). Are you being served? Political accountability and qualityof government. Journal of Law, Economics, & Organization, 19(2), 445–490.
(4) Kaufman, D., Kray, A., & Mastruzzi, M. (2008). Governance matters VII: Aggregate and individual governance indicators, 1996–2007 (World Bank Policy Research Working Paper No. 4654). Washington, DC: World Bank.
(5) Nanda, V. P. (2006). The "good governance" concept revisited. Annals of the American Academy of Political and Social Science, 603(1), 269–283.
(6) Rothstein, B., & Teorell, J. (2008). What is quality of government?A theory of impartial government institutions. Governance, 21(2), 165–190.

(7) Caiden, G. E."Corruption and Governance." In Where Corruption Lives, edited by G. E. Caiden,
(8) O. P. Dwivedi, and J. Jabbra, 15–37. West Hartford, Conn.: Kumarian Press, 2001.
(9) Dwivedi, O. P. "On Common Good and Good Governance: An Alternative Approach." In Better Governance and Public Policy, edited by D. Olowu and S. Sako, 35–51.
(10) D. S. Mishra."Good Governance:A Model for India." In Handbook ofGlobalization, Governance, and Public Administration, edited by Ali Farazmand and Jack Pinkowski, 701–741. Boca Raton, Fla.: Taylor and Francis.
(11) Frederickson,H.G.The Spirit of Public Administration. San Francisco: JosseyBass, 1997.
(12) Hoyden, G., and J. Court. "Comparing Governance Across Countries and Over Time: Conceptual Challenges."InBetter Governance and Public Policy, edited by D.Olowu and S. Sako, 13–33.
(13) Bloomfield, Conn.: Kumarian Press, 2002.Organisation for Economic Co-operation and Development. The Wellbeing of Nations: The Role of Human and Social Capital. Paris: OECD Development Committee, 2001.
(14) Simon, Y. R. Philosophy of Democratic Government.Notre Dame, Ind.: University of Notre Dame Press, 1993.

JSECR, Vol. 7, No. 15, July.-Dec., 2021 **ISSN : 2394-2878**
Impact Factor : 6.125(IIFS) Peer Reviewed Journal

परिवार के संरचना एवं प्रकार्य में परिवर्तनः
राँची नगर के विशेष संदर्भ में एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

चित्रा कुमारी
शोध छात्रा, स्नातकोत्तर समाजशास्त्र विभाग
राँची विश्वविद्यालय, राँची

सारांश

सामाजिक समूहो तथा संस्थाओं में परिवार का महत्त्व सबसे अधिक है। यह अनेक प्रकार से समाज के संपूर्ण जीवन को प्रभावित करता है। परिवार किसी ना किसी रूप में मानव समाज में सदा विद्यमान रहा है। परिवार समाज का एक महत्वपूर्ण प्राथमिक समूह है यह वैवाहिक संबंधों एवं प्रजनन पर आधारित होता है। ऐसा कोई समाज नहीं है जिनमें परिवार की सत्ता ना हो मनुष्य अपने जीवन का प्रारंभ परिवार में करता है। और उसी से अपने गुणों और विशेषताओं को विकसित करता है। जो उसमें अन्तःनिहित रूप से विद्यमान रहती है। परिवार उन परिस्थितियों को प्रदान करता है। जिनके द्वारा बच्चों का पालन पोषण होता है। वह अपनी जन्मजात शक्तियों का विकास करता है और फिर अधिक व्यापक समाज का अंग होने के योग्य बनता है। परिवार एक स्थार्यी समूह है जिसके साथ मनुष्य का जन्म से मृत्युपर्यन्त किसी ना किसी रूप से संबंध कायम रहता है।

मुख्य बिंदुः परिवार, संरचना, प्रकार्य, परिवर्तन, समाज

परिवार मानव समाज की पूर्णतः मौलिक एवं सार्वभौमिक इकाई है। हम में से प्रत्येक किसी ना किसी परिवार का सदस्य है। परिवार में निम्नलिखित विशेषता होती है।

सार्वभौमिकता– परिवार एक ऐसा संगठन है। जो सर्वकाल में पाया गया है। आज भी समाज चाहे सभ्य हो चाहे आदिम परिवार किसी ना किसी रूप में अवश्य ही पाया जाता है।

सामाजिक संरचना में केंद्रीय स्थिति– समाज की संरचना परिवार पर ही निर्भर है। इसका कारण यह है कि परिवार ही नए सदस्यों के जन्म तथा उन्हें समाज के अनुसार सामाजिक बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। मानव किसी सीमा तक समाज के ढंग, मान्यताओ या कार्यप्रणाली को अपनायेगा, ये सभी बातें परिवार पर ही निर्भर करती है।

भावनात्मक आधार– परिवार के सभी सदस्य भावनाओं में बंधे हुए हैं। ये संबंध भाई बहन पति–पत्नी पिता–पुत्र मां–पुत्री या किसी भी प्रकार के हो सकते है। सभी सदस्यों के बीच पारिवारिक सुख समृद्धि तथा शक्ति का लक्ष्य रहता है।

रचनात्मक प्रभाव– परिवार के द्वारा ही मानव के चरित्र, व्यक्तित्व, समाजिक व्यवहार के ढंग आदि का निर्माण होता है। परिवार का लक्ष्य सभी सदस्यों को समान लाभ पहुंचाना है सदस्यों का उत्तरदायित्व परिवार में प्रत्येक व्यक्ति की स्थिति तथा भूमिका निश्चित होती है। परिवार के सभी सदस्य अपनी जिम्मेदारी समझते हैं और आवश्यकता पड़ने पर बड़े से बड़े त्याग करने से नहीं हिचकते हैं।

सीमित आकार– परिवार का आकार छोटा होता है। कोई भी व्यक्ति अपनी इच्छा अनुसार किसी भी परिवार का सदस्य नहीं बन सकता है। इसी कारण परिवार का आकार छोटा होता है।

समाज नियमन– व्यक्ति साद्यारणताः परिवार की प्रथाओ, रूढ़ियों, मूल्यो, संस्कारों आदि का उल्लंघन नहीं करता। परिवार अपने सदस्यों को समाज के अनुरूप बनाता है। वह उन्हें इस बात के लिए बाध्य करता है कि वे समाज के नियमों को मांने। मनुष्य को व्यवहार, शिक्षा, धर्म, कर्तव्य–बोध आदि अनेक सामाजिक तत्वों का ज्ञान परिवार से ही होता है।

स्थायी और अस्थायी प्रकृति– परिवार समिति भी है और संस्था भी। सदस्यों के आधार पर परिवार एक समिति है और अस्थायी है नियमों तथा कार्यप्रणालियों के रूप में परिवार एक स्थायी संस्था है।[2] विवाह के रूपों से परिवार के रूपों का घनिष्ठ संबंध है। मानव समाज की प्रारंभिक अवस्था में विवाह प्रथा नहीं थी और पूर्ण कामाचार प्रचलित था। इसके बाद सामाजिक विकासक्रम में समूह विवाह अर्थात कई पुरुषों और कई स्त्रियों का सामूहिक रूप से विवाह संपन्न हुआ। उसके बाद बहुपतित्व, बहु पत्नीत्व और एकपत्नीत्व अपने या एक पतित्व की अवस्था आई। वस्तुतः बहुविवाह और एक पतित्व की प्रथा और असभ्य और सभ्य सभी समाजों में पाई जाती हैं। लेकिन यह मत साक्ष्यसंवत प्रतीत नहीं होता। मानव शिशु के पालन पोषण के लिए लंबी अवधि अपेक्षित है और पहले बच्चे की बाल्यावस्था में ही शादी करा दी जाती थी। गर्भावस्था और प्रसूतिकाल में माता की देखरेख आवश्यक है। फिर पशुओं की भांति मनुष्य में रति की कोई विशेष रितु नहीं है। अतः संभवत मानव समाज के प्रारंभ में या तो पूरा समुदाय या फिर पति–पत्नी तथा बच्चे का समूह ही परिवार था। मानव वैज्ञानिकों को कोई ऐसा समाज नहीं मिला जहां विवाह संबंध परिवार के अंदर ही होते हैं। अतः पितृ स्थानीय परिवार में पत्नी को और मातृस्थानीय परिवार में पति को अतिरिक्त सदस्यता प्रदान की जाती है। एकल परिवार में पति और पत्नी मिलकर अपने पृथक गृहस्थी स्थापित करते हैं। आधुनिक समय में परिवार के समझ कुछ ऐसी समस्याएं उत्पन्न हो गई हैं, जिनके कारण परिवार के अस्तित्व पर एक प्रश्न चिन्ह लग गया है। वर्तमान समय में परिवार में अभूतपूर्व परिवर्तन आ रहा है, जो परिवार के सदस्यों के दृष्टिकोण, मूल्यों, विचारों इत्यादि में अनेकानेक परिवर्तनों को जन्म दे रहा है। आधुनिक परिवारों के सदस्यों के बीच तनाव, ईर्ष्या और अश्रद्धा, द्यृणा इत्यादि देखने को मिलते हैं। जिसमें परिवार के आपसी संबंधों में एक प्रकार की उदासीनता और अलगाव की भावना आदि पाए जाने लगी है। परिस्थितियों के बदलाव के साथ–साथ व्यक्ति की आवश्यकताओं में भी निरंतर परिवर्तन होता रहता है। नवीन आवश्यकताओं के अनुसार परिवार को समय के अनुसार अनुकूल करना पडता है। लेकिन परिवार के प्राचीन आदर्शों, प्रतिमानों, मूल्यों इत्यादि में इतनी तीव्रता के साथ परिवर्तन नहीं हो पाता है। परिवार के सदस्य जब अपेक्षित व्यवहार में भिन्न व्यवहार करने लगते हैं, तब परिवार विघटन होने लगता है इस परिवार की पारिवारिक क्रियाकलापों में असंतुलन की स्थिति का उत्पन्न होना ही पारिवारिक विघटन है। जब परिवार के सदस्यों में तनाव उत्पन्न हो जाता है तब सदस्य अपने कर्तव्य और पारस्परिक भावनाओं के प्रति रुचि दिखाने लगते हैं। और परिवार में माननीय इत्यादि के विपरीत आचरण करने लगते हैं तब परिवार में पारिवारिक विघटन की स्थिति बन जाती है समाज में कुछ भी सास्वत नहीं है परिस्थितियों में परिवर्तन के साथ–साथ समाज के विभिन्न अंगों एवं कार्यों में भी परिवर्तन होते रहते हैं सौ साल पहले जो परिवार का स्वरूप था वह आज परिवार का स्वरूप नहीं है। जैसे जैसे आर्थिक विकास और औद्योगीकरण एवं नगरीकरण की प्रक्रिया में तेजी आ रही है। वैसे–वैसे परिवार के सामने नई नई समस्याएं उत्पन्न हो रही है हिंदू संयुक्त परिवार के बिखरने का यही प्रमुख कारण है। परिवार की संरचना और प्रकार्य में बहुत तेजी से परिवर्तन आ रहे हैं। उभरते तथ्यों को देखने से ऐसा लगता है कि परंपरागत मूल परिवार का परिवार का भविष्य खतरे में है, इस संदेश का कारण स्वाभाविक है क्योंकि तालाक में वृद्धि हो रही है। अकेले रहने वालों की संख्या में भी दिन वह दिन बढोतरी हो रही है। आज यह सोचने के लिए हम विवश हो गए हैं कि परिवार समिति एवं संस्था के रूप में धीरे–धीरे अपने पतन की ओर बढ रहा है और यह पतन संभवत

एक दिन परिवार को इसकी समाप्ति के कगार पर लाकर खडा कर देगा मार्क्स एवं उनके अनुयायियों ने भी परिवार के भविष्य पर संदेह व्यक्त किया है मार्क्स एवं एंगल्स ने यह दलील दी है कि परिवार पूंजीवादी समाज की विशेषता है और पूंजीवादी समाज के अंतर्गत ही परिवार जैसी संस्था के माध्यम से बच्चों एवं महिलाओं का आर्थिक शोषण होता है। बच्चों और महिलाओं का उत्पादन के उपकरण के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। जब सर्वहारा वर्ग पूंजीवादी वर्ग को उखाड फेंकेगा तो परिवार भी समाप्त हो जाएगा। प्रकार्यवादियों की तरह मार्क्सवादी चिंतक यह कभी स्वीकार नहीं करते हैं, कि परिवार सहज और सरल ढंग से एक संस्था के रूप में समाज में अपनी भूमिका निभाता है जो भी हो इस तथ्य पर एक सवालिया निशान खडा होता है कि पूंजीवादी व्यवस्था की समाप्ति के बाद साम्यवादी व्यवस्था में परिवार नहीं रहेगा क्योंकि यह पूंजीवादी व्यवस्था के शोषण का उपकरण है।[3]

आधुनिकता की खास देन है मूल परिवार, मूल परिवार का आदर्श सभी देशों में लोग अपना चुके हैं। पश्चिमी देशों में जो भारतीय लंबे समय से रह रहे हैं उनका दृष्टिकोण भी परिवार के मामले में पूरी तरह पाश्चात्य हो चला है। भारत में तो इसके सैकडो प्रमाण आपको अपने आस–पास या अपने यहां ही मिल जाएगा। परिवार की संरचना का प्रमुख आधार एक स्त्री और पुरुष के बीच संबंध है, जो विवाह द्वारा पति–पत्नी के संबंधों में बदल जाते हैं। परिवार की संरचना का दूसरा आधार परिवार के बच्चे है। संरचना का तीसरा आधार सामान्य निवास स्थान या घर है। इस भांति पति पत्नी बच्चे और सामान्य निवास परिवार की संरचना को बनाते हैं। इन तीन तत्वों से मिलकर साधारणतया केंद्रीय परिवार की संरचना होती है यहां यह बात उल्लेखनीय है, कि परिवार की संरचना का संबंध आर्थिक व्यवस्था से भी है। आज की नगरीय और औद्योगिक व्यवस्था पर इससे संबंधित व्यवसाय पद्धती ने एकांकी तथा व्यक्तित्व परिवार की संरचना को प्रोत्साहित किया है। जनजातीय कृषक और ग्रामीण अर्थव्यवस्था में जहां परिवार आज भी उत्पादन की इकाई है ज्यादातर सम्मिलित विस्तृत तथा संयुक्त माता पिता पति के भाई तथा उनकी पत्नियां तथा बच्चे भी साथ रहते हैं। भारत की संयुक्त परिवार की प्रणाली इस तरह के परिवार का सर्वोत्तम उदाहरण है। परिवार की संरचना मात्र इसके समूहगत स्वरूप, जिसमें पति पत्नी बच्चे तथा उनके संबंधी रहते हैं, से नहीं समझी जा सकती। परिवार एक संस्था के रूप में भावनात्मक संबंधों सामाजिक मूल्यों रीति–रिवाजों तथा परंपराओं से भी मिलकर बनता है। यह तत्व परिवार को स्थायित्व और निरंतरता प्रदान करते हैं।

परिवार की संरचना

केंद्रीय परिवार की संरचनाः– जिस प्रकार विवाह सर्वत्र पाया जाता है, वैसे ही केंद्रीय परिवार भी कई बार केंद्रीय परिवहन विस्तारित और जटिल परिवारों की संरचना भी करता है। केंद्रीय परिवार की बहुत बडी विशेषता निकटाभिगमन निषेध है। प्रत्येक विवाहित व्यक्ति कम से कम दो केंद्रीय परिवारों का सदस्य होता है। एक वह जिसमें कि वह जन्मा है, उसके जन्म का परिवार प्रशिक्षण परिवार से उसे जीवन बिताने की शिक्षा दीक्षा दी जाती है व्यक्ति का दूसरा परिवार वह है, जिससे वह विवाह के बाद प्रारंभ करता है, यह उसके स्वयं का परिवार है।

विस्तारित परिवार की संरचनाः– इसमें परिवार की संरचना थोडी जटिल होती है, इसमें जन्म के परिवार और जन्म के परिवार के सदस्य सम्मिलित होते हैं। अमेरिका और यूरोप में विस्तारित परिवार नहीं पाए जाते, लेकिन चीन जैसे देशों में यह परिवार पाया जाता है।

संयुक्त परिवार की संरचनाः– हमारे देश में संयुक्त परिवार एक विशेष संरचना है। आई पी देसाई का कहना है, कि हमारे यहां परिवार का अर्थ ही संयुक्त परिवार है। औद्योगिकरण व्यक्तिवाद और नगरीकरण ने संयुक्त परिवारों को विघटित कर दिया है। संयुक्त परिवार में प्रजनन के परिवार के अतिरिक्त जन्म का परिवार भी सम्मिलित होता है। इसका मतलब यह हुआ कि परिवार में माता–पिता के अतिरिक्त दादा–दादी भी साथ में

होते हैं। दादा–दादी परिवार की अविवाहित सदस्य और भाई–बहन मिलाकर संयुक्त परिवार बनाते हैं संयुक्त परिवार की संरचना का आधार समाजिक संबंध है।[4] औद्योगिकरण, नगरीकरण, प्रजातांत्रिककरण, शिक्षा, स्त्रियों की आर्थिक स्वतंत्रता व्यक्तिवादिता आदि अनेक कारकों के परिणामस्वरूप समाज में आज क्रांतिकारी परिवर्तन हुए हैं। इस कारण से परिवार की संरचना एवं प्रकार्यों पर भी पडा है। समय के साथ–साथ परिवार में परिवर्तन हो रहा है। परिवार के प्रकार्य, परिवार की संरचना पर निर्भर करते हैं और इसी तरह स्वयँ समाज की प्रकृति भी, परिवार के प्रकायों को निर्धारित करती है। आदिम समाज में परिवार के जो प्रकार्य होते है वे निश्चित रूप से औद्योगिक समाज के परिवारों से भिन्न होते हैं। आदिम समाज के परिवार में श्रम विभाजन बहुत थोडा होता था स्त्रिया भी आदमियों की तरह खेत खलियान में काम करती थी। पुरुष और स्त्री के कार्यों का विभाजन भी अद्यिक वृहद नहीं होता था। पुरुषों की भूमिकाओं को स्त्रियां कर लेती और स्त्रियों की भूमिकाओं को पुरुष। कई समाजशस्त्रियों का कहना है कि औद्योगिक समाज में परिवार के प्रकार्य स्वाधीनता से समाप्त हो रहे हैं। अब उत्पादन, शिक्षा, लोक कल्याण, आदि कार्य जो परिवार करता था, औपचारिक संगठन करने लगे हैं। परिवार के कुछ सामाजिक प्रकार्य हैं। यह बच्चों का पालन पोषण करता है और उनके सामाजिकरण में सहायता देता है बच्चे परिवार के बीच में ही विकसित होते हैं वे परिवार में ही भाषा रीति रिवाज परंपरा तथा आचार्य को सीखता है। परिवार का महत्वपूर्ण योगदान इसके सदस्यों के सामाजिकरण तथा उनके व्यवहारों के नियमन एवं सामाजिक नियंत्रण में है। परिवार ही अपने सदस्यों की मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। यह व्यक्तियों को साहचर्य प्रेम, सहानुभूति और मानसिक सबल प्राप्त कराता है। परिवार का सबसे बडा आधार आर्थिक है। कृषि प्रधान समाजों में तो परिवार ही उत्पादन की इकाई होती है। परिवार व्यवस्था जैसे कृषि दस्तकारी गृह उद्योग पशुपालन शिकार आदि कार्यों में परिवार के सभी सदस्य समान रुप से सहयोग देते हैं।[5] परिवर्तन समाज की आंतरिक शक्तियों के विकास के कारण होता है। समाज में ही वें आधारभूत क्षमताएं विद्यमान होती है। जो प्रस्फुटित एवं विकसित होती रहती है। और इन्हीं कारण समाज में परिवर्तन दिखाई देता है। मेकाइवर तथा पेज के अनुसार, परिवर्तन स्वयं पदार्थ में निहित शक्तियों की कार्यशीलता के कारण होता है। संरचनात्मक प्रकार्यात्मक अभिगम का विकास मुख्यतः उद्रविकासवादी ऐतिहासिक एवं तुलनात्मक परिपेक्ष्यों की सीमाओं को दूर करने के प्रयास के परिणामस्वरुप किया गया है। उद्रविकास एवं ऐतिहासिक अभिगमों में ऐतिहासिक पुनर्निर्माण के लिए काल्पनिक, अप्रमाणित एवं अव्यवस्थित तथ्यों का अत्यधिक प्रयोग किया जाता रहा है। संरचनात्मक प्रकार्यात्मक अभिगम द्वारा सामाजिक इकाई के प्रकार्य को जानने का प्रयास किया जाता है। इस अभिगम का प्रयोग अनेक रूपों में किया गया है। डेविस ने संरचनात्मक प्रकार्यात्मक अभिगम को एक सिद्धांत माना है। समाजशास्त्र में अतिथियों एवं सिद्धांतों से अलग करने का प्रयास किया गया है। होमन्स ने संरचनात्मक प्रकार्यात्मक अभिगम को पद्धति कहां है। जबकि इकलिस ने इसे एक दृ ष्टिकोण माना है। इनके अनुसार संरचनात्मक प्रकार्यात्मक अभिगम समाज को परस्पर संबंधित इकाइयों के रूप में देखने का प्रयास करता है ना कि व्यक्तियों या समूह के रूप में परिवार का एक अपना जीवन चक्र एवं जीवनकाल होता है।[6] समय के साथ प्रौद्योगिकी एवं आर्थिक विकास के परिणाम स्वरूप परिवार के स्वरूप एवं प्रकार्य में परिवर्तन दिखाई देता है। बच्चों का प्राथमिक सामाजिकरण। यौन–व्यवहारों का नियमन तथा व्यक्ति को भावनात्मक एवं आर्थिक सुरक्षा परिवार के कुछ मूलभूत प्रकार्य हैं औद्योगिक समाजों में परिवार के इन मूलभूत प्रकार्य में से कुछ एक का रूपांतरण हुआ है। सबसे महत्वपूर्ण बदलाव विस्तारित परिवार के महत्व में कमी तथा नाभिकीय परिवार का उद्भव होना है। यद्यपि प्रजनन तथा बच्चों की प्राथमिक देखभाल जैसे मूलभूत प्रकार्य है। अभी भी नाभिकीय परिवार के द्वारा ही संपन्न किए जा रहे हैं। परिवार की आर्थिक भूमिका में व्यापक बदलाव हो रहे हैं। अब परिवार उत्पादन के संबंध में एक आर्थिक

इकाई नहीं रह गई है। परिवार का विखंडन एवं नाभिकीय परिवार की उत्पत्ति का एक प्रमुख कारण दैनिक श्रमिकों की सहज उपलब्धता है। विस्तारित परिवार के महत्व में ह्रास का एक अन्य महत्वपूर्ण कारण औद्योगिकरण के द्वारा प्रेरित भौगोलिक गतिशीलता की उच्चदर है। औद्योगिकरण के प्रभाव से फैक्ट्री में काम के लिए गांव से लोग आते हैं। और शहर में अपना नाभिकीय परिवार स्थापित कर लेते हैं। जापान जैसे अत्यंत औद्योगिक देश में औद्योगिक विकास के परिणाम स्वरुप ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर आधारित विस्तारित परिवार का पतन होने लगा है। परिवार के स्वरूप में यह परिवर्तन प्रायः सामाजिक, आर्थिक प्रस्थिति से संबंधित होता है। जो भूमंडलीकरण से अत्यधिक प्रभावित है। सामाजिक आर्थिक वर्ग विशेषकर कृषक कार्य में संलग्न लोगों के बीच विस्तारित परिवार का महत्व अभी भी विद्यमान है। औद्योगिक समाज में विस्तृत परिवार के विघटन की सामान्य प्रवति के बावजूद कुछ समूहों और क्षेत्रों में भी अभी भी विस्तृत परिवार जीवित है। बहुत सारे समाजशास्त्रियों का कहना है कि हमें यह नहीं समझना चाहिए कि परिवार में यह परिवर्तन मात्र औद्योगिकरण से संभव हुआ है। इसलिए कि औद्योगिक क्रांति के पूर्व भी पश्चिमी यूरोप एवं अमेरिका में मूल परिवर्तन मौजूद था। लेकिन इस बात से इनकार भी नहीं किया जा सकता कि औद्योगिकरण के साथ मूल परिवार को बढाने में कोई कम महत्वपूर्ण योगदान नहीं दिया है। परिवारिक व्यवस्था में परिवर्तन को आर्थिक व्यवस्था में होने वाले परिवर्तन से जोडा गया है। जब समाज में आर्थिक व्यवस्था प्रमुख रूप से कृषि पर आधारित थी, तो उस समय विस्तृत परिवार की प्रधानता थी तथा कृषि व्यवस्था के विकास के पूर्व आदिमकालीन समाज में प्रमुख रूप से मूल परिवार की प्रधानता थी लेकिन जैसे–जैसे समाज अपने कृषि स्तर से औद्योगिक स्तर की ओर बढता गया मूल परिवार की प्रमुखता फिर से बढने लगी इस प्रकार हम कह सकते हैं कि मूल परिवार आदिम एवं आधुनिक अर्थव्यवस्था की विशेषता है तो विस्तृत परिवार कृषि प्रधान समाज की देन है।

निष्कर्षः–

परिवार की संरचना एवं प्रकार्य में बहुत तेजी से परिवर्तन आ रहे हैं। वर्तमान समाज तीव्र रूप से बदलते परिदृश्यो का है। जिसमें पूँजी या कहे तो पैसे ही अपनी अहम भूमिका को निभा रही है। जिससे लोगों के सामाजिक आर्थिक और जीवन के अन्य पहलुओं को परिवर्तित करने में मदद मिल रही है। इसमें परिवार के स्वरूपों में क्रांतिकारी परिवर्तन आ रहे हैं। पाश्चात्य सभ्यता, आवास की समस्या, जनसंख्या की वृद्धि आत्मकेंद्रित विचारधारा आदि कुछ ऐसे प्रमुख कारण हैं, जिनमें परिवार का आकार छोटा हो गया है आयु का महत्व कम हो रहा है। अनौपचारिक संबंध अब औपचारिक संबंधों में परिवर्तन होते जा रहे हैं। आज प्रत्येक सदस्य निजी स्वार्थों से ग्रसित है तथा व्यक्तिवादीता निरंतर बढ रही है इसके कारण सदस्यों में कर्तव्य की भावना समाप्त होती जा रही है। पहले नारी का जीवन केवल परिवार की चार– दिवारी तक ही सीमित था। शिक्षा की कमी के कारण तथा आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर ना होने के कारण उन्हें पुरुषों पर आश्रित रहना पडता था पर आज उन्हें सभी क्षेत्रों में समान अधिकार प्राप्त है। आज पत्नी, पति की दासी नहीं अपितु सहयोगी और मित्र है। औद्योगिकरण, शहरीकरण, भूमंडलीकरण, शिक्षा नारीवादी चेतना एवं आंदोलन परिवार एवं विवाह से संबंधित सामाजिक विधान इत्यादि के परिणाम स्वरुप परिवार के आकार में परिवर्तन हुआ है। भारतीय समाज परिवार की संरचना एवं प्रकार्य में परिवर्तन हो रहे हैं।

संदर्भ सूचीः–

1. शर्मा, प्रमोद कुमार, परिवार और विवाह के बदलते प्रतिमान, सिंघाई पब्लिशर्स एवं डिसटीब्यूटर्स पंडित दीनदयाल उपाध्याय नगर, रायपुर, 2010, पृ–15
2. महाजन, धर्मवीर, महाजन, कमलेश नातेदारी विवाह एवं परिवार का समाजशास्त्र, विवेक प्रकाशन जवाहर नगर, दिल्ली, 2005 पृ– 190
3. सिंह, जेपी, समाजशास्त्र अवधारणा एवं सिद्धांत, तृतीय संस्करण 2013 बाय लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली, पृ– 249,251
4. **www.scotbuzz.org, 2018**
5. वहीः–2018
6. त्रिपाठी, राजेश, नातेदारी, विवाह एवं परिवार का समाजशास्त्र, 2016, पृ–26

JSECR, Vol. 7, No. 15, July.-Dec., 2021 **ISSN : 2394-2878**
Impact Factor : 6.125(IIFS) Peer Reviewed Journal

डिजिटल शिक्षा एवं नई शिक्षा नीति

दुर्गा गौतम
असिस्टेंट प्रोफेसर,समाजशास्त्र विभाग
श्री अग्रसेन कन्या महाविद्यालय,वाराणसी

केरल युनिवर्सिटी ऑफ डिजिटल साइंसेज इनोवेशन एण्ड टेक्नोलॉजी जिसे डिजिटल यूनिवर्सिटी केरल **(DUK)** के नाम से भी जाना जाता है। भारतीय सूचना प्रौद्योगिकी और प्रबंधन संस्थान केरल **(IITM-K)** जिसकी स्थापना 2000 में केरल के 14वॉ राज्य विश्वविद्यालय के रूप में किया गया है, जिसे अपग्रेड करके 2020 को 'केरल यूनिवर्सिटी ऑफ डिजिटल साइंसेज इनोवेशन एंड टेक्नोलॉजी' बनाया गया। **IIMK** केरल का पहला डिजिटल यूनिवर्सिटी है।

कुंजी शब्द–मुदालियर, लार्ड मैकाले, **AIIECT, IITM-K, NEP 2020**

प्रौद्योगिकीय संयंत्रों के माध्यम से प्राप्त करने वाली शिक्षा को डिजिटल लर्निंग कहते हैं। प्राचीन समय से ही शिक्षा ग्रहण और प्रदान करने की व्यवस्था किसी संस्था या व्यक्ति विशेष के माध्यम से होता था, लेकिन डिजिटल लर्निंग में शिक्षा का स्रोत अब समय, स्थान पर आधारित नहीं रहा।

डिजीटल लर्निंग को शिक्षा जगत में एक क्रांति के रूप में समझ सकते हैं। कोरोना महामारी के दौरान जबकि जन–जीवन तालाबंदी के दौर से गुजर रहा था, ऐसे में डिजीटल लर्निंग के माध्यम से शिक्षण कार्यों में निरंतरता बनी रही।

शिक्षा क्या है ?

शिक्षा शब्द संस्कृत के शिक्ष् धातु से बना है, जिसका अर्थ होता है–सीखना, अध्ययन तथा ज्ञान ग्रहण करना। व्यापक अर्थ के अन्तर्गत मनुष्य को उन्नत और सभ्य बनाना है। प्रो0 जान डी0वी0 कहते हैं, ''व्यापक शिक्षा को शिक्षा के अनुभवों का संगठन या पुर्नसंगठन कहा जा सकता है।''

इमाइल दुर्खीम के अनुसार, ''शिक्षा अधिक आयु के लोगों द्वारा ऐसे लोगों के प्रति की जाने वाली क्रिया है जो अभी सामाजिक जीवन में प्रवेश करने योग्य नहीं है। इसका उद्देश्य शिशु में उच्च भौतिक, बौद्धिक और नैतिक विशेषताओं का विकास करना है जो उसके लिए संपूर्ण समाज और पर्यावरण से अनुकूल करने के लिए आवश्यक है।

प्रौद्योगिकी के अन्तर्गत उन प्रविधियों को लिया जाता है जो हमें नैतिक लक्ष्यों को पाने में सहायता प्रदान करती है। प्रो0 सरन के अनुसार, ''प्रौद्योगिकी किसी उद्देश्य या उद्देश्यों की पूर्ति हेतु अप्रत्यक्ष तथा उच्च श्रेणी के साधनों की व्यवस्था है।

कार्ल मार्क्स के अनुसार, ''प्रौद्योगिकी प्रकृति के साथ मनुष्य के व्यवहार करने के ढंग एवं उत्पादन की उस प्रक्रिया को बतलाती है जिसके द्वारा मनुष्य जीवित रहता है तथा अपने सामाजिक संबंधों और मानसिक धारणाओं के स्वरूप को निर्धारित करता है।

शिक्षा के तीन आधार बिन्दु है, शिक्षक, शिक्षार्थी और पाठ्यक्रम। डिजीटल लर्निंग में सीखना अब स्कूल के दिन या स्कूल वर्ष तक ही सीकित नहीं है। इंटरनेट और इंटरनेट एक्सेस उपकरणों के प्रसार ने छात्रों को कभी भी सीखने की क्षमता प्रदान की है। डिजीटल लर्निंग से सीखना अब कक्षा की दीवारों के भीतर प्रतिबंधित नहीं है। इंटरनेट के एक्सेस उपकरणों से बच्चे कहीं भी सीख सकते हैं। सीखना अब शिक्षक

द्वारा उपयोग किए जाने वाले अध्यापन सामग्रियों पर ही आधारित नहीं है। बल्कि प्रौद्योगिकीय जगत में ऐसे–ऐसे तकनीकी को विकसित किया जा रहा है कि शिक्षण की प्रक्रिया और अधिक रूचिकर हो जा रही है। सीखना अब छात्रों की पूरी कक्षा की गति तक सीमित नहीं है। इंटरएक्टिव और अनुकूली साफ्टवेयर छात्रों को अपनी गति और क्षमता के अनुसार सीखने की अनुमति देता है। इसमें इंटरनेट एक्सेस और हार्डवेयर शामिल है जो कोई भी इंटरनेट एक्सेस डिवाइस हो सकता है।

डिजीटल सामग्री उच्च गुणवत्ता वाली शैक्षणिक सामग्री है। जिसे प्रौद्योगिकी के माध्यम से वितरित किया जाता है। ऐसा नहीं है कि डिजिटल लर्निंग में शिक्षक की आवश्यकता नहीं है। लेकिन प्रौद्योगिकी शिक्षक की भूमिका को पूर्णतः बदल सकती है। लेकिन यह शिक्षक की आवश्यकता को कभी पूर्णतः समाप्त नहीं करेगी। डिजिटल शिक्षा के साथ–साथ शिक्षक व्यक्तिगत मार्गदर्शन और सहायता प्रदान करने में समक्ष होंगे। डिजिटल लर्निंग संपूर्ण सीखने के अनुभव का डिजिटलीकरण है। इसके माध्यम से सामाजिक शिक्षा, पेशेवरों के साथ आभासी बैठकें, ऑनलाइन परीक्षा, पूर्व छात्रों के साथ नेटवर्किंग, व्यवसायीकरण कार्यशाला है।

कोरोना के तालाबंदी के मध्य में नेशनल इण्टरनेंशनल वेबिनार, सिम्पोजियम, वर्कशॉप इतयादि के माध्यम से सभी विषय विशेषज्ञों एवं विद्वानों ने अपनी वक्तव्यों से शिक्षण जगत को प्रभावित किया।

डिजिटल लर्निंग की आवश्यकता

- प्रौद्योगिकी का उपयोग करके किसी विशेष विषय के ज्ञान या कौशल का अधिग्रहण।
- डिजिटल शिक्षण में सूचना–संचार प्रौद्योगिकी जो शिक्षार्थियों को विशिष्ट सीखने के परिणामों तक पहुँचाती है।
- डिजिटल लर्निंग के माध्यम से रचनात्मकता का भी विकास होता है।
- डिजिटल लर्निंग सामग्रियों का विषय विशेषज्ञों द्वारा निगरानी द्वारा गुणवत्ता।

डिजिटल लर्निंग के प्रोत्साहित करने के सरकारी उद्देश्य–

डिजिटल लर्निंग की आवश्यकता को देखते हुए आम बजट में डिजिटल शिक्षा पर खास ध्यान दिया गया। वित्तमंत्री निर्मला सीता रमण की पॉच बड़ी घोषणाओं में डिजिटल यूनिवर्सिटी बनाने की घोषणा थी। स्कूली शिक्षा और उच्च शिक्षा को मिलाकर समग्र शिक्षा बजट में करीब 16 हजार करोड़ रूपये की बढ़ोत्तरी की गई। 2022–23 के लिए शिक्षा के लिए 1 लाख 4 हजार 277 करोड़ का बजट पेश किया है। शिक्षा बजट की बढ़ोत्तरी 17 प्रतिशत हुई है।

डिजिटल इंडिया ई–लर्निंग के लिए करीब 400 करोड़ रूपये खर्च किये जाएगें।

- डिजिटल शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए डिजिटल यूनिवर्सिटी बनाने की योजना है।
- 2000 ई–विद्या टीवी चैनलों की शुरूआत।
- शिक्षा की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (एआईसीटीई) को जिम्मा।
- नेशनल स्किल क्वालिफिकेशन फर्मवर्क (एनएसक्यूसफ) को बढ़ावा।
- गिफ्ट सिटी में विश्व स्तरीय विदेशी विश्वविद्यालय स्थापित करने तथा वर्जुअल प्रयोगशालाओं एवं डिजिटल सामग्रियां तैयार करने की घोषणा।

- देश में विदेशी विश्वविद्यालयों की राह आसान होगी, विदेशी युनिवर्सिटी का भारत में कैंपस शुरू होगी जिससे मैनेजमेंट फिनटेक, सांइस, टेक्नोलॉजी, इंजीनियरिंग और गणित की पढ़ाई कर रहे छात्रों को लाभ मिलेगा।

नई शिक्षा नीति 2020

शिक्षा संबंधी नीतियों की शुरूआत लार्ड मैकाले के शिक्षा प्रणाली से मानी जाती है।
राष्ट्रीय शिक्षा नीति मई 1986 से लागू होती आ रही है। भारतीय संविधान के चौथे भाग में उल्लिखित नीति निदेशक तत्वों में कहा गया है कि प्राथमिक स्तर तक के सभी बच्चों को अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था की जाय। 1948 में डॉ0 राधाकृष्णन की अध्यक्षता में विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग के गठन के साथ ही भारत में शिक्षा प्रणाली को व्यवस्थित करने का कार्य प्रारम्भ हुआ। 1952 में लक्ष्मण स्वामी मुदालियर की अध्यक्षता में गठित माध्यमिक शिक्षा आयोग तथा 1969 में दौलत सिंह कोठारी की अध्यक्षता में गठित शिक्षा आयोग की अनुशंशाओं के आधार पर 1968 में शिक्षा नीति पर एक प्रस्ताव प्रकाशित किया गया, जिसमें राष्ट्रीय विकास के प्रति वचनबद्ध, चरित्रवान तथा कार्यकुशल युवक–युवतियों को तैयार करने का लक्ष्य रखा गया।

1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति की समीक्षा के लिए 1990 में आचार्य राममूर्ति की अध्यक्षता में एक समीक्षा समिति तथा 1993 में प्रो0 यशपाल समिति का गठन किया गया। नई शिक्षा नीति 2020 जिसे भारत सरकार 29 जुलाई 2020 को लागू की गई। यह 1986 में नई शिक्षा नीति के बाद पहला परिवर्तन है। यह नीति अंतरिक्ष वैज्ञानिक के0 कस्तूरीरंगन की अध्यक्षता वाली समिति की रिपोर्ट पर आधारित है।

नई शिक्षा नीत की समीक्षा

नई शिक्षा नीति 2020 में प्रौद्योगिकी का न्यायसंगत उपयोग सुनिश्चित करने के लिए प्रौद्योगिकी की संभावित चुनौतियों को स्वीकार करते हुए इससे मिलने वाले लाभों के महत्व को बताते हुए यह निर्धारित किया गया कि ऑनलाइन/डिजिटल शिक्षा की हानियों को कम करके अधिक से अधिक उपयुक्त लाभ उठा सके। इसके लिए सरकार ने डिजिटल प्लेटफार्म और आईसीटी को विस्तारित करने की सिफारिशें पेश की है।

डिजिटल शिक्षा के लिए समिति द्वारा कुछ सिफारिशें–

- ऑनलाइन शिक्षा के लिए पायलट अध्ययन ।
- डिजिटल इन्फास्ट्रक्चर।
- ऑनलाइन शिक्षण मंच और उपकरण।
- सामग्री निर्माण, डिजिटल रिपॉजिटरी और प्रसार।
- डिजिटल अतर को कम करना।
- वर्जुअल लैब्स।
- शिक्षकों के लिए प्रशिक्षण और प्रोत्साहन।
- ऑनलाइन मूल्यांकन और परीक्षाएं
- सीखने के मिश्रित मॉडल।
- मानकों को पूरा करना।

अध्ययन का उद्देश्य

- नई शिक्षा नीति 1986 के संबंध में संशोधित पहलुओं का विश्लेषण।
- महामारी (कोरोना) के समय तथा भविष्य में ऐसे होने वाले संभावनाओं के लिए डिजिटल शिक्षा की प्रासंगिकता का अध्ययन।
- डिजिटल शिक्षा द्वारा विषयों का अभिविन्यास।
- कौशल विकास के लिए शिक्षा प्रौयोगिकीय का उपयोग
- विश्वस्तरीय डिजिटल इन्फ्रास्ट्रक्चर, शैक्षिक डिजिटल कंटैंट सामग्री और क्षमता के निर्माण की इकाइयों का अध्ययन।

अध्ययन की पद्धति

प्रस्तुत अध्ययन वर्णनात्मक शोध अभिकल्प पर आधारित है। शोध अध्ययन तथ्यों के संकलन के द्वितीय आधारों पर आधारित है। जिसके लिए पुस्तकों, पत्र–पत्रिकाओं एवं समाचार पत्रों तथा सरकारी शासनादेशों के ई सामग्रीयों का अध्ययन किया गया है।

अध्ययन की व्याख्या–

शोध के विश्लेषणात्मक अध्ययन में नई शिक्षा नीति 2020 में डिजिटल शिक्षा संबंधी प्रौद्योगिकीय न्याय संगत उपयोगिता तथा ई लर्निंग की प्रासंगिकता केन्द्र में है।

निष्कर्ष

एनईपी 2020 शिक्षा में ज्यादा से ज्यादा अंतर्राष्ट्रीयकरण के पक्ष में ई लर्निंग संभावनाएं व्याप्त कर सकता है। एनईपी 2020 में एक राष्ट्रीय शैक्षिक प्रौद्योगिकी मंच नेशनल एजुकेशनल टेक्नोलॉजी फोरम (NETF) की स्थापना से बौद्धिक प्रक्रिया को बेहतर, ज्ञानार्जन, आकलन, योजना एवं प्रशासन में सुधार संबंधी मंच के रूप में काम कर सकता है। डिजिटल लर्निंग से वैश्विक ई सामग्री छात्राओं को उपलब्ध होने से इनमें रचनात्मकता बढ़ेगी।

एनईपी 2020 ने डिजिटल को शिक्षा का गंतव्य न मानकर एक मार्ग के रूप में माना है। एक तरफ एनईपी 2020 की सिफारिशें यह भी स्वीकार करती है कि भारतीय जनसंख्या में डिजिटल अन्तर है। अर्थात अधिक से अधिक आबादी के पास ई–लर्निंग के लिए बुनियादी सामग्री बिजली, भौगोलिक दशाओं, नेटवर्क आदि बुनियादी समस्या को समाप्त करने में समय की प्रचूरता की आवश्यकता है।

संदर्भ सूची–

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति, ''मानव संसाधन विकास मंत्रालय, अध्याय 24, पृ0सं0 95, भाग–III
2. उत्तर प्रदेश शासन (13 जुलाई 2021) उच्च शिक्षा अनुभाग– संस्था 1567/सत्तर – 3–2021–16 (28)/2011 टीवी
3. योजना – नई शिक्षा नीति, 2020 फरवरी 2922
4. प्रो0 रेखा, परिवर्तन एवं विकास का समाजशास्त्र, वैभव लक्ष्मी प्रकाशन, वाराणसी, पृ0सं0 440–441
5. हिन्दुस्तान, 02 फरवरी 2022
6. igi.global.com
7. www.yosa, georgia.gov.
8. hi.wikipedia.org/wiki/ भारतीय शिक्षा का इतिहास।

मुगलकालीन नौ–परिवहन :स्वरूप एवं विकास

डॉ0 अम्बिका प्रसाद तिवारी
असिस्टेंट प्रोफेसर, इतिहास विभाग
बुद्ध पी0 जी0 कॉलेज,
कुशीनगर,(उ0प्र0)

सभ्यता का इतिहास बताता है कि विश्व की अधिकांश सभ्यताएँ नदी की घाटियों में पनपी और विकसित हुईं। प्राचीन काल से ही यूनान रोम तथा भारत आदि देशों में संचार के साधनों के रूप में जहाजों के प्रयोग का विवरण मिलता है। प्रो0 राधा कुमुद मुकर्जी के अनुसार 3000 वर्ष पूर्व पेगू, कम्बोडिया, जावा, सुमात्रा आदि देशों में भारतीय बस्तियाँ थीं तथा दक्षिण चीन, मलाया, अरब और फारस के लगभग सभी प्रमुख शहरों से भारत का व्यापारिक सम्बन्ध था।[1]

उत्तर भारत की नदियाँ मैदान में बहने के कारण परिवहन के लिये अधिक उपयुक्त हैं। गंगा, ब्रम्हपुत्र और सिंध इन तीनों के उद्‌गम स्थल हिमालय में है। सिंधु–गंगा का मैदान हिमालय की तलहटी और दक्षिण भारत को अलग करने वाले मध्य क्षेत्र के बीच में स्थित है। यह पूर्व में ब्रम्हपुत्र से लेकर पश्चिम में बोलन दर्रे तक फैला है। दिल्ली और आगरा से आगे नदियों के प्रवाह पूर्व की ओर मुड़ गये हैं। गंगा के समानान्तर यमुना और घाघरा भी पूर्व की ओर प्रवाहित होकर आगे गंगा से मिल जाती हैं। जबलपुर के निकट से निकल कर नर्मदा नदी पहाड़ी घाटियों से होती हुई पश्चिम की ओर बहती है। नर्मदा से लगभग 50 मील दूर उसके समानान्तर ताप्ती नदी प्रवाहित होती है जो सूरत के निकट समुद्र में गिरती है। मध्यकालीन खान देश ताप्ती की घाटी में ही बसा था उत्तर–पश्चिम में सिंधु नदी की धारा को उसकी सहायक झेलम, चिनाव, रावी और सतलज मिलकर तेज कर देती हैं जो करांची के निकट डेल्टा बनाती हैं। दक्षिण की नदियों में कृष्णा, गोदावरी और महानदी प्रमुख हैं।[2]

भारत में प्राचीन काल से जहाजों तथा नावों के उल्लेख मिलते हैं। वैदिक साहित्य को उद्धृत करते हुये आर0सी0 मजूमदार[3] तथा पाणिनि सूत्रों का हवाला देते हुये डॉ0 बी0एस0 अग्रवाल[4] ने प्राचीन काल के नौ परिवहन पर विस्तार से प्रकाश डाला है। कौटिल्य ने जल मार्गों द्वारा यातायात को अत्यन्त सस्ता तथा कम श्रम वाला बताया है, परन्तु हर मौसम के लिये नहीं। तो भी जल मार्गों द्वारा अधिक यात्रायें की जाती थीं क्योंकि इसमें पैसा कम लगता था और यात्रियों को लाभ अधिक था।[5] मौर्य काल में 'नावाध्यक्ष' का एक पद होता था यह सरकारी अधिकारी होता था। नौ परिवहन के संचालन के साथ उससे संबंधित शुल्क का निर्धारण एवं वसूली करवाने की व्यवस्था नहीं करता था।[6] वाराणसी से पटना और कैन्या (वर्तमान भागलपुर) तक बराबर बड़ी–बड़ी नावें चला करती थीं।[7] पालि जातकों में भी बड़े–बड़े जहाजों एवं नावों का उल्लेख मिलता है।[8]उस काल में जब संचार का साधन इतना तीव्र और सुलभ नहीं था, नदियाँ ही इसकी पूर्ति करती थीं। यातायात एवं संचार के लिये यही तेज और द्रुतगामी साधन थीं। सैनिक तथा व्यापारिक दोनों प्रकार के संचार के लिये नदियों का उपयोग होता था। परन्तु जब बरसात में तेज बाढ़ आ जाती थी तो कुछ अपवादों को छोड़कर ये नदियाँ यातायात के लिये रूकावट भी बन जाती थीं।[9]

सल्तनत काल में अमीर–उल–बहर नाम का एक अधिकारी होता था जो नदियों में नावों की वेड़े की देखरेख करता था।[10] निकोली डि काण्टी ने पन्द्रहवीं शताब्दी में हिन्दुस्तान का भ्रमण किया था। उसने

तत्कालीन रियासतों तथा बन्दरगाहों पर पर्याप्त प्रकाश डाला है। उसने ऐसे जहाजों का भी विवरण दिया है जो एक हजार टन की क्षमता वाले थे।[11] सल्तनत काल के एक दूसरे प्रमुख यात्री मार्को पोलो ने कैम्बे बन्दरगाह को एक प्राचीन बन्दरगाह स्वीकार किया है। जबकि कालीकट बन्दरगाह को दुनिया का एक श्रेष्ठ बन्दरगाह बताया है। उसने 300 नाविकों एवं कर्मचारियों वाले जहाजों का भी उल्लेख किया है।[12]

मुगल काल में नौपरिवहन अत्यन्त विकसित अवस्था में था। जहाजों तथा नौकाओं का प्रयोग युद्ध एवं व्यापार दोनों के लिए समान रूप से किया जाता था। 'मीर बहर' मुगलों के समय में इस विभाग का प्रमुख अधिकारी था साम्राज्य की आवश्यकता के अनुसार यह जहाजों के निर्माण एवं संचालन का प्रबंध करता था। 'मीर बहर' सैनिक गतिविधियों तथा विदेशी समाचारों को भी एकत्र कर दरबार में भेजता था। बन्दरगाह शुल्क, सीमा शुल्क, नौका कर आदि का भी निर्धारण वही करता था।[13] युद्ध के समय 'मीर बहर' सेना को नदी पार करवाने तथा छोटे–मोटे पुल के निर्माण कराने का कार्य भी करता था। मुगल शासकों ने नौपरिवहन के प्रति विशेष दिलचस्पी दिखायी। तुजुक–ए–बाबरी से ज्ञात होता है कि बाबर नौका बिहार एवं तैराकी में अत्यधिक रूचि लेता था।[14] 'ख्वान्दमीर' के 'हुंमायूँ नामा' से ज्ञात होता है कि हुमायूँ प्रशासन प्रशासन के चार प्रमुख विभागों में से एक विभाग जल से संबंधित था।[15]

हुमायूँ ने नावों के निर्माण एवं संचालन में कई नये प्रयोग किये, उसने दो मंजिल वाले बजरों का निर्माण करवाया, जिसके विभिन्न भाग भिन्न–भिन्न रंगों से रंगे गये। उन पर सुन्दर कालीन तथा बहुमूल्य वस्तुओं से सजावट की जाती थी जिससे ये बजरें बहुत शानदार दिखायी देते थे।[16] हुंमायूँ का दूसरा प्रयोग यह था कि उसने बहुत सी नावों के किनारे तथा बीच में दुकाने स्थापित करवायी थीं यहीं से नावों पर चलती फिरती दुकानों की नई परम्परा की शुरूआत हुई। ख्वान्दमीर तो यह भी लिखता है कि सभी प्रकार के व्यवसायियों को यह आदेश दिया गया था कि वे अपनी–अपनी दुकानें इस प्रकार की नावों पर सजायें किन्तु यह आदेश प्रभावी नहीं हो सका। हुमायूँ ने स्वयं ऐसी नावों पर अपने अमीरों एवं अधिकारियों के साथ तुगलकाबाद से आगरा तक कई बार यात्रा की थी। उसने शाही मालियों को आदेश दे रखा था कि वे इन नावों पर वेला, चमेली तथा कुछ अन्य प्रकार के खुशबूदार फूल लगायें जिससे ताजे फूल मिल सकें और नावों का आकर्षण बढ़ जाये।[17] हुमायूँ का तीसरा प्रयोग यह था कि उसने चलते फिरते पुल (जसर–ए–रबा) का निर्माण करवाया जो आवश्यकता पड़ने पर एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाये जा सकते थे। इन पुलों के निर्माण में छोटी–छोटी नावों को लोहे के कुण्डों एवं जंजीरों से इस प्रकार जकड़ दिया जाता था कि वे हिल न सकें। फिर उन पर लकड़ी के पटरे डाल दिये जाते थे, जिनके ऊपर से आसानी से नदी पार कर लिया जाता था।[18] अंग्रेज इतिहासकार बेवरीज ने 'अकबर नामा' के अनुवाद में अपनी टिप्पणी दी है कि हुमायूँ के समस्त कार्यों में यह एक मात्र उपयोगी एवं लाभदायक कार्य था।[19]

अकबर ने इस विभाग को और भी वैज्ञानिक ढंग से सुसज्जित किया, अबुल फजल के अनुसार सम्राट स्वयं नावों के निर्माण का निरीक्षण करता था, उस समय नावें इतनी बड़ी और मजबूत बनायी जाती थीं कि उन पर हाथियों को सरलता पूर्वक ले जाया जा सकता था। कुछ नौकायें घरों जैसी बड़ी–बड़ी तथा कुछ पशुओं की आकृति की बनाई जाती थीं जिनमें भय और मनोरंजन दोनों का संयोग स्पष्ट होता था।[20] अकबर के शासनकाल में बंगाल, थट्टा और कश्मीर में जहाज तथा बड़ी नावें पश्चिम समुद्र तट और दक्षिण समुद्र तट पर जहाज और इलाहाबाद तथा लाहौर में बड़ी–बड़ी नौकायें तथा कुछ जहाज बनाये जाते थे, जिन्हें समय–समय पर समुद्र तट पर भेज दिया जाता था।[21] इन नावों एवं जहाजों पर ऐसे नाविक नियुक्त किये जाते थे जो जल की गहराई, विभिन्न हवाओं के बहने का समय तथा उनसे होने वाले लाभ और हानियों से परिचित होते थे। इसके अतिरिक्त नाविक को स्वस्थ्य, बलवान, दक्ष, तैराक, परिश्रमी एवं

धीर प्रकृति का होना चाहिये था। इन गुणों का समावेश मालावार के नाविकों में अधिक था। इसीलिये वहीं से अधिक संख्या में नाविकों की भर्ती होती थीं।[22]

आइन–ए–अकबरी से इस विभाग की कार्यवाही तथा इससे सम्बन्धित आंकड़ों की विस्तृत जानकारी मिलती है। जहाजों तथा नावों के आकार और बन्दरगाह की श्रेणी के आधार पर नाविकों एवं कर्मचारियों की नियुक्ति होती थी और उसी के अनुसार वेतन भी दिया जाता था। उनके पद और स्तर के अनुसार सुविधएं भी मिलती थीं।[23] 'नाखुदा', 'मुअल्लिम', 'टण्डिल', 'सरहंग', 'सुभंगीर', 'पंजरी', 'गुम्ती', 'भण्डारी' एवं 'खारवा' आदि प्रमुख कर्मचारी होते थे जो बन्दरगाहों, जहाजों और नावों की श्रेणी के आधार पर वेतन प्राप्त करते थे। सतगांव (हुगली) बन्दरगाह में नाखुदा को चार सौ रुपये मासिक वेतन तथा चार केबिन (कोठरियाँ) उसके निजी प्रयोग के लिये मिलती थीं, मुअल्लिम को 200 रुपये प्रतिमास और दो केबिन, टण्डिल 120 रुपये प्रतिमास, सरहंग 25 रुपये, सुभंगीर, पंजरी, भण्डारी और गुम्ती प्रत्येक को 15 रुपये प्रतिमास तथा खारवा को 40 रुपये प्रतिमास का दैनिक भोजन दिया जाता था। खम्भात (कैम्बे) बन्दरगाह में नाखुदा को 800 रुपये प्रतिमास मिलते थे और उसी अनुपात में अन्य कर्मचारियों को भी दिया जाता था। लाहरी बन्दरगाह में 300 रुपये प्रतिमास नाखुदा पाता था तथा शेष कर्मचारी उसी अनुपात में धनराशि पाते थे। सामान्य तौर पर उत्तर की तुलना में दक्षिण के बन्दरगाहों में लगभग दूना वेतन और सुविधाएं दी जाती थी। वहाँ से पुर्तगाल जाने वाले को ढाई गुना तथा मलक्का जाने वाले को दूना से अधिक वेतन मिलता था। नदियों के नाविकों को 100 दाम से लेकर 500 दाम तक मासिक वेतन दिया जाता था।[24]

अकबर के शासनकाल में नाव से सामान ले जाने तथा नदी पार करने के लिये जो कर लिये जाते थे उनका विवरण अत्यन्त ही रोचक है। नावों पर रहने वाली दुकानों का वजन यदि 1100 मन हो तो एक रुपया प्रति कोस लिया जाता था, यदि नाव और उस पर का सामान एक ही व्यक्ति का हो तो 1090 मन तक के बोझ के लिये एक रुपया प्रति कोस लिया जाता था, यदि नाव किराये की हो और सामान दूसरे का हो तो प्रति ढाई कोस पर एक रुपया लिया जाता था। घाटों पर नदी पार करने के लिये शुल्क की दरें अलग–अलग थीं। प्रति हाथी 10 दाम, लदी गाड़ी 4 दाम, खाली गाड़ी दो दाम, लदा हुआ ऊँट एक दाम, खाली ऊँट 1/2 दाम, घोड़े तथा अन्य जानवर जो बोझ के साथ होते थे 1/2 दाम और खाली के लिये 1/4 दाम देने पड़ते थे। बाकी पशुपक्षियों एवं जानवरों के लिये 1/16 दाम लिया जाता था। एक साथ कुल 20 आदमियों के लिये एक दाम देना पड़ता था। विशेष परिस्थिति में मुफ्त नदी पार करने की भी अनुमति मिल जाती थी।

शासन की ओर से अनुभवी व्यक्तियों को नदियों के निरीक्षण के लिये नियुक्त किया जाता था। ये लम्बे चौड़े डील वाले, निर्भय, ऊँची आवाज वाले, कष्ट सहिष्णु, उत्साही, यात्रा प्रेमी एवं अच्दे तैराक होते थे एवं घाट सम्बन्धी कठिनाइयों का समाधान करना, भीड़ व बढ़ने देना, मार्ग को साफएवं सुरक्षित रखना, नावों की वहन क्षमता के आधार पर यात्रियों की संख्या निश्चित करना तथा गरीब व्यक्तियों को निःशुल्क नदी पार कराना इनके प्रमुख कार्य थे। ये लोग इस बात का भी ध्यान रखते थे कि कोई व्यक्ति नदी तैर कर न पार करे और यात्री घाटों के अतिरिक्त किसी अन्य स्थानों पर न उतारे जायें।[25]

मुगल काल में उत्तर भारत की सम्पूर्ण नदियाँ किसी न किसी सीमा तक नौपरिवहन के उद्देश्य की पूर्ति करती थीं। सिंधु नदी और उसकी सहायक मुल्तान, लाहौर तथा कश्मीर से जुड़ी हुई थीं, जिससे ऊपर से नीचे की ओर यात्रा करते समय कम समय लगता था जबकि नीचे से ऊपर की ओर यात्रा में अधिक समय लगता था।[26] भक्कर के पास रावी नदी, मुल्तान के पास झेलम, सिंधु से मिलकर बहाव की गति तेज कर देती थीं जिससे यात्रा में तेजी आ जाती थी। अबुल फजल के अनुसार लाहौर सूबे कई

नदियाँ थीं जिनके माध्यम से उत्तरी जंगलों से अच्छी किस्म की लकड़ियाँ लाई जाती थीं जो सिंधु प्रान्त के नाव एवं जहाज के कारखानों के लिये लकड़ी की आपूर्ति करती थी।[27] लाहौर कस्बा रावी के किनारे स्थित था, उसके उत्तर में काश्मीर तनिक दक्षिण में मुल्तान और उससे दक्षिण में थट्टा उसी नदी जुड़े हुये थे। इसलिये रावी नदी के माध्यम से कश्मीर, लाहौर एवं सीमित मात्रा में दिल्ली तथा आगरा तक की वस्तुएं विदेश व्यापार हेतु लाहरी बन्दरगाह तक भेजी जाती थी।[28]

आगरा प्रान्त यमुना और चंबल दोनों नदियों से जुड़ा हुआ था,[29] किन्तु नौपरिवहन के लिये यमुना नदी अधिक उपयुक्त थी, इसका मुख्य कारण यह था कि गंगा नदी से मिल जाने के बाद यमुना का उपयोग साम्राज्य के सुदूर पूर्वी भाग सोनारगांव, चटगांव तक किया जा सकता था, दूसरा कारण यह था कि चंबल की अपेक्षा यमुना में पूरे वर्ष भर पानी रहा करता था और 100 टन तक वजन की नावें सरलता से चल सकती थीं।[30] आगरा तथा उसके निकटवर्ती कस्बों से नमक, अफीम, लोहा, रुई, कारपेट, लेट और अन्य उपयोगी तैयार सामान देश के विभिन्न भागों तथा विदेशों को भेजा जाता था।[31] व्यवस्थित नौपरिवहन के कारण बंगाल और आगरा दूर होते हुये भी आर्थिक क्षेत्र में एक दूसरे पर निर्भर थे। यही कारण है कि अकबर एवं उसके बाद के मुगल शासकों ने बंगाल को अपने आधिपत्य में बनाये रखने का बराबर प्रयास किया। मुगलों के शासनकाल के दौरान सिंधु, मुल्तान, लाहौर, कश्मीर, दिल्ली, आगरा, अवध, इलाहाबाद, बिहार और बंगाल प्रान्तों में नौपरिवहनपूर्ण रूप से प्रचलित था।[32]

वैसे तो गंगा और यमुना दोनों नदियाँ नौपरिवहन के लिये सर्वाधिक उपयुक्त थीं लेकिन आज की तुलना में बंगाल की नदियाँ भी उसके लिये कम उपयुक्त नहीं थीं। स्वयं फिंच ने आगरे से बंगाल (सतगांव) तक 180 नावों के बेड़े द्वारा यात्रा की थी, जिस पर नमक, अफीम, हींग और कारपेट इत्यादि सामान लदे थे।[33] फिंच ने बनारस से पटना तक की यात्रा का बहुत ही रोचक विवरण प्रस्तुत किया है, साथ ही उसने स्वीकार किया है कि आगरा से बंगाल तक पहुंचने में उसे पांच माह लग गये थे, लेकिन उससे भी कम समय में पहुंचा जा सकता था।[34] उन दिनों बड़े बेड़े प्रायः सेना आदि भेजने के लिये ही तैयार कराये जाते थे। उपलब्ध आंकड़ों से ज्ञात होता है कि मुल्तान और लाहौर के लिये सिंधु नदी में अधिक वजन के साथ बड़ी नावें नहीं चल सकती थीं। लाहौर और उसके आस–पास 60 टन तथा उससे कुछ ही अधिक तक की नावें चल सकती थीं। यमुना में 100 टन तथा गंगा में 400–500 टन तक की नावें आसानी से चल सकती थीं।[35]

औरंगजेब के शासन काल में हेमिल्टन आया था। उसने जो विवरण दिया है उससे स्पष्ट है कि सिंधु नदी में 200 टन तक की नावें चल सकती थीं और उन पर जीवनोंपयोगी समस्त वस्तुएं सरलता से मिल जाती थीं उसमें पंजाब की नदियों को मछली प्राप्त करने के लिये सबसे महत्वपूर्ण बताया, कश्मीर में भी नौपरिवहन की व्यवस्था थी कुछ नावें तो कश्मीर से काबुल तक चला करती थीं। उन दिनों लाहौर से थट्टा जाने में मात्र 18 दिन का समय लगता था, जबकि थट्टा से लाहौर जाने में 6 से 7 सप्ताह का समय लगता था। परिवहन में मौसम एक प्रमुख कारक हुआ करता था। बाढ़ की भीषणता एवं हवा की दिशा दोनों नौपरिवहन को प्रभावित करती थी।[36] दक्षिण की नदियों में कृष्णा, गोदावरी तथा महानदी के कुछ हिस्सों में ही परिवहन संचालित हो पाता था। मध्य भारत की नर्मदा एवं ताप्ती नदियाँ पहाड़ी भागों से प्रवाहित होने का ग्रीष्मकाल में सूख जाने के कारण परिवहन के लिए उपयुक्त नहीं थी। ब्रह्मपुत्र और गंगा बरसात में खतरनाक हो जाती थी, लेकिन बंगाल की हुगली नदी इसके लिए बरसात में भी उपयुक्त थी।

यह एक विचित्र बात हे कि मुगलों के पास न तो कोई शक्तिशाली नौसेना थी और न ही उसका कोई मजबूत संगठन था, तो भी जहाज निर्माण उद्योग अपने पूर्ण उत्कर्ष पर था। 40 हजार से 50 हजार

तक नावें केवल बंगाल में चला करती थी।[37] 300 से 400 तक व्यापारिक जहाज कैम्बे से गोवा तथा 200 से भी अधिक गोवा से दक्षिण की ओर चलते थे जिनमें कुछ 1000 टन से भी ऊपर के होते थे और कुछ जहाज तो इतने बड़े एवं मजबूत होते थे कि उन पर हाथियों को ढोया जाता था।[38] अबुल्ल फजल ने लिखा है कि मध्य जुलाई 1594 में रावी के तट पर एक बड़ी नांव बनवाई गई जिसके ढांचे की लम्बाई 35 इलाही गज थी। उसमें 3936 साल तथा नाग के शहतीर एवं 468 मन 2 सेर लोहा लगा था। 240 बढ़ई लोहार तथा अन्य कारगरों ने काम किया था। 1000 लोगों ने उसे दस दिन में खींचकर सूखी भूमि से पानी में उतारा और लाहरी बन्दरगाह तक पहुंचाया।[39] अकबर ने दिसम्बर 1596 में एक दूसरा बड़ बजरा बनवाया। चूंकि 1594 में बने बजरे को काफी परेशानी से पानी में उतारा गया था। इसलिए इस बार एक ऐसी बड़ी नांव पर ही इस बजरे को बनवाने का निर्णय लिया गया जो 15000 मन से भी अधिक वजन ले जा सके। 37 इलाही गज लम्बे इस बजरे को बनाने में 5 माह से कुछ ऊपर समय लगा और 16338 रुपये व्यय हुए। इसे भी तैयार करके लाहरी बन्दरगाह भेज दिया गया। इस प्रकार के बड़े बजरे और नावों को परिवहन और युद्ध दोनों में प्रयुक्त किया जाता था।[40]

नांवों में जहाजों के निर्माण में अच्छी किस्म की लकड़ी का प्रयोग किया जाता था। बंगाल, आगरा, इलाहाबाद, थट्टा, लाहौर, मालाबार प्रांतों से इस प्रकार की लकड़ी की पूर्ति होती थी।[41] सुजान राय के अनुसार थट्टा नांव बनाने का एक प्रमुख केन्द्र था।[42] रायजादा छत्रमन ने 'आइन' का समर्थन करते हुए लिखा है कि केवल बंगाल में चार हजार दो सौ बड़ी नावें और चार हजार चार सौ छोटी नावें चलती थी। नौकायें चाहे बंगाल से चलती हों या मुल्तान अथवा सूरत में सभी का निर्माण स्थानीय कारखाने में होता था।[43] सूरत जहाज निर्माण का सबसे बड़ा केन्द्र था इसके अतिरिक्त श्रीनगर, लाहौर, आगरा, मुल्तान, वजीराबाद, इलाहाबाद, मुसलीपट्टम, पूलीकट, बेसीन, गोवा, भड़ोच, ड्यू, नोसारी, ढाका और चिटगांव नांव, जहाजों तथा पालकियों आदि लकड़ी के समानों के निर्माण के प्रमुख केन्द्र थे। कोरोमण्डल तट पर मादापल्लम तथा नरसापुर में जहाजों के निर्माण के साथ–साथ मरम्मत का भी कार्य होता था। इन स्थलों पर यूरोपीय यात्री एवं व्यापारी अपने जहाजों की मरम्मत तथा नये जहाजों का निर्माण करवाते थे।[44] ईस्ट इण्डिया कम्पनी के सर्जन के रूप में 1673 में डॉ0 फ्रायर हिन्दुस्तान आये थे, जो पहले मद्रास फिर बम्बई और तत्पश्चात सूरत गये उन्होंने सूरत के बन्दरगाह पर यूरोपीय जहाजों से भी बड़े जहाज देखे इस काल में ढांका, जैसोर, मछलीपट्टम, सूरत और गोवा प्रमुख जहाज निर्माण केन्द्र थे। मुगलों के कुछ जहाज 1000 टन से भी अधिक क्षमता के थे। औरंगजेब ने 4 बड़े जहाज मक्का तीर्थ यात्रा के लिये बनवा रखे थे, जिसकी वहन क्षमता 1000 टन से भी अधिक थी।[45]

फारसी स्रोतों से ज्ञात होता है कि मुगल काल में नावों और जहाजों को विभिन्न नामों से जाना जाता था। कोसा, जालिमा, घुराव, परेन्दा, बजरा, पटिला, साल्व, पाटिल, भार, बल्लम, खटगिरि, महालगिरि, पलवर और तवारी आदि नाम उल्लेखनीय थे। कोसा और जालिमा लड़ाई में प्रयुक्त होते थे जो प्रायः नदियों में चला करते थे। सवारी बड़ा जहाज था जो समुद्र में चलता था, बाकी छोटी–बड़ी नौकायें थीं जो बंगाल, बिहार और उड़ीसा की नदियों में चलती थीं। भारतीय जहाज यूरोपीय जहाजों की तुलना में कम लागत से तैयार होते थे और उनकी कार्य क्षमता भी उनसे अधिक होती थी।[46] मध्य युग में सामान्य तौर पर बड़े व्यापारिक जहाज 1500 से 2000 टन तक के, तीर्थ यात्री जहाज 500 से 1500 टन तक के, साधारण व्यापारिक जहाज 400 टन तक के और अन्य औसत दर्जे के जहाज 200 टन तक के होते थे। बन्दरगाहों में इधर–उधर सामान पहुंचाने वाली छोटी–छोटी नौकायें होती थीं जिनकी वहन क्षमता 60 टन तक होती थी।[47]

मुगलों ने सिंध, गुजरात, काठियावाड़ तथा खानदेश जीतकर जब अपने साम्राज्य में मिला लिया तो वे समुद्र से सीधे सम्पर्क में आ गये। उन हिस्सों से जुड़े हुये बन्दरगाह भी मुगलों के अधिकार में चले गये जिनकी देखरेख और सुरक्षा के लिये 'मतसद्दी' नामक एक अधिकारी की नियुक्ति, जो न केवल बन्दरगाह की सुरक्षा करता था बल्कि मुगल शासन के लिये सभी प्रकार के शुल्क का निर्धारण एवं उसकी वसूली की भी व्यवस्था करता था।

नौपरिवहन को अधिक प्रभावशाली बनाने तथा यात्रियों को सुविधाएं देने के लिये मुगल शासकों ने पूरा प्रयास किया लेकिन तब भी स्थानीय जमींदारों का सहयोग न मिलने के कारण पूर्ण सफलता नहीं मिल पाई। पूर्वी तट के बन्दरगाहों से छोटी–छोटी नौकायें भी स्वतंत्र रूप से व्यापार कर लेती थीं जबकि पश्चिमी तट समुद्री लुटेरों के भय से व्यापार के लिये अधिक खतरनाक था इसलिये पश्चिमी क्षेत्र में सुरक्षा की पूर्ण व्यवस्था के बाद ही व्यापारिक जहाजों का गमनागमन हो पाता था। आवश्यकता अनुसार बड़े–बड़े काफिले बनाकर व्यापारिक जहाज चलते थे। पुर्तगाली कोचीन से गोवा तक तथा गोवा से बम्बई तक जल मार्गों एवं बन्दरगाहों की रक्षा करते थे। बंगाल, कोरोमण्डल तथा मलक्का आदि क्षेत्रों से आने वाले जहाज श्रीलंका के पास एकत्र होते थे, जिन्हें सुरक्षा प्रदान करके कोचीन पहुँचाया जाता था।[48] हेमिल्टन के अनुसार सम्पूर्ण फारस की खाड़ी के बन्दरगाह आरक्षित थे। समुद्री डाकू जहाजों को लूट लेते थे अथवा जबरदस्ती पैसा वसूल करते थे।[49]

व्यापारिक सुविधा से परिपूर्ण होने के बावजूद पूर्वी तट की तुलना में पश्चिमी तट का व्यापार अधिक समृद्ध था। इसका कारण यह था कि पश्चिमी तट पर विदेशियों का जमाव अधिक था, इसलिये उधर से विदेश व्यापार की संभावनाएँ भी अधिक थीं। मुगल सम्राटों ने व्यापारिक प्रतिबंधों को समाप्त करके अधिक से अधिक सुविधाएं प्रदान करने के लिये समय–समय पर फरमान जारी किये। अकबर ने 1004 हिजरी में गुजरात के गर्वनर के नाम एक फरमान जारी करके समस्त हाकिमों को यह आदेश दिया था कि अहमदाबाद और सिद्धपुर के व्यापारियों को परेशान न किया जाय। जहांगीर ने भी 1019 हिजरी में इससे सम्बन्धित एक फरमान जारी किया था।[50] इसी प्रकार औरंगजेब ने क्रमशः 1075 हिजरी, 1077 हिजरी तथा 1078 हिजरी में फरमान जारी किया था।

नौपरिवहन से सम्बन्धित उपर्युक्त तथ्यों का निरीक्षण करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि मुगल भारत में नाव एवं जहाज उद्योग अपने उत्कर्ष पर था और स्थल मार्गों की तुलना में नौपरिवहन अधिक लोकप्रिय था, क्योंकि पहले तो जलमार्गों से यात्राएँ कम खर्च में अधिक दूरी तक की जा सकती थीं और दूसरे ये यात्राएं बरसात के मौसम को छोड़कर अन्य सभी मौसमों में अधिक सुखद और सुरक्षित होती थीं। यूरोपीय व्यापारियां के आगमन से भारतीय नौपरिवहन में कुछ परिवर्तन हुये। डच, पुर्तगाली और अंग्रेजों ने अच्छे जहाजों तथा वैज्ञानिक उपकरणों के माध्यम से अपनी ओर अधिक आकृष्ट किया। इससे भारतीय जहाज उद्योग को गहरा आघात लगा जिसका प्रभाव धीरे–धीरे भारतीय नौपरिवहन पर भी पड़ा। यूरोप वालों का भारतीय नौपरिवहन पर उत्तरोत्तर प्रभुत्व कायम होता गया और इस क्षेत्र में उनकी इतनी धाक जम गई कि उनके सहयोग के बिना विदेशी व्यापार संभव नहीं रहा।

संदर्भ ग्रन्थ सूचीः

1. राधा कुमुद मुकर्जी, इण्डियन शिपिंग, पृ.–3
2. लूसियन फेवरः ए ज्योग्राफिकल इन्ट्रोडक्शन टू हिस्ट्री, टी0डब्ल्यू होल्डरनेस, पिपुल्स एण्ड प्रोब्लेम्ब ऑफ इण्डिया, पृ.–8
3. आर0सी मजुमदार : वैदिक एज पृ0 248 एवं 400
4. डॉ0 बी0एस0 अग्रवाल : इण्डिया ऐज नोन टू पाणिनि, पृ0 155–156
5. ए0पी0 चक्रवर्तीः ट्रेड एण्ड कार्म इन एसिएंट इण्डिया पृ0 246, आर0के0 मुकर्जी : चन्द्रगुप्त मौर्य एण्ड हिज टाइम्स, पृ0 208
6. आर0एस0 शर्मा : लाइट ऑन अर्ली इण्डियन सोसायटी एण्ड इकोनामी, पृ0 68
7. डी0सी0 सरकार : अर्ली इण्डियन ट्रेड एण्ड इंडस्ट्री पृ0 41
8. कावेल : जातक स्टोरीज भाग–4, पृ0 12, 90
9. पी0शरणः दी प्रोविंशियल गवर्नमेण्ट ऑफ दी मुगल्स, पृ0–8
10. वही पृ0 34–35
11. मोर लैण्ड : इण्डिया ऐट दी डेथ ऑफ अकबर, पृ0 159–60
12. मार्को पोलो : ट्रेवल्स ऑफ मार्को पोलो (मार्स डेन द्वारा अनुदित एवं संपादित) पृ0 191–96
13. अबुल फजल : अबर नामा भाग–3, पृ0 282
14. कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया भाग–4, पृ0 14 से उद्धृत
15. ख्वान्दमीर : हुमायूँ नामा (पाण्डुलिपि) पृ0 51 अनु0 डॉ0 वेनी प्रसाद पृ0 36
16. वही, हुमायूँ नामा (पाण्डुलिपि) पृ0 52 अनु0 डॉ0 वेनी प्रसाद पृ0 37,
17. ख्वान्दमीर : हुमायूँ नामा (पाण्डुलिपि) पृ0 6 अनु0 डॉ0 वेनी प्रसाद पृ0 43
18. वही पृ0 64 एवं 44
19. अबुल फजल : अकबर नामा, बेबरीज भाग–1, पृ0 648, पाद टिप्पणी संख्या–2
20. वही (फारसी) भाग–1, पृ0 360 बेबरीज भाग–1, पृ0 648
21. अबुल फजलः आइन–ए–अकबरी, भाग–1, ब्लाकमैन, पृ0 389
22. एस0एस0 कुलश्रेष्ठ : दी डेवलपमेन्ट ऑफ ट्रेड एण्ड इन्डस्ट्री अण्डर दी मुगल्स (1526–1707) पृ0 165
23. अबुल फजलः आइन–ए–अकबरी, भाग–1, ब्लाकमैन, पृ0 389–90
24. वही पृ0 390–92
25. अबुल फजलः आइन–ए–अकबरी, भाग–1, ब्लाकमैन, पृ0 289–92
26. सर थामस रो : दी एम्बेसी ऑफ सर थामस रो टू दी कोर्ट ऑफ

मुगल (1615–1619) पृ0 113, 440
27. अबुल फजलः आइन–ए–अकबरी, भाग–2, ब्लाकमैन, पृ0 215–16
28. एच0के0 नकवी : आर्बनाइजेशन एण्ड अर्बन सेण्टर्स अण्डर दी ग्रेट मुगल्स, पृ0 74–75
29. अबुल फजलः आइन–ए–अकबरी, भाग–2, ब्लाकमैन, पृ0 190
30. सी0एस0 फॉरेस्ट : इण्डिया, पास्ट एण्ड प्रजेन्ट पृ0 162
31. एफ0 पल्सर्टः जहाँगीर्स इण्डिया, पृ0 9 आर0 फिंचः इग्लैण्डस पानियर टू इण्डिया पृ0 100
32. नकवीः आर्बनाइजेशन एण्ड अर्बन सेण्टर्स अण्डर दी ग्रेट मुगल्स, पृ0 74–75
33. विलियम फॉस्टर : अर्ली ट्रेवल्स इन इण्डिया, पृ0 18, आर0फिंच इंग्लैण्डस पायनियर टू इण्डिया पृ0 100
34. विलियम फॉस्टर : अर्ली ट्रेवल्स इन इण्डिया, पृ0 24
35. वही, पृ0 161–162
36. पिंकर्टन वोयजेज (कलेक्शन्स) अलेक्जेन्डर हेमिल्टन (1688–1723), वाल्यूम 8 पृ0 307
37. पी0एन0 चौपड़ा, बी0एन0 पूरी और एम0एन0 दासः ए सोशल कल्चरल एण्ड इकोनामिक हिस्ट्री ऑफ इण्डिया भाग–2, पृ0 103
38. अबुल फजल : अकबर नामा भाग–3, पृ0 82–83 और 85–86
निजामुद्दीन अहमदः तबकात–ए–अकबरी भाग–2, पृ0 284
39. अबुल फजल : अकबर नामा भाग–3, पृ0 651–52
40. वही पृ0 715
41. एस0एस0 कुलश्रेष्ठ : दी डेवलपमेण्ड ऑफ ट्रेड एण्ड इण्डस्ट्री अण्डर दी मुगल्स, पृ0 100
42. सुजान राय : खुलास–उत–तवारीख (पाण्डुलिपि) पृ0 36
43. रायजादा छत्रमनः चहार गुलशन (पाण्डुलिपि) पृ0 40
44. चौपड़ा, पुरी एवं दास : पृ0 103
45. जे0टी0 व्हीलर और एम0 मैकमिलन : यूरोपियन ट्रेवेलर्स इन इण्डिया पृ0 57, 60
46. पुरी, चौपड़ा एवं दास : पृ0 103
47. मोर लैण्ड : इण्डिया ऐट दी डेथ ऑफ अकबर पृ0 191
48. वही पृ0 224–25
49. व्हीलर एण्ड मैकमिलनः पृ0 68
50. अली मुहम्मद खां : मिरात–ए–अहमदी (पाण्डुलिपि) पृ0 291

JSECR, Vol. 7, No. 15, July.-Dec., 2021 **ISSN : 2394-2878**
Impact Factor : 6.125(IIFS) Peer Reviewed Journal

सामाजिक परिप्रेक्ष्य में साइबर क्राइम

डॉ0 प्रतिभा
असिस्टेंट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग
डा0 राममनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय,अयोध्या

सारांश–

जनरीतियों और सामाजिक व्यवहारों के विपरीत किया जाने वाला व्यवहार अपराध की श्रेणी में आता है, जिससे सामाजिक आदर्श और संरक्षित मूल्य विघटित हो जाते हैं। हर एक समाज में अपराध और अपराधी पाये जाते हैं, चाहे वह समाज आदिम हो या आधुनिक, शिक्षित हो या अशिक्षित। अपराध समय और परिस्थितियों के अनुकूल होता है इसलिए अपराध की व्याख्या में भी भिन्नता पाई जाती है–उदाहरण के रूप में बलात्कार को अनेक देशों में इसे एक छोटी सी भूल के रूप में स्वीकार किया जाता है, जबकि भारतवर्ष में यह जघन्य अपराध है। भारतवर्ष में सती प्रथा एक रूढ़ी थी, किन्तु आज ऐसी क्रिया अपराध की श्रेणी में आती है।

'अपराध' अंग्रेजी के शब्द 'क्राइम' का हिन्दी अनुवाद है। अंग्रेजी का 'क्राइम' शब्द लैटिन भाषा के 'क्रिमेन' शब्द से बना है। जिसका अर्थ है– अलगाव। साधारण बोल–चाल की भाषा में अपराध एक ऐसा कार्य है जो व्यक्ति का सामाजिक अलगाव उत्पन्न करता है; दूसरे शब्दों में जिसे समाज स्वीकार नहीं करता।

सदरलैंड का मत है कि ''अपराध सामाजिक दृष्टिकोण से संबंधित है। अपराधी–कानून का उल्लंघन करने वाला व्यवहार ही अपराधी–व्यवहार है।''

लैंडिस तथा लैंडिस के अनुसार ''अपराध वह क्रिया है जिसे राज्य ने सामुहिक कल्याण के लिए हानिकारक घोषित किया है और जिसके लिए राज्य दण्ड देने की शक्ति रखता है।''

इलियट और मेरिल के मतानुसार ''जब किसी व्यक्ति का आचरण असामाजिक ठहराया जाता है तो उसका आचरण उस मान्य आचरण से, जो उस समुह के द्वारा उस स्थिति में निश्चित होता है, भिन्न होता है।''

सरल शब्दों में ''अपने समाज की रीतियों और परंपराओं को तोड़ना ही सामाजिक दृष्टि से अपराध है।''

औद्योगीकरण और नगरीकरण में तीव्र वृद्धि के कारण आज अपराध के विविध रूप सामने आ रहे हैं, जिसमें से साइबर अपराध पूरी दूनिया के सामने एक ज्वलन्त समस्या लेकर आया है। वैज्ञानिक तथा प्रौद्योगिक विकास आज अपने चरम पर है। इस समय संचार की क्रांति ने पूरे विश्व को एक वैश्विक गांव के रूप में बदल दिया है। कम्प्यूटर तकनीकी की सहायता से हम कुछ क्षणों में ही दुनिया भर में कहीं भी, कभी भी संदेशों का आदान–प्रदान कर सकते हैं, सभी तरह की सुचनाएं प्राप्त कर सकते हैं तथा संसार के किसी भी देश में रहने वाले व्यक्ति को देखते हुए उससे बात–चीत कर सकते हैं। यह आधुनिकता की दिशा में होने वाली एक ऐसी उपलब्धि है जिसमें प्रौद्योगिकी, औद्योगीकरण, विज्ञान, विकास आदि जीवन के सभी पक्षों को प्रभावित किया है। कम्प्यूटर से जुड़ी आधुनिक तकनीकी से व्यापक लाभ होने के साथ ही व्यापक समस्यायें भी उत्पन्न हुईं हैं, जिसने मानवाधिकारों को खतरे में डाल दिया है। इस समस्या की प्रकृति तथा किस तरह के अपराधियों से है।

समसामयिक परिदृश्य में साइबर अपराध–

साइबर अपराध का तात्पर्य कम्प्यूटर तकनीकी से जुड़ी हुई जालसाजी अथवा इलेक्ट्रॉनिक चोरी से है। यह अपराध इंटरनेट के माध्यम से किया जाता है, इसमें कम्प्यूटर तथा उससे जुड़े हुए नेटवर्क का उपयोग किया जाता है। साइबर अपराधों का सम्बन्ध उन व्यक्तियों से है जो कम्प्यूटर तकनीकी में विशेष रूप से

प्रशिक्षित होते हैं। जब कम्प्यूटर प्रौद्योगिकी में अति कुशल और मेधावी लोग अपनी दक्षता का उपयोग कम्प्यूटर के माध्यम से गबन करने, गुप्त आंकड़ों की चोरी करने, ऑनलाइन बैंकिंग के द्वारा लोगों के बैंक खाते में गड़बड़ी करने, कम्प्यूटर में वायरस डालकर उसकी मेमोरी नष्ट करने के लिए करने लगते हैं। तब इन्हीं अनैतिक कार्यों को हम साइबर अपराध कहते हैं। इसे हम निम्नांकित बिन्दूओं के रूप में समझ सकते हैं–

- सॉफ्टवेयर या डिजिटल डाटा की पायरेसी करना।
- बैंक, कम्पनी या संगठन में कार्यरत कर्मी द्वारा कर्मचारी के व्यक्तिगत डाटा को किसी अन्य को बेचना या सार्वजनिक करना।
- भारत में किसी भी प्रकार की अश्लीलता को डिजिटल रूप में बनाना।
- किसी व्यक्ति के व्यक्तिगत डाटा चुराना।
- इलेक्ट्रॉनिक डॉक्यूमेंट में छेड़छाड़ करना।
- ऑनलाइन खरीददारी में ठगी करना।
- किसी महिला/पुरूष के आपत्तिजनक फोटो विडियों को सार्वजनिक करना।
- किसी के डिजिटल लेख/पुस्तक आदि को कॉपी करना।
- किसी संगठन या कंपनी के डिजिटल कंट्रोल को अपने नियंत्रण में लेना।
- गैरकानूनी तरीके से कोई विडियो/गाना/पुस्तक आदि डाउनलोड करना।

साइबर अपराध को अनेक विद्वानों ने भिन्न–भिन्न रूपों में परिभाषित किया है–

डॉन. बी. पार्कर– ''कोई भी वह अवैधानिक कार्य जिसे पूरा करने के लिए कम्प्यूटर प्रौद्योगिकी के परिचालन का विशेष ज्ञान आवश्यक होता है, उसे हम साइबर अपराध कहते हैं।''

जेम्स ए. शयूट्जर–''ऐसे सभी अपराध जिनके लिए कम्प्यूटर अथवा उसके संगणक भागों जैसे टर्मिनल या नेटवर्क आदि का उपयोग आवश्यक होता है, उन्हें साइबर अपराध कहा जाता हैं।''

जर्मनी के अपराध अन्वेषण संघीय व्यूरो ने साइबर अपराध की बहुत व्यवहारिक परिभाषा देते हुए स्पष्ट किया है, ''साइबर अपराध अथवा कम्प्यूटर अपराध में उन सभी व्यवहारों का समावेश है जिनका लक्ष्य और साधन इलेक्ट्रॉनिक आंकड़ों को इस तरह संसाधित करना होता है जो फौजदारी अपराध के अंतर्गत आते हैं।''

उपरोक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि कम्प्यूटर तकनीकी में दक्ष व्यक्ति जब कम्प्यूटर का दूरूपयोग करके विभिन्न आंकड़ों और सामग्रीयों को अवैध, अनैतिक और अनाधिकृत रूप से संसाधित और संप्रेषित करने का काम करते हैं, तब ऐसे कार्य को कम्प्यूटर अपराध या साइबर अपराध कहा जाता है।

साइबर अपराध की महत्वपूर्ण गतिविधियां–

- अत्यधिक गुप्त और एकाकी प्रकृति।
- संगणक धोखाधड़ी।
- अपराधी प्रवृत्ति के व्यक्तियों द्वारा किया जाता है।
- अन्य अपराधों की तुलना में साइबर अपराध को पकड़ पाना बहुत कठिन होता है।
- इसका उद्देश्य लोगों को गुमराह करना होता है।
- प्रायः विभिन्न देशों के गुप्तचर संगठनों द्वारा ऐसे अपराध प्रस्तावित किये जाते हैं।

साइबर अपराध की सकीयता–

- साइबर अपराध किसी विशेष देश के द्वारा दुसरे देश की सैनिक जासुसी करना तथा रक्षा सम्बंधी सूचनाओं को एकत्रित करके एक विशेष देश में पहुंचाना जिससे कि एक पक्ष को हानि हो और दूसरे को लाभ।
- किन्हीं दो देशों के बीच राजनैतिक और आर्थिक संबंधों में टकराव उत्पन्न करने के लिए साइबर अपराध का सहारा लिया जाता है।
- साइबर अपराध प्रमुख राजनीतिज्ञों के वार्तालाप और गतिविधियों की जानकारी दूसरे राजनीतिक दल को देकर उसके हितों को हानि पहुंचाने के लिए करते हैं।
- अब यह स्पष्ट हो चुका है कि इस अपराध का एक विशेष आर्थिक उद्देश्य बड़े–बड़े इलेक्ट्रॉनिक जुआघरों की व्यवस्था तथा संचालन करना है। ऐसे अपराधों का कोई भौतिक स्थान न होने के कारण केवल कम्प्यूटर नेटवर्क पर ही बड़ी–बड़ी धनराशियों का आदान–प्रदान होता है।
- युवा पीढ़ी में विचलित व्यवहारों को प्रोत्साहन देना भी साइबर अपराधों का एक प्रमुख उद्देश्य है।
- वर्तमान युग में बहुत से साइबर अपराध इसलिए किये जाते हैं जिससे किसी लोकप्रिय नेता, उद्योगपति अथवा प्रतिष्ठत व्यक्ति के चरित्र का हनन करके उसके व्यक्तित्व के बारे में संदेह पैदा किया जा सके। इसके लिए किसी गुमनाम व्यक्ति द्वारा कम्प्यूटर की विभिन्न साइटों पर संबन्धित व्यक्ति के बारे में भ्रष्टाचार, धोखाधड़ी, घूसखोरी आदि आरोपों द्वारा उसे हानि पहुंचाने का प्रयत्न किया जाता है।

साइबर अपराध कितने प्रकार के हो सकते हैं–

साइबर अपराधों के प्रकार की कोई निश्चित सीमा नहीं है, समय के अनुसार इनका विस्तार बढ़ता ही जाता है, साइबर अपराधी कोई न कोई तरीका खोज ही लेते हैं, इसके निम्न प्रकार हो सकते हैं–

- हैकिंग
- साइबर स्टॉकिंग
- डी डॉस हमले
- फिशिंग
- बाल पोर्नोग्राफी और दुर्व्यवहार
- पहचान की चोरी
- कम्प्यूटर वायरस
- स्पैमिंग
- की लॉगिंग
- साइबर बुलिंग
- साइबर आतंकवाद
- साइबर वारफेयर
- स्पूफिंग
- डार्कनेट मार्केट

हैकिंग– इस प्रकार के अपराध में हैकर्स अक्सर प्रतिबंधित क्षेत्र में घुसकर दूसरों के महत्वपूर्ण डाटा को एक्सेस कर गोपनीयता का हनन करता है। हैकिंग के कई मामलों में आज सोशल मीडिया प्लेटफार्म का सहारा लिया जाता है जिसमें फेसबुक, ट्विटर, इंस्टाग्राम प्रमुख है।

यह अपराध, एथिकल हैकिंग से अलग है, जिसका उपयोग कई संगठन अपने इंटरनेट सुरक्षा संरक्षण की जांच के लिए करते हैं। हैकिंग में, अपराधी किसी व्यक्ति के कम्प्यूटर में प्रवेश के लिए विभिन्न प्रकार के सॉफ्टवेयर का उपयोग करता है और पीड़ित व्यक्ति को यह पता नहीं चल पाता है कि उसका कम्प्यूटर किसी अन्य व्यक्ति के द्वारा ऐक्सेस किया जा रहा है। एक हैकर उपयोगकर्ता के जानकारी के बिना उसके सिस्टम पर कई प्रोग्राम इंस्टाल कर सकता है। इस तरह के प्रोग्राम का उपयोग पासवर्ड और क्रेडिट कार्ड जैसी व्यक्तिगत जानकारी को चोरी करने के लिए भी किया जा सकता है।

साइबर स्टॉकिंग – यह एक प्रकार का ऑनलाइन उत्पीड़न है, जिसमें पीड़ित को ऑनलाइन संदेशों और मेल्स के जरिये परेशान किया जाता है। ऑनलाइन उत्पीड़न करने वाले स्टॉकर्स, पीड़ितों को जानते हैं और ऑफलाइन तरीकों का सहारा न लेकर वे इंटरनेट का उपयोग करते हैं। हालांकि, अगर वे देखते हैं कि साइबर स्टॉकिंग का वांक्षित प्रभाव नहीं हो रहा है, तो वे साइबर स्टॉकिंग के साथ–साथ ऑफलाइन स्टॉकिंग भी शुरू करते हैं।

डी डॉस हमले– इनका उपयोग ऑनलाइन सेवा को अनुपलब्ध बनाने के लिए किया जाता है और विभिन्न स्रोतों से ट्रैफिक लाकर साइट को डाउनलोड किया जाता है। बॉटनेट्स नामक संक्रमित उपकरणों के बड़े नेटवर्क को उपयोगकर्ताओं के कम्प्यूटरों पर मैलवेयर जमा करके बनाया जाता है। नेटवर्क डाउन होते ही हैकर सिस्टम को हैक कर लेता है।

यह बॉटनेट्स, हैक किये गये कम्प्यूटर से आने वाले वह नेटवर्क हैं जो रिमोट हैकर्स द्वारा बाहरी रूप से नियंत्रित किये जाते हैं। रिमोट हैकर्स इन बॉटनेट्स के जरिये स्पैम भेजते हैं या दूसरे कम्प्यूटरों पर हमला करते हैं। बॉटनेट्स का उपयोग मालवेयर के रूप में कार्य करने के लिए भी किया जा सकता है।

फिशिंग– इस प्रकार के हमले में हैकर्स उपयोगकर्ता के खातों या कम्प्यूटर तक पहुंचने के लिए उसे दुर्भावनापूर्ण ई–मेल अटैचमेंट या यू आर एल भेजता है। उन्नत तकनीक का उपयोग करने के कारण उनके मेल स्पैम के रूप में चिह्नित नहीं किये जा सकते। उपयोगकर्ताओं को भेजे गये ऐसे ई–मेल में यह दावा किया जा सकता है कि उन्हें अपना पासवर्ड बदलने की आवश्यकता है जिससे अपराधियों को निजी जानकारी का एक्सेस मिल सके।

बाल पोर्नोग्राफी और दुर्व्यवहार– यह भी एक प्रकार का साइबर अपराध है जिसमें अपराधी, बाल पोर्नोग्राफी के उद्देश्य से चैट रूम के माध्यम से नाबालिकों को अपने साथ जोड़ता है। ऑनलाइन बाल पोर्नोग्राफी को भारत में साइबर अपराध का सबसे जघन्य रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है, जो भविष्य की पीढ़ी को खतरे में डाल रहा है।

पहचान की चोरी– इसके माध्यम से साइबर अपराधी व्यक्तिगत डाटा की चोरी के रूप में पासवर्ड, बैंक के खाते के बारे में जानकारी, क्रेडिट कार्ड, डेविट कार्ड तथा अन्य संवेदनशील जानकारियां चुरा सकते हैं, इस अपराध से पूरे विश्व में हर साल लाखों लोग शिकार होते हैं।

कम्प्यूटर वायरस– कम्प्यूटर वायरस एक छोटा सा प्रोग्रामिंग सॉफटवेयर होता है, जिसे हैकर्स किसी खास उद्देश्य से काम करता है। इसका खास उद्देश्य हो सकता है, आपके कम्प्यूटर सिस्टम को स्लो/करप्ट या डाटा को डिलीट करना, डाटा चोरी करना, आपके सिस्टम को नुकसान पहुंचाना आदि।

स्पैमिंग– इंटरनेट पर कुछ काम करने के लिए कुछ नियम व कानुन होते हैं और यह नियम हर प्लेटफार्म के अलग–अलग होते हैं, जब आप किसी काम को उन नियमों को तोड़कर अवैध रूप से करते हैं तो वह स्पैम कहलाता है।

जब कोई प्रेषक अपने प्रोडक्ट का प्रमोशन के उद्देश्य से बहुत बड़ी संख्या में विज्ञापन का मेल भेजता है तो उसे स्पैम कहते हैं। यह बिना अनुमति के प्राप्तकर्ता को भेज दिया जाता है।

की लॉगिंग– ''की लॉगर'' एक ऐसा प्रोग्राम होता है, जो सभी की स्ट्रॉक्स को रिकॉर्ड करता है। एक कम्प्यूटर में ऐसा करने के लिए यूजर के इनपुट को मॉनिटर करता है और साथ में एक लॉग मेंटेन करता है। की लॉगर को हैकर्स के द्वारा आपके कम्प्यूटर में इंस्टॉल कर दिया जाता है, जिससे आपके कम्प्यूटर की सारी गतिविधि की जानकारी हैकर्स को मिलती रहे, इससे हैकर्स आपके कम्प्यूटर में किये जा रहे ऑनलाइन बैंकिंग, ऑनलाइन शॉपिंग से सम्बन्धित सारा डाटा आसानी से पता कर आपको परेशानी में डाल सकते हैं।

साइबर बुलिंग– फेसबुक जैसी सोशल नेटवर्किंग पर अशोभनीय कमेंट करना, धमकियां देना, मजाक उड़ाना या परेशान करना साइबर बुलिंग कहलाता है। अक्सर टीन एजर इसका शिकार होते हैं। यह साइबर उत्पीड़न भी कहलाता है।

साइबर आतंकवाद– सूचना–क्रांति ने विश्व को एक नये संकट एवं चुनौतियों से रूबरू कराया है। कम्प्यूटर एवं इंटरनेट के माध्यम से समाज में डर, आतंक एवं भय उत्पन्न करना साइबर आतंकवाद है।

साइबर वारफेयर– जब साइबर अपराध की गतिविधियां अंतर्राष्ट्रीय सीमा पार करके किसी अन्य देश के हितों को अपने दायरे में ले लेती है तो यह घटना साइबर वारफेयर कहलाती है।

स्पूफिंग– इंटरनेट नेटवर्क पर कोई यूजर अपनी असली पहचान छुपाकर नकली पहचान बनाकर अटैक या फ्रॉड करता है, तो उसे स्पुफिंग कहते हैं।

डार्कनेट मार्केट– इस प्रक्रिया से नशीले पदार्थ एवं ड्रग्स का अवैध आदान–प्रदान होता है। डार्क वेबसाइट सिल्क रोड ने इस क्षेत्र में बहुत बड़ा बाजार विकसित कर लिया है।

समाहार– भारत में बढ़ते साइबर अपराध निश्चित ही चिंतनीय विषय है। अपराध जगत में साइबर अपराध एक नवीन स्वरूप है। इसका इतिहास संक्षिप्त और प्रभाव अति व्यापक है, आज दुनिया के लगभग सभी विकसित और विकासशील राष्ट्र साइबर अपराध से अभिशप्त हैं, चूंकि साइबर अपराध का प्रमुख माध्यम संगणक और नेटवर्क प्रणाली है जिसके माध्यम से अपराधी पीड़ित व्यक्ति के सम्मुख गये बिना ही अपराधी कार्यों को अंजाम देते हैं। साइबर अपराध के विविध रूप, प्रकार, माध्यम एवं प्रभाव हैं किन्तु साइबर अपराध एवं अपराधी की पूर्व पहचान अति कठिन कार्य है। इस अपराध का प्रभाव बहुत ही व्यापक और विनाशकारी हो सकता है क्योंकि अधिकाधिक साइबर अपराध महत्वपूर्ण दस्तावेजों तथा बैंकिंग प्रणाली से संबंधित होते हैं साथ ही साइबर अपराधी बड़े ही तीक्ष्ण बुद्धि वाले प्रखर व्यक्तित्व के धनी होते हैं। ऐसे में इनकी पहचान करना कठिन कार्य है।

अतः साइबर अपराध किसी भी राष्ट्र के समृद्धि के दीवार की नींव को आसानी से खोखला कर देता है, अधिकाधिक साइबर अपराध राष्ट्र के हित के विरूद्ध होता है।

संदर्भ ग्रंथ–

- डॉ0 अग्रवाल जी. के. 'समाजशास्त्र' एसबीपीडी पब्लिशिंग हाउस, आगरा।
- डॉ0 बघेल डी.एस. 'अपराधशास्त्र' (2018) विवेक प्रकाशन, दिल्ली।
- महाजन एवं महाजन 'अपराधशास्त्र' (2006) विवेक प्रकाशन, दिल्ली।

- प्रो0 सिंह धर्मनाथ, डॉ0 यादव मनोज कुमार 'अपराधशास्त्र' (2014) सपना अशोक प्रकाशन, वाराणसी।
- डॉ0 आहुजा राम 'अपराध' मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ।
- प्रो0 सिंह श्यामधर 'अपराधशास्त्र के सिद्धान्त' सपना अशोक प्रकाशन, वाराणसी।
- पुलिस विज्ञान पत्रिका, अंक 142, जनवरी–जून 2020, पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो नई दिल्ली।
- पुलिस विज्ञान पत्रिका, अंक 137, जुलाई–दिसम्बर 2017, पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो नई दिल्ली।
- पुलिस विज्ञान पत्रिका, अंक 139, जुलाई–दिसम्बर 2018, पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो नई दिल्ली।
- www.drishtiias.com/cyber-crime-and-role-of-social-media

JSECR, Vol. 7, No. 15, July.-Dec., 2021 **ISSN : 2394-2878**
Impact Factor : 6.125(IIFS) Peer Reviewed Journal

अनुसूचित जाति की महिलाओं पर मनरेगा का प्रभाव

दुर्गेश कुमार पाण्डेय
शोध छात्र

सारांश

मनरेगा योजना कई उद्देश्यों को पूरा करने में कारगर हो सकती है। जैसे भारत के गाँव में रोजगार के लिए शहरों की ओर तेजी से पलायन बढ़ रहा था जिसको ध्यान में रखते हुए मनरेगा के शुरूआती से ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों तथा विशेषकर महिलाओं की एक सुअवसर प्रदान हो रहा है। साथ ही योजना के शुरूआती से शहरों के तरफ से हो रहे पलायन में कमी आयी है। मनरेगा के क्रियान्वयन से विशेष लाभ ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाओं को घर के आस–पास कार्य मिल जाते है। जिससे महिलाओं की आर्थिक स्थिति सुधार रही है तथा महिला सशक्तिकरण में भी वृद्धि हुई है। मनरेगा के क्रियान्वयन के माध्यम से तालाबों की सफाई, सड़कों की मरम्मत, वृक्षारोपण तथा स्वच्छता में भी वृद्धि हो रही है साथ ही ग्रामीण क्षेत्रों में आधार भूत कार्यों में तीव्रता आयेगी। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी का यह कथन भारत गाँवों का देश है और इसकी आत्मा गाँवो मे बसती है। गाँधी ग्रामीण विकास के प्रति लगाव, जुड़ाव एवं महत्व पर प्रकाश डालते है। ग्रामीण विकास के बिना भारत का विकास सम्भव नहीं है तो इसमें कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। देश में अधिकांश आबादी के जीवनयापन का आधार कृषि है। विकास, प्रौद्योगिकी, विज्ञान, तकनीकी जानकारी एवं उपकरणों को आम जनता तक पहुँचाने की आवश्यकता है। ग्रामीण विकास के लिए धन, कार्मिक तंत्र, सूचना प्रौद्योगिकी, साधनों की आवश्यकता है। सही उपयोग की, कार्मिक तंत्र में इच्छा शक्ति की, सूचना प्रौद्योगिकी के सही दिशा में उपयोग की एवं साधनों को सही हाथो में पहुँचाने की होती है।

भूमिका

आज पुरुष प्रधान समाज की अवधारणा भी बदल रही है तथा महिला सशक्तिकरण निरन्तर जारी है। ग्रामीण पृष्ठभूमि से जुड़ा हुआ व्यक्ति ही गाँव की वास्तविकता को जान एवं पहचान सकता है। ग्रामीण परिवेश एवं परिस्थितियों में रहा व्यक्ति वहाँ की आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक एवं अन्य समस्याओं तथा आवश्यकताओ को बेहतर जान सकता है। अनुभव एवं अनुभूत की गई परिस्थितियों का बेहतर प्रबन्धन वही व्यक्ति कर सकता है जो उनसे गुजरा हुआ होता है। ग्रामीण क्षेत्रो मे विकास कार्यो को सचंलित करने तथा आधारभूत सुविधाओ को उपलब्ध कराने के लिए स्थानीय स्वशासन आवश्यक है क्योंकि सुदूर क्षेत्रों तक फैले ग्रामीण परिवेश के कारण प्रत्येक गाँव में सरकारी कार्मिक तंत्र एवं अधिकारी तैनात नहीं होते हैं। इसलिए सभी गाँवों के विकास कार्यो को सही दिशा में संचालित करने के लिए राज्य सरकार द्वारा स्थानीय शासन की स्थापना की गई है। ग्रामीण क्षेत्रों मे विकासात्मक कार्य पंचायतीराज संस्थाओ के माध्यम से किये जा रहे हैं।

प्राचीन काल मे अनुसूचित जातिया

अनुसूचित जनजातियो कि प्रारम्भिक स्थिति में दलित या अस्पश्य जातियों का स्पष्ट प्रमाण नहीं मिलता सिन्धु सभ्यता में समाज मुख्यतया चार वर्गों में बँटा था १– विद्वान २ योद्धा ३– व्यापारी ४–श्रमजीवी। इस समय कार्यों का बँटवारा व्यक्ति विशेष के गुण के आधार पर होता था। आर्यों के आगमन के पश्चात् ऋग्वैदिक काल के अन्तिम समय में शूद्र शब्द की उत्पत्ति हुई। ऋग्वेद के नौ मण्डल प्राचीन हैं इसके बाद दसवें मण्डल की रचना हुई इसमें उल्लेख है कि विराट पुरुष से चार जातियों की उत्पत्ति हुई जो कि ब्राम्हण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र के रुप में उल्लेखित की गयी। वास्तव में इस समय भी जाति

कठोरता न के बराबर थी क्योंकि ऋग्वेद में एक ही परिवार के विभिन्न व्यक्तियों को अलग–अलग जाति के कार्य करते हुये दिखाया गया है, इससे स्पष्ट है कि इस काल में जाति व्यवस्था के स्थान पर वर्ग व्यवस्था लागू थी।

मध्यकाल में अनुसूचित जातिया

इस समय हिन्दू समाज चार वर्ण में बँटा था ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र। ब्राह्मणों का कार्य वेद, उपनिषद, भगवद्गीता का अध्ययन करना तथा क्षत्रिय, वैश्य को ईश्वर की उपासना की ओर उन्मुख करना था। इस समय ब्राह्मणों में कई वर्ग तथा उपवर्ग हो गये। जिन स्थानों पर मुस्लिम आक्रान्ताओं ने मन्दिर को नुकसान नहीं पहुँचाया वहाँ वे पुरोहिताई करते रहे तथा अन्य स्थानों पर राजाश्रम में रहकर पुरोहिताई का कार्य किया इसमें राजा को सलाह देना,राज महल के देवी–देवता की पृजा करना, शुभ मुहुर्त निकालना शामिल था। जो ब्राह्मण पुरोहिताई न अपना सके उन्होंने कृपि या अन्य प्रतिष्ठित व्यवसाय अपनाया। क्षत्रियों का कार्य युद्ध करना देश की रक्षा करना तथा शासन करना था। इस समय क्षत्रिय राजा पारस्परिक युद्धों में उलझे रहे जिससे इनकी राजनीतिक शक्ति क्षीण हो गयी तथा तुर्को ने इन्हें आसानी से पराजित कर दिया। शक्ति विहीन होने पर कुछ क्षत्रिय राना, रावत, राय के रुप में भूमिपति बने रहे तथा कुछ ने अस्त्र–शस्त्र उतार कर कृषि, वाणिज्य, व्यापार तथा अन्य अनेक जीवकोपार्जन के कार्य करने आरम्भ किये। इस समय क्षत्रियों में भी अनेक उपजातियाँ उत्पन्न हुईं।

आधुनिक काल मे अनुसूचित जातिया

मुगल साम्राज्य के पतन के बाद व्यापारी के रुप में भारत आये अंग्रेजों ने अन्य शक्तियों पुर्तगाली, डच, फ्रांसीसी को हराकर भारत में अपना साम्राज्य स्थापित किया तथा १८५७ तक लगभग सम्पूर्ण भारत पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया। इस समय भारतीय सामाजिक संगठन कमोवेश पूर्ववत् ही था परन्तु इस समय तक भारत में अनगिनत जातियाँ प्रवेश कर चुकी थीं। इस समय ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र प्रमुख जातियाँ समाज में थीं उनके कायों का बँटवारा पूर्ववत था लेकिन इस समय तक भारत की उच्च जातियों में मुसलमानों के सम्पर्क में रहने के कारण नैतिक पतन हुआ तथा वे व्यवहार में अधिक हिंसक हुए। इस कारण निम्न जातियों पर अत्याचार पहले की अपेक्षा अधिक बढ़ गये।

मनरेगा (महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारन्टी योजना)

महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारन्टी अधिनियम 2005 ने ग्रामीण विकास को नई दिशा दी है। और ग्रामीणो को वर्ष में 100 दिन के काम की गारन्टी प्रदान की है।'' ग्रामीण विकास में मीडिया की भूमिका को भी नजर अंदाज नहीं किया जा सकता है। दैनिक, साप्ताहिक, मासिक, समाचार पत्रो, इलेक्ट्रानिक मीडिया के साधनों जिनमें रेडियो, टेलीविजन, मोबाइल, कम्प्यूटर आदि की उपलब्धता से जीवन स्तर सुधार के साथ–साथ महिला साक्षरता, अनुसूचित जाति/जनजाति एवं अन्य पिछड़ी जातियों की साक्षरता में वृद्धि हुई हैं।

महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी अधिनियम का अन्तर्निहित उद्देश्य है, पंचायतीराज संस्थाओं को मजबूत बनाना और योजना के अन्तर्गत विकास के वांछित परिणाम को प्राप्त करने के लिए उन्हें केन्द्रीय भूमिका में लाना। पंचायतीराज संस्थाओं का उद्देश्य जमीनी प्रशासनिक संस्थाओं के रूप में काम करना है न कि मात्र लागू करने वाली एजेन्सी के रूप में। आदर्श रूप में इन्हें योजना के दो अन्य उद्देश्यों को पूरा करने के लिए रखा गया है–विकेन्द्रीकृत। लोकतान्त्रिक एवं सहभागितापूर्ण नियोजन एवं पारदर्शी और जवाबदेह प्रशासन। लेकिन ये उद्देश्य एक सीमा तक ही पूरे हो पाये हैं। नियोजन कमजोर है और पंचायतीराज संस्थाएं हमेशा नियोजन की क्षमता के अभाव, अधिकारों एवं जिम्मेदारियों की कम

जानकारी और बाहरी हस्तक्षेप तथा भ्रष्टाचार के कारण योजना बनाने का हिस्सा नहीं बनती। लोगों के निकट होने के बावजूद पंचायतीराज संस्थाओं में पारदर्शिता के प्रसार का अभाव स्पष्ट रूप से दिखायी देता है। कुछ मामलों में विकृत प्रोत्साहन और स्थानीय कुलीन वर्ग में अदूरदर्शिता के कारण मनरेगा का प्रयोग दीर्घकालिक सामुदायिक लाभों के लिए नहीं हो पाता। दूसरी ओर ईमानदार अधिकारियों एवं राज्य सरकार के अधिकारों के हस्तक्षेप के कारण भी लाचार की स्थिति होती है।

इन समस्याओं के बावजूद, दूसरे ग्रामीण विकास कार्यक्रमों की तुलना में महात्मा गाँधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारण्टी कार्यक्रम अब तक सबसे सफल कार्यक्रम रहा है। जब पीआरआई विना किसी बाहरी मदद के विना अथवा मदद के साथ यह जिम्मेदारी उठाने को तैयार होगी तो कई सकारात्मक विकास दिखाई देंगे। अधिनियम के अन्तर्गत पीआरआई में निहित शक्तियों से योजना का प्रयोग स्थानीय भागीदारी एवं जमीनी लोकतंत्र को मजबूत बनाने और बुनियादी ढाँचे के विकास में हो सकता है। गरीबों के बीच बढ़ती काम की माँग का पूरा न हो पाना ऐसे कार्यक्रम की आश्यकता को दर्शाता है। राज्यों में मनरेगा की कुल माँग और उच्च परिवारों में गरीबी का सांख्यिकीय तौर पर सकारात्मक सम्बन्ध दिखता है। इस सन्दर्भ में दो पहलुओं पर दृष्टिपात किया जा सकता है– प्रथम क्रियान्वयन की तात्कालिक चुनौतियों का सामना कैसे किया जाय तथा दूसरा, काम की अपूर्ण माँग पर कैसे प्रतिक्रिया दें, इसलिए इन पर अभी और भी स्पष्ट कार्य की आवश्यकता है।

मनरेगा का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में मूलभूत रोजगार गारण्टी सुनिश्चित करना है। इस अधिनियम में इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु आवश्यक परियोजनाएं चलायी गयी हैं। ये परियोजनाएं ग्रामीण विकास, रोजगार सृजन के साथ–साथ पर्यावरण संतुलन बनाये रखने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभायेंगी। अधिनियम की अनुसूची के अनुसार मनरेगा के अन्तर्गत किये जाने वाले कार्य निम्नवत् हैं–

- जल संरक्षण तथा जल संचयन।
- सूखे से बचाव के लिए वृक्षारोपण एवं वन संरक्षण।
- सिंचाई के लिए सूक्ष्म एवं लघु परियोजनाओं सहित नहरों का निर्माण।
- अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति परिवारों या भूमि सुधारों के लाभान्वितों या इन्दिरा आवास योजना के लाभान्वितों को जमीन तक सिंचाई की सुविधा पहुँचाना।
- परम्परागत जल स्रोतों के नवीनीकरण हेतु जलाशयों निकालने की व्यवस्था करना।

बाढ़ नियन्त्रण एवं सुरक्षा परियोजनाएं, जिनमें जलभराव से ग्रस्त इलाकों से जल की निकासी। गाँवों में सड़कों का व्यापक जाल बिछाना, सड़क निर्माण परियोजनाओं में आवश्यकतानुसार पुलिया का निर्माण कराना एवं आवश्यकतानुसार गाँवों के भीतर सड़कों के साथ–साथ नालियाँ भी बनवाना।राज्य सरकार के साथ परामर्श पर केन्द्र सरकार द्वारा अधिसूचित कोई भी अन्य कार्य।

मनरेगा का प्रमुख उद्देश्य ग्रामीण इलाकों में रोजगार सुनिश्चित करना है, परन्तु इसके अन्तर्गत स्वीकार्य परियोजनाओं के भली–भाँति क्रियान्वयन से विकास तथा रोजगार के सृजन के साथ–साथ पर्यावरण के क्षति को भी रोका जा सकता है। बढ़ती हुई जनसंख्या की प्रमुख समस्या खाद्यान्न की पूर्ति है। खाद्यान्न उत्पादन, औद्योगिक विकास तथा घरेलू आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु जल की माँग दिनोंदिन बढ़ती जा रही है। जल की आपूर्ति के बिना उत्पादन कार्य असम्भव है। परन्तु विकास के साथ–साथ जल के अधिक मात्रा में प्रयोग से पेयजल की भीषण समस्या उत्पन्न हो गयी है। भूमिगत जल के लगातार दोहन तथा वर्षा जल के भूमि में पर्याप्त मात्रा में अवशोषित न होने के कारण भूमि में जल स्तर लगातार घटता जा रहा है जिससे जल सम्बन्धी असन्तुलन पैदा हो गया है। वर्षा के जल का लगभग 52 प्रतिशत भाग

समुद्र में जाकर व्यर्थ हो जाता है। जल संसाधन पर्यावरण तथा पारिस्थितिकी तन्त्र को प्रभावित करने वाला महत्वपूर्ण कारक है। जलवायु, मृदा, कृषि, वनस्पति तथा जीव–जन्तु सभी इससे प्रभावित होते हैं।

अतः जल संसाधन का संरक्षण अपरिहार्य है। मनरेगा के अन्तर्गत जल संरक्षण परियोजना सम्मिलित है। इसके साथ वर्षा काल में बिना प्रयोग व्यर्थ में बह जाने वाले आवश्यक जल के संचयन पर भी जोर दिया गया है। इसके लिए बाँधों, तालाबों, नहरों आदि का निर्माण कराया जा रहा है जिससे जल संचयन करके पानी की कमी को पूरा किया जा सके। मनरेगा के अन्तर्गत जल संरक्षण परियोजना सम्मिलित है। इसके साथ वर्षा काल में बिना प्रयोग व्यर्थ में बह जाने वाले आवश्यक जल के संचयन पर भी जोर दिया गया है। इसके लिए बाँधों, तालाबों, नहरों आदि का निर्माण कराया जा रहा है जिससे जल संचयन करके पानी की कमी को पूरा किया जा सके। मनरेगा के अन्तर्गत जल संरक्षण के साथ–साथ परम्परागत जल स्रोतों के पुनर्नवीकरण हेतु जलाशयों की निकासी पर भी बल दिया गया है। इस कार्य से न केवल ग्रामीण क्षेत्र के लोगों को साफ तथा स्वच्छ जल उपलब्ध हो रहा है, बल्कि रोजगार भी मिल रहा है। अतः मनरेगा के माध्यम से ग्रामीण लोगों को स्वास्थ्य के साथ–साथ उत्पादन स्तर में भी वृद्धि होगी।

मनरेगा के अन्तर्गत बाढ़ नियन्त्रण तथा जल भराव से ग्रस्त इलाकों से पानी की निकासी व्यवस्था पर भी जोर दिया है। जल भराव के कारण भूमि में लवणों का संकेन्द्रण बढ़ता जाता है और भूमि क्षारीय हो जाती है तथा भूमि की उत्पादन क्षमता धीरे–धीरे समाप्त हो जाती है। जलभराव उत्पन्न होने का मुख्य कारण बढ़ी सिंचाई परियोजनाओं के कारण किसानों द्वारा अत्यधिक मात्रा में सिंचाई करना है। इसके अतिरिक्त नालियों आदि का अभाव भी जलभराव की समस्या उत्पन्न करता है। मनरेगा के अन्तर्गत बढ़ी सिंचाई परियोजनाओं पर जोर दिया गया है तथा गाँवों में भी सड़कों के किनारे–किनारे नाली निर्माण का प्रावधान है। सिंचाई परियोजनाओं के विकास तथा संचालन के लिए वनों की कटाई की जाती है। मनरेगा में स्वीकार्य सूक्ष्म तथा लघु सिंचाई परियोजनाएं पर्यावरण को क्षति पहुँचाए विना सिंचाई कार्य में सहयोग देकर उत्पादन में वृद्धि कर रही हैं।

मनरेगा के अन्तर्गत भूमि विकास पर भी जोर दिया गया है। इसके अन्तर्गत भूमि की उर्वरता इसमें उपस्थित पोषक तत्वों से होती है। इसकी मौलिक संरचना भी समान रूप से महत्वपूर्ण है। अनउपयुक्त कृषि पद्धति से कृषि करने में भूमि की उर्वरता कम होने लगती है। दोषपूर्ण जल प्रबन्धन के द्वारा जल भराव की समस्या बढ़ जाती है जिससे भूमि की उर्वरा शक्ति प्रभावित होती है। इसका दुष्प्रभाव कृषि के साथ–साथ अन्य वनस्पति पर भी पड़ता है। कृषि कार्य में लगातार रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशक आदि के प्रयोग से भी भूमि की उर्वरता प्रभावित होती है। अतः भूमि विकास के लिए मनरेगा के अन्तर्गत उपयुक्त कृषि प्रणाली पर भी जोर दिया गया है। रासायनिक उर्वरकों के स्थान पर जैव उर्वरकों के प्रयोग पर जोर दिया जा रहा है जिससे भूमि की उर्वरता को अक्षत बनाया जा सके तथा साथ ही साथ भूमि के भौतिक गुणों में भी सुधार किया जा सकेगा। सूखे से बचाव के लिए वृक्षारोपण तथा वन संरक्षण परियोजना को सम्मिलित किया गया है। वृक्षों का वर्षा से सीधा सम्बन्ध है। अगर वृक्ष नहीं तो सूखा अवश्यंभावी है। लगातार संरक्षण द्वारा सूखा तथा बाढ़ की समस्या को कम किया जा सकता है। विकास के नाम पर लगातार वनों की कटाई जारी है। वनों के विनाश से पारिस्थितिकी तन्त्र में असन्तुलन पैदा हो जाता है। इसलिए वनों का ह्रास भयानक पर्यावरणीय समस्याओं को जन्म देता है। वन वर्षा एवं भूमिगत जल स्तर के लिए उत्तरदायी होते हैं। वनों के कारण आर्द्रता रहती है, तापमान कम रहता है तथा बादलों का संघनन होकर बरसने में मदद करती है। वृक्षों की जड़ें भूमि की ऊपरी परत को पकड़े रहती है जो भूमि कटाव तथा भूक्षरण को रोकती है। वृक्ष के पत्ते सड़–गल कर मिट्टी में जीवांश तथा नमी प्रदान करते हैं जिससे भूमि की उर्वरता बढ़ती है। वन हवाओं की गति में अवरोधक होते हैं जिससे तेज हवाओं द्वारा उर्वर मिट्टी की क्षति नहीं हो पाती है। अति वर्षा का

अतिरिक्त जल वन की वृक्षभूमि में अवशोषित कर बाढ़ रोकने के साथ–साथ भू–जल स्तर भी बढ़ाते हैं। इसके अतिरिक्त वृक्ष पर्यावरण को भी शुद्ध रखते हैं। मनरेगा कार्यक्रम से वृक्षारोपण तथा वन संरक्षण से जुड़े होने के कारण पर्यावरण क्षय को कम करके पर्यावरण संतुलन बनाये रखने में मदद करती

मनरेगा यह उल्लेख करता है कि कार्य को ग्रामीण विकास गतिविधियों के एक विशिष्ट सेट की ओर उन्मुख होना चाहिए, जैसेः जल संरक्षण और संचयन,वनीकरण, ग्रामीण संपर्क–तंत्र, बाढ़ नियंत्रण और सुरक्षा जिसमें शामिल है तटबंधों का निर्माण और मरम्मत, आदि। नए टैंक/तालाबों की खुदाई, रिसाव टैंक और छोटे बांधों के निर्माण को भी महत्व दिया जाता है। कार्यरत लोगों को भूमि समतल,वृक्षारोपण जैसे कार्य प्रदान किये जाते हैं। महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना की शुरूआत के पीछे मकसद था कि इससे गरीब और साधन हीन ग्रामीण परिवारों को साल में कम से कम सौ दिन का रोजगार उपलब्ध करा कर उनकी जीवन यापन संबंधी मुश्किलों को कुछ कम किया जाए। मगर ठेकेदारों और बिचौलियों के चलते यह योजना अपने लक्ष्य से काफी पीछे चलती रही। फर्जी कागजात के जरिए गरीबी रेखा से ऊपर के लोगों को भी इस योजना का लाभ पहुंचाने, मजदूरी के भुगतान में देरी और धोखाधड़ी की शिकायतें आम हो गईं हैं। इससे पार पाने के कई उपाय निकाले गए। उनमें बिचौलियों और ठेकेदारों की पहुंच से दूर रखने के मकसद से मजदूरी सीधे श्रमिकों के खाते में भेजे जाने जैसे प्रावधान किए गए। मगर उसमें भी सेंध लगाई जाने लगी। यह सही है कि मनरेगा में बड़े पैमाने पर भ्रष्टाचार व्याप्त है, पर इससे पारपाने का तरीका यह नहीं हो सकता कि इस योजना को ही समाप्त कर दिया जाए। इससे बहुत सारे गरीब ग्रामीणों को रोजगार सुलभ है। अगर यह योजना बंद होजाती है तो उनके सामने जीवन यापन का संकट खड़ा हो जाएगा। कायदे से इस योजना की राह में आ गए रोड़ों को दूर करने की कोशिश होनी चाहिए। मनरेगा केअपने लक्ष्य तक न पहुंच पाने के पीछे राजनीतिक इच्छा शक्ति की कमी है। बहुतसारे लोग लंबे समय से अपनी मजदूरी के भुगतान की आस लगाए बैठे हैं, उन्हें कैसे पैसा मिले, बिचौलियों और ठेकेदारों को किस तरह जवाबदेह बनाया जाए,किस तरह इस योजना के तहत होने वाले कार्यों पर कड़ी नजर रखी जा सकेआदि पहलुओं को दुरूस्त करने को लेकर सामाजिक कार्यकर्ता और ग्रामीण विकासके विशेषज्ञ सुझाव देते रहे हैं।

संन्दर्भ ग्रंथसूची

1 जनक मीणा ''ग्रामीण विकास प्रशासन'' विवेक प्रकाशन, नई दिल्ली 2000
2 उमेश चन्द्र अग्रवाल ''ग्रामीण भारत में आधारभूत ढाँचे के विकास हेतु संचालित कार्यक्रम एवं योजना'' कुरूक्षेत्र, सूचना प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली, अगस्त 2006
3 ए.आर.देसाई ''भारत में ग्रामीण समाज'' पापुलर प्रकाशन मुम्बई, 1979,
4 रघुवंश प्रसाद सिंह ''राष्ट्रीय ग्रामीण कार्यक्रम'' कुरूक्षेत्र, सूचना प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली, 2006
5 उमेश कुमार; ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार योजनाओं पर एक नजर, कुरूक्षेत्र, अक्टूबर, 2014,
6 डॉ. एस.के. वर्मा एवं विनीता कटियार; नरेगा परियोजनाओं का पर्यावरण पर प्रभाव, कुरूक्षेत्र, दिसम्बर, 2009
7 उमेश कुमार; ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार योजनाओं पर एक नजर, कुरूक्षेत्र, अक्टूबर, 2014,
8 रघुवंश प्रसाद सिंह ''राष्ट्रीय ग्रामीण कार्यक्रम'' कुरूक्षेत्र, सूचना प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली, 2006
9 अवधेश तिवारी ''ग्रामीण विकास कार्यक्रम एवं सामाजिक परिवर्तन'' विवेक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2012
10 माथुर ललित, 'नरेगा के वायदे पर अमल' योजना भवन संसद मार्ग नई दिल्ली, (अगस्त, 2008),

JSECR, Vol. 7, No. 15, July.-Dec., 2021 **ISSN : 2394-2878**
Impact Factor : 6.125(IIFS) Peer Reviewed Journal

महामना मालवीय के धार्मिक दर्शन का समाजशास्त्रीय विश्लेषण

डॉ प्रतिमा गोंड
असिस्टेंट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग
महिला महाविद्यालय
काशी हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी

''जब मैं मालवीय जी से मिला ... वो मुझे गंगा की धारा की तरह निर्मल और पवित्र लगे। मैंने तय किया मैं उसी निर्मल धारा में गोता लगाऊंगा।'' ''महात्मा गांधी''

यूरोप में फ्रांस की राज्यक्रांति के बाद प्रायः सभी यूरोपीय देश स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व के सैद्धांतिक आधार पर राजशाहियों से मुक्त होने लगे थे। इस मुक्तनाद का स्वर ऊँचा करने वाले पश्चिमी विचारकों और नेताओं ने अपने चिंतन की दिशा राजनैतिक संघर्षों से हटकर सामाजिक चिंतन की ओर उन्मुख की। प्लेटो, रुसो, अरस्तू और मेकियावली से प्रारम्भ हुई यह श्रृंखला एशिया में आकर ही समाप्त हुई। इस तरह राजनैतिक और शैक्षिक स्तर पर उन्नति होने से सामाजिक चिंतन करने वाले विचारकों का अभ्युदय यूरोप में एशिया की तुलना में शीघ्र हुआ। निःसंदेह यूरोप से लोकतंत्र, स्वतंत्रता और समानता की हवाओं को भारत तक आने में कुछ समय लगा। अतः भारत में भारतीय समाज पर चिंतन करने वाले विचारकों का अभ्युदय उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में हुआ। भारतीय समाज इस समय राजनैतिक रुप से सुप्त, शैक्षिक रुप से पिछड़ा, धार्मिक रुप से और भी अंधविश्वासी, आर्थिक रुप से दरिद्र तथा सामाजिक रुप से भेदभाव व वैमनस्य की दासता में जकड़ा हुआ था। भारतीय सामाजिक विचारकों के लिए ये चिंता के प्रश्न थे। इन क्षेत्रों में भारतीय समाज की न्यूनताओं को दूर करने के लिए यह आवश्यक था कि भारतीय समाज के प्रत्येक पहलू पर चिंतन हो और कुछ जमीनी कार्य भी हों। भारतीय समाज पर समग्र चिंतन करने वाले विचारकों में महात्मा गाँधी का नाम तो सर्वोपरि है ही, परन्तु साथ ही उग्रवादी चिंतकों में बालगंगाधर तिलक, विपिनचंद्र पाल, लाला लाजपत राय, आदि समाजवादी चिंतकों में आचार्य नरेंद्रदेव, राममनोहर लोहिया, जयप्रकाश नारायण, आदि का नाम उल्लेखनीय है।

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध से प्रारम्भ हुए भारतीय सामाजिक चिंतन की दिशा में कार्यरत विचारकों में पंडित मदनमोहन मालवीय जी का नाम उन ऐसे चिंतकों की श्रेणी में आता है जिन्होंने भारतीय समाज पर समग्र चिंतन किया। अद्वितीय प्रतिभा के धनी पण्डित मदन मोहन मालवीय का जन्म 25 दिसम्बर, 1861 को इलाहाबाद (प्रयागराज) में हुआ था।

वे किसी वाद के अधीन नहीं थे। भारतीय समाज पर उन्होंने स्वयं अपने विशिष्ट विचार दिए। वे आधुनिक भारत की सर्वाधिक महान विभूतियों में से एक थे। वे एक महान देशभक्त, स्वतंत्रता सेनानी, विधिवेत्ता, संस्कृत, हिन्दी और अंग्रेजी के विद्वान, शिक्षाविद, पत्रकार और प्रखर वक्ता थे। मालवीय जी के असाधारण व्यक्तित्व का आधुनिक भारत की राजनीति, समाज, शिक्षा तथा संस्कृति पर गहरा प्रभाव पड़ा है। एक सामाजिक चिंतक होने के नाते मालवीय जी अपने चिंतन की सरिता समाज के समुद्र में प्रवाहित करना चाहते थे। वे लेखन को समाजसेवा का सर्वप्रमुख माध्यम मानते थे। एक पत्रकार के रूप में उन्होंने वर्ष 1907 में एक हिंदी साप्ताहिक 'अभ्युदय' की शुरुआत की, जिसे वर्ष 1915 में दैनिक बना दिया गया। इसके

अलावा उन्होंने वर्ष 1910 में हिंदी मासिक पत्रिका 'मर्यादा' भी शुरू की थी। उन्होंने वर्ष 1909 में एक अंग्रेजी दैनिक अखबार 'लीडर' भी शुरू किया था। वे कई वर्ष तक 'हिंदुस्तान टाइम्स' के निदेशक मंडल के अध्यक्ष भी रहे। उन्होंने हिन्दी दैनिक "हिन्दुस्तान" का अनेक वर्षों तक सम्पादन किया। कुछ समय तक वे "द इण्डियन यूनियन" पत्र के भी सम्पादक रहे। उन्होंने "अभ्युदय" नामक एक हिन्दी साप्ताहिक की भी स्थापना की। इसके अलावा मालवीय जी ने मर्यादा, सनातन धर्म, हिन्दुस्तान रिव्यु, स्वराज्य तथा इण्डियन पीपल जैसी तत्कालीन उत्कृष्ट पत्रिकाओं, समाचार पत्रों में अपने कला, राजनीति, इतिहास, अर्थशास्त्र, दर्शनशास्त्र, साहित्य, धर्म और समाज से सम्बद्ध उत्कृष्ट लेखों के माध्यम से भारतीय समाज को एक नवीन चिंतन से परिपूरित किया।[1] मालवीय जी केवल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सक्रिय सदस्य बनकर ही नहीं रहे बल्कि हिंदी भाषा को राजभाषा का सम्मान, समाज सुधार, पत्रकारिता, शैक्षणिक संप्रभुता और पर्यावरण की सुरक्षा के लिए श्री गणेश करने वाले अग्रदूत थे। भारतेन्दु हरिश्चंद्र के सपने "निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति कै मूल" को साकार करने का भागीरथ कार्य मालवीय जी ने ही किया। वर्ष 1937–38 में मालवीय जी को इलाहाबाद विश्वविद्यालय में दीक्षांत भाषण देने के लिए आमंत्रित किया गया था। विश्वविद्यालय के इतिहास में अभी तक दीक्षांत भाषण अंग्रेजी में ही दिए जाने की परंपरा रही। लेकिन मालवीय जी ने उस परंपरा को तोड़, हिंदी में भाषण देकर देशभक्ति का अनूठा उदाहरण पेश किया। भाषण देते समय 'सर स्पीक इन इंगलिश, वी कांट फॉलो योर हिंदी' जैसे ही श्रोताओं के बीच से यह आवाज गूंजी तो पंडित मदन मोहन मालवीय जी ने जवाब दिया "महाशय, मुझे भी अंग्रेजी बोलना आता है। शायद हिंदी की अपेक्षा मैं अंग्रेजी में अपनी बात अधिक अच्छे ढंग से कह सकता हूँ। लेकिन मैं एक पुरानी अस्वस्थ परंपरा को तोड़ना चाहता हूँ। उनकी हिंदी के प्रति संवदेनशीलता और संघर्ष से ज्ञात होता है कि आजादी के बाद कोई दूसरा महामना नहीं हुआ, जो हिंदी को देश में बाध्यकारी भाषा बना दे। महात्मा गांधी ने पंडित मदन मोहन मालवीय को 'महामना' की उपाधि दी थी। भारत के दूसरे राष्ट्रपति डॉ. एस राधाकृष्णन ने मालवीय जी को 'कर्मयोगी' का दर्जा दिया था। मालवीय जी ने भारतीय संस्कृति की जीवंतता को अक्षुण्ण बनाए रखने के लिए वर्ष 1916 ई. में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थापना की थी।

मालवीय जी का धार्मिक दर्शन

मालवीय जी का धर्म संबंधी विचार समग्रवादिता में विश्वास करता है। उन्होंने कहा था कि – घर में हमारा ब्राह्मण धर्म है, परिवार में सनातन धर्म, समाज में हिंदू धर्म, देश में स्वराज धर्म तथा विश्व में मानव धर्म।[2] मालवीय जी ने धर्म की कोई अपनी शाब्दिक परिभाषा नहीं दी है किंतु उन्होंने धर्म की शास्त्रीय व्याख्या और अर्थ को ही तार्किक दृष्टि से प्रस्तुत किया है। मालवीय जी धर्म के व्यवहारिक एवं सामाजिक पक्ष पर अधिक बल देते हैं। इनका का मानना है कि धर्म एक समाजशास्त्रीय तत्व के साथ एक व्यक्तिगत अनुभव भी है। उक्त धर्म की परिभाषा के तीन आवश्यक तत्वों में इस प्रकार अंकित किया जा सकता है– 1. क्रिया विधि 2. विश्वासों की व्यवस्था 3. व्यक्तिगत अनुभव।[3] इनके अनुसारः– "धर्म ही सारे जगत की प्रतिष्ठा मूल आधार है। संसार में प्रजाशील लोग धर्मशील पुरुष के पास पहुंचते हैं। धर्म से पाप को दूर करते हैं। धर्म में सब प्रतिष्ठित है अर्थात धर्म के मूलाधार पर सब स्थित है, इसलिए धर्म को सबसे बड़ा कहते हैं। सबसे बड़ा उपकार जो किसी प्राणी का कोई कर सकता है, वह यह है कि उसको धर्म का ज्ञान करा दे। धर्म में उसकी श्रद्धा उत्पन्न कर दे अथवा आस्था दृढ़ कर दे। संसार में धर्मदान के समान दूसरा कोई और दान नहीं है।"[4]

मालवीय जी धर्म का मंतव्य किसी संप्रदाय विशेष के धर्म से नहीं अपितु सनातन अर्थात शाश्वत शब्द का बोधक है जो संसार के सभी प्राणियों के लिए अनुकरणीय हैं। उन्होंने वेद वाक्य 'सत्य वंद' अर्थात

सत्य बोलना चाहिए–का उद्धरण देते हुए बताया है कि संसार में इस ध्रुव सत्य का कौन खंडन कर सकता है। ऐसा कौन सा धर्म है, जो सत्य बोलने की बात को ना माने। सभी लोग इसको मानते हैं और सभी शतपथ वाले धर्मावलंबी इसका अनुकरण भी करते हैं। मालवीय जी के अनुसार सभी धर्म उपयुक्त धर्म की अवधारणा को स्वीकार करते हैं। विश्व का का कोई भी धर्मावलंबी जब उक्त सत्य के परे, राग द्वेष से प्रेरित होकर संसार के विभिन्न धर्मो में भेद करता है और परस्पर द्वेष करता है तो ऐसी स्थिति में वह धर्म की मूल धारणा से हट जाता है और धारण के अर्थ से परे पशुता की ओर पहुँचकर सांम्प्रदायिक तनाव का बोध करता है। धर्म का अर्थ विश्व धर्म के अर्थ का बोधक है न कि किसी सम्प्रदाय का सीमित अर्थ व्यक्त करने वाला। अतः हम पाते हैं कि उनका धर्म से अभिप्राय मानवतावाद से है जो परंपरागत अनेक धर्मो और संप्रदायों के आधार पर विभक्त मानव समाज की पृथकता के विपरीत उनकी समन्वयवादी प्रकृति का परिचायक है।[5]

मालवीय जी के सामाजिक-धार्मिक दर्शन में समन्वय

मालवीय जी के सामाजिक दर्शन में एक देश की आत्मनिर्भरता का महत्वपूर्ण स्थान था। वे तत्कालीन भारतीय समाज की उस दशा से दुखी थे कि इस समय का भारत जैसा समृद्ध देश चाकू, कपड़े, बटन और साबुन जैसी दैनिक उपयोगी वस्तुओं के लिए इंग्लैण्ड पर आश्रित है। सन् 1881 में प्रयाग में मालवीय जी ने एक देशी "तिजारत कम्पनी" की स्थापना की, जो दैनिक उपयोग की वस्तुओं का निर्माण करती थी। हांलाकि यह मात्र छः माह की अवधि तक ही चल सकी थी। मालवीय जी का हिन्दु सभ्यता और संस्कृति के शाश्वत मूल्यों में अटूट विश्वास था और उनका यह विश्वास ही उनके जीवन तथा कार्यपद्धति का मुख्य आधार भी था।

एक ब्राह्मण परिवार में जन्म लेने के कारण मदन मोहन मालवीय जी को धार्मिक संस्कार विरासत में मिले थे। वे अत्यधिक धार्मिक विश्वासी थे। वे ईश्वर के भक्त थे और धर्म के प्रति उनके मन में जन्मजात श्रृद्धा थी। यद्यपि धर्म में किसी भी व्यक्ति की आस्था उसका नितांत व्यक्तिगत पहलू होता है, परन्तु हम ऐसा नहीं कह सकते कि इस कारण मालवीय जी के धार्मिक दर्शन का समाज पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा होगा। बल्कि मैं मानती हूं कि यदि ऐसा हम सोचते भी हैं तो निःसंदेह यह मालवीय जी के धार्मिक चिंतन के प्रति अन्याय करना ही होगा। मालवीय जी ने असँख्य धार्मिक लेख लिखे, वे अंततः समाज के लिए ही थे। "कल्याण" नामक हिन्दु धार्मिक पत्रिका उनके धार्मिक विचारों का सर्वाधिक प्रतिनिधित्व करती है। वे भारतीय समाज को धर्ममय और आस्थामय देखना चाहते थे। धर्म पर चलने का उनका मुख्य कारण यही था। मालवीय जी के धार्मिक विचारों और धार्मिक कार्यों में भी समाज का हितचिंतन निहित था। उन्होंने "गौरक्षा संघ" की स्थापना भी की थी। वे सनातन धर्म सभा, हिन्दु महासभा, हिन्दी साहित्य सम्मेलन इत्यादि अनेक संस्थाओं के बहुमुखी नेता, संचालक और प्राण थे। सन् 1932 में जब ब्रिटिश प्रधानमंत्री रेमजे मैकडानल्ड ने साम्प्रदायिक निर्णय दिया, तब मालवीय जी ने इसका मुखर विरोध किया। कई बार उनके धार्मिक विचारों को साम्प्रदायिकता से ग्रस्त दृष्टिकोण से देखा गया। लेकिन वास्तव में वे एक राष्ट्रवादी और सच्चे देशभक्त थे। लाहौर में 28 जून 1933 को दिए उनके एक भाषण में उन्होंने स्वयं कहा था कि "स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए प्रथम कदम हिन्दु तथा मुसलमानों की एकता का होना है। मैं धर्म में विश्वास रखता हूं। जब कभी भी मैं मंदिरों, मस्जिदों, गुरुद्वारों, गिरिजाघरों के सामने से गुजरता हूं, तो स्वाभाविक रुप से मेरा मस्तक झुक जाता है।" मालवीय जी महाराज का समस्त जीवन भारतवर्ष, सनातन धर्म और हिन्दु संस्कृति की सेवा में बीता। वे जीवन के प्रभातकाल से ही मानवता की रक्षा और समृद्धि की चिंता में लगे थे। धर्माधारित जीवन पवित्र, सत्य और उज्जवल होता है। धर्म पर चलने का उनका मुख्य कारण यही था। यहां हम देखते हैं कि मालवीय जी धर्म को समाज का मूल मानते हैं। वह संसार की स्थिति धर्म पर आधारित बताते हैं। यदि

प्राणीमात्र में धर्म का यथार्थ बोध हो जाए तो मानव की पशुता समाप्त हो जाए और पारस्परिक द्वंद की स्थिति भी समाप्त हो जाए। अतः संसार में सामाजिक संबंधों की निरंतरता और समन्वय हेतु मालवीय जी धर्म को आवश्यक मानते हैं तथा अपने विचारों की दृष्टि हेतु महाभारत का उद्धरण देते हुए उन्होंने कहा था कि दान प्राणीमात्र पर दया, ब्रह्मचर्य और इंद्रियों को वश में रखना, सत्य का पालन करना, प्राणियों के दुःख में सहानुभूति, धीरज और क्षमा यह सब सनातन धर्म के मूल हैं।[6] पंडित मदनमोहन मालवीय जी महाराज की उम्रभर की राष्ट्रीय और सामाजिक सेवाओं का चिरस्थायी स्मारक बनारस हिन्दु विश्वविद्यालय है। प्रारम्भ से ही उनका स्वप्न था कि एक ऐसा शुभ दिन आए जब भारतीय युवावर्ग को उच्चशिक्षा के लिए विदेश न जाना पड़े। वे यह देखकर भी द्रवित होते थे कि अन्य धर्माबलम्बी अपने धर्म के विषय में जो ज्ञान रखते हैं, विद्यार्थी अपनी समृद्ध संस्कृति के विषय में उतना ज्ञान नहीं रखते। ऐसे महान उद्देश्य की प्राप्ति के लिए कि भारतीय भी अपनी समृद्धशाली संस्कृति की अस्मिता से परिचत हों, मालवीय जी ने अथक श्रम किया। देश के कोने कोने से सहायता और धनराशि जोड़ने के लिए इस महापुरुष ने अपना सब कुछ दांव पर लगा दिया। यह थी उनकी समाज सेवा और ऐसा था मालवीय जी का सामाजिक चिंतन।

मालवीय जी के धार्मिक विचारों और धार्मिक कार्यों में भी समाज का हितचिंतन निहित था। उन्होंने "गौरक्षा संघ" की स्थापना भी की थी। वे सनातन धर्म सभा, हिन्दु महासभा, हिन्दी साहित्य सम्मेलन इत्यादि अनेक संस्थाओं के बहुमुखी नेता, संचालक और प्राण थे। सन् 1932 में जब ब्रिटिश प्रधानमंत्री रेमजे मैकडानल्ड ने साम्प्रदायिक निर्णय दिया, तब मालवीय जी ने इसका मुखर विरोध किया। कई बार उनके धार्मिक विचारों को साम्प्रदायिकता से ग्रस्त दृष्टिकोण से देखा गया। लेकिन वास्तव में वे एक राष्ट्रवादी और सच्चे देशभक्त थे। लाहौर में 28 जून 1933 को दिए उनके एक भाषण में उन्होंने स्वयं कहा था कि स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए प्रथम कदम हिन्दु तथा मुसलमानों की एकता का होना है। मैं धर्म में विश्वास रखता हूं। जब कभी भी मैं मंदिरों, मस्जिदों, गुरुद्वारों, गिरिजाघरों के सामने से गुजरता हूं, तो स्वाभाविक रुप से मेरा मस्तक झुक जाता है।

आगे ये कहतें हैं कि धर्म हर समाज और राष्ट्र की रीढ़ होती है। हमारा वर्तमान और भविष्य इस बात पर निर्भर करता है कि हमारी सामाजिक – धार्मिक जीवन पद्धति कैसी है? हमारे सीखने–सिखाने का तरीका कैसा है? हमारे शिक्षण–प्रशिक्षण का आधार क्या है? हम समाज में कैसा आदर्श प्रस्तुत करना चाहते हैं? इन सब प्रश्नों के उत्तर में महामना ने समाज की आधारशिला धर्म में ही स्थापित कर दी थी। महामना मानते थे कि यही रास्ता हमें शांति और विकास की ओर ले जाएगा और देश में सामाजिक समरसता, राष्ट्रीय एकता और विश्व बंधुत्व को बढ़ाएगा। इस राष्ट्रीय लक्ष्य के हिसाब से मालवीयजी का सामाजिक – धार्मिक जीवन दर्शन आज अधिक प्रासंगिक है।

मालवीय जी एवं अगस्त कॉम्टे के विचारों में समानता

मालवीय जी की उक्त विचारधारा पूर्णरूपेण समन्वयवादी हैं। यहां उन्होंने व्यक्ति के घर–परिवार की व्यक्तिगत भूमिका के विकास क्रम में क्रमशः संपूर्ण विश्व का विराट समग्रवादी मानव धर्म की भूमिका पर बल दिया है। उनके विचार अगस्त कॉम्टे के विचार से मिलते जुलते हैं। अगस्त कॉम्टे के अनुसार–हमें किसी धर्म विशेष का नहीं महामानव का पुजारी बनना चाहिए। प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्ति ही मानव धर्म है। सामाजिक जीवन को समझने के लिए, सामाजिक जीवन को विकसित करने वाला माध्यम और प्राणियों के जीवन को समझे बिना सामाजिक जीवन को समझा नहीं जा सकता।[7]

धर्मपूर्ण एकता, समाज की उस दशा व्यक्त करता है जो व्यक्ति तथा समाज के सदस्यों के रूप में मानव का एक विशिष्ट लक्षण है जिसमें मानव प्रकृति के सभी नैतिक तथा भौतिक निर्माणात्मक तत्व एक

सामान्य लक्ष्य की ओर अभिमुख किए जाते हैं। वस्तुतः मानव जीवन संस्कारों का पुंज मात्र है। यह विचार मालवीय जी तथा अगस्त कॉम्टे के विचारों में एकता और समन्वयवादी दृष्टिकोण व्यक्त करता है। अगस्त कॉम्टे के उपर्युक्त उदाहरण में धर्म में व्यक्ति तथा समाज के सदस्यों के रूप में मानव का विशिष्ट लक्षण निहित है। मालवीय जी ने घर में अपना धर्म ब्राम्हण धर्म, परिवार में सनातन धर्म और विश्व में मानव धर्म बताया है जो अगस्त कॉम्टे के व्यक्ति तथा समाज के सदस्यों के स्वरूप के कथन की भारतीय मानवीय भूमिका की अधिक तार्किक अभिव्यक्ति हैं। विश्व के समष्टि में मालवीय जी व्यक्ति को समन्वित कर देते हैं। ऐसे स्थल पर मालवीय जी ने 'भाव धर्म' के विराट में 'लोक' के साथ अपने व्यक्ति को समन्वित किया है। भारतीय दर्शनशास्त्र की विचारधारा के अद्वैतवाद के मतानुसार व्यष्टि समष्टि में समाहित हो जाता है। भारतीय चिंतन की समग्रता, महामना मालवीय की विचारधारा का मूल स्रोत है।

मालवीय जी एवं श्री कृष्ण के भावनाओं का एकीकरण

मालवीय जी शास्त्रों के जानकार और मानने वाले थे। उनके विचारों से शास्त्रों की आज्ञा मानना, मानव धर्म है, किंतु उनका विचार अति सुधारवादी था। वह शास्त्रों के रूढ़िवादी तार्किक नियमों में संशोधन के पक्षपाती थे। मालवीय जी ने कृष्ण का उदाहरण देते हुए लिखा है कि "कृष्ण ने कहा है कि – उत्साहपूर्वक कर्तव्य का पालन करना, सामर्थ्य भर अन्याय और अत्याचार से संग्राम करना, सत्य, दया एवं धर्म का सर्वथा सार्वभावेन समर्थन करना धर्म है।" इस परिप्रेक्ष्य में मालवीय जी और भगवान कृष्ण का धर्म मानव समाज के नियंत्रण के आवश्यक पक्ष के रूप में सामने आता है। विधि, जिन कार्यों और मानवीय आचरणों में नियंत्रण स्थापित में असफल होता है, वहां धर्म नियंत्रण के मूल रूप में निहित होने के कारण सफल हो जाता है। अतः धर्म के प्रति निष्ठा उत्पन्न करके सामाजिक नियंत्रण भी स्थापित किया जा सकता। मालवीय जी के अनुसार–जहां धर्म है वहां कृष्ण (ईश्वर) है, जहां कृष्ण है वहां विजय है।[8]

मालवीय जी ने हिंदू धर्म और सिख, जैन आदि धर्मावलंबियों में समता और एकता की बात कही है। उनके कथनानुसार धर्म ही हमारी निधि हैं। ब्राह्मण से लेकर शुद्र तक सभी हिंदू हैं। हिन्दू का अर्थ आत्मरक्षा है। विश्वनाथ का नाम लो और यह व्यवस्था कर दो कि जिस किसी जन को हिंदू धर्म के सिद्धांत पर विश्वास हो उसे हिंदू मान लिया जाए।[9]

12 नवम्बर, 1946 ई. को महामना मालवीय जी का देहावसान हो गया था। भारत सरकार ने 25 दिसम्बर 2014 को उनके 153 वें जन्मदिन पर भारत रत्न से नवाजे जाने की घोषणा की थी। अतएव पंडित मदन मोहन मालवीय को 31 मार्च 2015 को भारत रत्न (मरणोपरांत) से सम्मानित किया गया। महामना मालवीय जी का जीवन करोड़ों भारतीयों के लिए प्रेरणादायक है। भारत सदा उनका ऋणी रहेगा। सामाजिक समरसता को अक्षुण्ण बनाए रखने में महामना मालवीय को महारथ हासिल थी। अतएव हम कह सकते हैं कि पंडित मदन मोहन मालवीय सामाजिक समरसता के संवाहक थे।

निष्कर्ष

मालवीय जी ने राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के लिए एक व्यापक सिद्धांत का प्रतिपादन किया। उनका कहना था कि देश के नैतिक, बौद्धिक और आर्थिक साधनों का परिवर्धन करने के लिए लोगों में लोककल्याण और लोकसेवा की भावना उत्पन्न करना भी नितांत आवश्यक है। ब्रिटिश साम्राज्य के उस दौर में मालवीय जी ने सामाजिक न्याय और समानता पर मजबूती से अपना पक्ष रखा। अस्पृश्यता, अशिक्षा, बाल विवाह, विधवा विवाह पर खुल कर प्रहार किया। समाज की रूढ़िवादी परंपराओं का न सिर्फ विरोध किया अपितु जीवन भर उन्हें दूर करने का प्रयास करते रहे।

मालवीय जी महाराज का समस्त जीवन भारतवर्ष, सनातन धर्म और हिन्दु संस्कृति की सेवा में बीता। वे जीवन के प्रभातकाल से ही मानवता की रक्षा और समृद्धि की चिंता में लगे थे। नोआखली के नरनारियों पर होने वाले बरबर अत्याचारों ने उन्हें आकुल कर दिया था। उनका हृदय दुख, संताप और वेदना से भर गया था। इसी चिंता में फलतः वे शैय्या पर पड़ गए। अंततः सन् 1946 में भारत के प्राण, भूतल के महाप्राण, धर्म के स्तम्भ और पवित्र आचार के मूर्तिमान विग्रह पंडित मदनमोहन मालवीय जी महाराज स्वर्ग सिधार गए।

संदर्भ सूची –

1. https://www.pravakta.com
2. महामना मालवीय जी : जीवन झलकियां, पृष्ठ– 43
3. पांडेय, रवि प्रकाश. (1998). भारतीय सामाजिक विचार. वाराणसी : विजय प्रकाशन मंदिर.पृष्ठ संख्या. 389–390.
4. मालवीय जी (1961). के लेख और भाषण (भाग 1 धार्मिक) वाराणसी : प्रकाशक अखिल भारतीय मालवीय जन्मशती समारोह समिति, काशी हिंदू विश्वविद्यालय. पृष्ठ संख्या. 07.
5. मालवीय, महामना जी : जीवन झलकियाँ, पृष्ठ संख्या. 43.
6. मालवीय जी (1961). के लेख और भाषण (भाग 1 धार्मिक) वाराणसी : प्रकाशक अखिल भारतीय मालवीय जन्मशती समारोह समिति, काशी हिंदू विश्वविद्यालय. पृष्ठ संख्या. 08.
7. काम्टे, अगस्त. (1851.54). पॉजिटिव पॉलिटी. वॉल्यूम–1, अनुवादित एम मार्टिंयु बिलैडसन्स, लंदन. पृष्ठ संख्या. 32–33.
8. पांडेय, रवि प्रकाश. (1998). भारतीय सामाजिक विचार. वाराणसी : विजय प्रकाशन मंदिर.पृष्ठ संख्या. 391.
9. महामना पंडित मदनमोहन मालवीय. अ 02. पृष्ठ संख्या.109

JSECR, Vol. 7, No. 15, July.-Dec., 2021 **ISSN : 2394-2878**
Impact Factor : 6.125(IIFS) Peer Reviewed Journal

बाल्मीकि रामायण में संदर्भित् दार्शनिक तत्व

डॉ0 शालिनी सिंह,
सहायक आचार्य
दर्शनशास्त्र विभाग
डा0 राममनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय अयोध्या।

प्रस्तावना–

भारतीय संस्कृत साहित्य में सर्वप्रथम किसी कवि का नाम आता है, तो वे हैं महर्षि बाल्मीकि। लिखित रूप से संस्कृत साहित्य का प्रथम राष्ट्रीय ग्रंथ इन्हीं का मिलता है, इसलिए इन्हें आदि कवि के नाम से भी विभूषित किया गया है। भारत की अखण्डता को बनाये रखने में इनका महत्वपूर्ण योगदान रहा है। कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक भारत एक है। इसकी झलक इस आदिकाव्य में जो संस्कृत में लिखित है, विस्तृत रूप से मिलता है। इन्होंने दक्षिण के राक्षस संस्कृति एवं उत्तर के आर्य संस्कृति को अक्षुण्ण बनाने का प्रयत्न किया है। इन्होंने दोनों संस्कृतियों में मानवीय मूल्यों की स्थापना कर सम्पूर्ण भारतवासियों को राजनैतिक एवं सांस्कृतिक सूत्रों में बांधने का काम किया है। प्राचीनकाल की जीवित परम्पराओं, घटनाओं, चिंताओं, आकांक्षाओं एवं राजनैतिक भावनाओं का चित्राण करने के कारण वह प्राचीन भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति की एक बहुमूल्य निधि है। इसकी उपमा एक ऐसे पर्वत से की जा सकती है, जिसकी चोटी से हम प्राचीन आर्यों एवं अनार्यों के दार्शनिक एवं धर्मिक जीवन का सम्यक् दर्शन कर सकते हैं।

संक्षिप्त शब्द– त्रिालोकी ज्ञाता, ओंकार, त्रिविध दुखों, आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक

दर्शन का आरम्भ मानव की जिज्ञासा से हुआ और यह जिज्ञासा सर्वप्रथम दिव्य तत्वों के प्रति आविर्भूत हुई, परम सत्ता की खोज ने वैदिक ऋषियों को प्रश्न करने व उन पर चिन्तन मनन के द्वारा प्राप्त शंका समाधन ने ज्ञान दर्शन को प्राप्त किया। महर्षि की रामायण का शुभारंभ भी सोलह प्रश्नों से होता है। तपस्या और स्वध्याय में व्यस्त रहने वाले महर्षि आश्रम में विराजमान महान अतिथि परम ज्ञाता, त्रिालोकी ज्ञाता, महा तपस्वी, ब्रह्मा पुत्र मुनि नारद से जानना चाहते हैं कि इस समय इस जीव जगत में सोलह सर्वश्रेष्ठ गुणों से सम्पन्न व्यक्ति कौन है?

रामायण का प्रारम्भिक उद्घोष है –

तपः स्वध्याय निरतं तपस्वी।

उपरोक्त शब्दावली की व्याख्या से यह व्यक्त होता है कि महर्षि बाल्मीकि महानतम् पवित्र आत्माओं ब्रह्मा, विष्णु, और महेश के महान उपासक है और यह ग्रंथ उन्हीं के प्रति समर्थित है। ओंकार शब्द तीनों परमात्माओं का सम्बोधन शब्द है। महर्षि बाल्मीकि तीनों परमात्माओं का स्मरण करते हुए रामायण ग्रन्थ का आरम्भ करते हैं। उपरोक्त प्रारम्भिक शब्द महर्षि बाल्मीकि से ही सम्बन्धित है। वास्तव में तप की शक्ति के द्वारा ही तीनों लोकों यानि पृथ्वी, अन्तरिक्ष और स्वर्ग का ज्ञान प्राप्त करना सम्भव है। नारद जी को भी उनके तप की शक्ति के कारण ही वर्तमान, भूत और भविष्य का ज्ञान रहता हैं, इसलिए महर्षि बाल्मीकि जिन सोलह गुणों से सम्पन्न व्यक्ति के बारे में जानना चाहते हैं, नारद मुनि जी विचार पूर्वक उन गुणों से युक्त पुरूष का परिचय देते हुए कहते हैं कि वह दिव्य पुरूष श्रीराम हैं। जिनकी पत्नी माता सीता जी स्वयं उनके आश्रय में हैं। रामायण में परमपिता परमात्मा प्रभु श्री विष्णु, प्रजापालक परम् ब्रह्मश्री, ब्रह्माजी तथा गंगाधरी, नीलकंठ कैलाशपति भगवान श्री शंकर जी को अलौकिक एवं दिव्य महिमाओं का वर्णन प्रस्तुत कर क्रांति द्रष्टा महर्षि बाल्मीकि जीवन दर्शन का रहस्योद्घाटन करते हैं।

महर्षि बाल्मीकि जी के रामायण में कुछ दार्शनिक तत्वों का भी उल्लेख किया गया है जो कि इस पवित्र रामायण को दर्शन के तरफ भी उन्मुख करता है।

ब्रह्म

भारतीय दर्शन में 'ब्रह्म' की बहुत महत्वपूर्ण एवं व्यापक रूप में विविध धारणायें है। अथर्ववेद के अनुसार 'ब्रह्मा' यद्यपि एक है परन्तु विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न नामों एवं रूपों में इसका वर्णन करते हैं। महर्षि बाल्मीकि का विचार है कि 'सत्य ही प्राणस्वरूप शब्द ब्रह्म है सत्य में ही धर्म प्रतिष्ठित है, सत्य ही अविनाशी वेद है और सत्य से ही परब्रह्म की प्राप्ति होती है।'

सत्यमेक पदं ब्रह्म सत्ये धर्मः प्रतिष्ठितः।6
सत्यमेवाक्षया वेदाः सत्ये नावाप्यते परम्।।

तैत्तिरीय ब्राह्मण में सत्य के ज्ञान को ही ब्रह्म का ज्ञान माना गया है। '' सत्य ज्ञानमनन्त ब्रह्मा।'' बाल्मीकि जी का मानना है कि स्वाध्याय और तपस्या से समस्त प्राणियों के आश्रयभूत ;सर्वभूतानां परमब्रह्म की प्राप्ति होती है। योग वशिष्ठ में ब्रह्म ही जगत के स्वरूप में प्रकट होता है। तीनों लोक ब्रह्म में ही प्रतिष्ठित है। एक ब्रह्म अनेक प्रकार के स्वरूपों में प्रकट हो रहा है। वह अव्यय होते हुए भी सभी आकारों, शून्य–अशून्य के रूप में प्रकाशित–अप्रकाशित के रूप में प्रकट–अप्रकट रूप में विकार रहित–विकारवान् के रूप में संकल्प नगर दिवा–स्वप्न के समान जगत में प्रकट होता है।

सत्यं ब्रह्म जगच्चैकं स्थित मेकमनेकवत।7
सर्ववाससर्ववद्भाति शु(चाशु(वत् ततम्।।

विविध प्रकार की सृष्टियां ब्रह्म को वैसे ही स्पर्श नहीं करती जैसे आकाश को बादल भीगा नहीं कर सकती। दृश्यमान् जगत् न सत है, न असत, अपितु मायास्वरूप एक भ्रम मात्र है। विषयों का भोग हमेशा दुःखों को ही आमंत्रण देता है, सुख क्षणिक और नगण्य होता है। भले ही वह दूर से देखने में अच्छा न लगे। अनासक्त होने से ही सुख शांति की प्राप्ति सम्भव है। महर्षि वशिष्ठ ने राम को वेदांगों की शिक्षा देकर विभिन्न धर्मशास्त्राों में वर्णित धर्म का ज्ञान प्रदान किया।

वेदों और उपनिषदों में ब्रह्म की अवधारणा विभिन्न वाक्यों से स्पष्ट होता है, जैसे जो ब्रह्म को जान लेता है वह ब्रह्म में लीन हो जाता है ब्रह्म की प्राप्ति यहीं, इसी लोक और इसी जन्म में हो सकती है और होती भी है, ब्रह्म बनकर ही ब्रह्म को जाना जा सकता है, ब्रह्म अमात्रा, अक्षर, अद्वैत, निर्विशेष, निर्गुण, निर्विकल्प, निरूपाधि और अनिवर्चनीय है। वास्तव में ब्रह्म की व्याख्या या विवेचन न तो सम्भव है न ही सम्भव हो सकती है और। ब्रह्म के विषय में आदेश है 'नेति–नेति'।

नेति का अर्थ यही है कि ब्रह्म का वर्णन, निर्वचन, निर्देश आदि नहीं हो सकता। 'नेति–नेति' से ब्रह्म की अनिवर्चनीयता का बोध होता है, शून्यता का नहीं। उपनिषद में ब्रह्म का वर्णन दो रूपों में मिलता है : निर्गुण ब्रह्म और सगुण ब्रह्म। सगुण ब्रह्म को 'अपर' ब्रह्म और निर्गुण ब्रह्म को 'पर' ब्रह्म कहा जाता है। गुरू की अवमानना के कारण पीड़ित शिव भक्त ब्राह्मण ने महर्षि लोमष के समक्ष जिज्ञासा व्यक्त की कि वह सगुण ब्रह्म के सम्बन्ध में जानकारी देने की कृपा करे। परन्तु लोमष ऋषि ने ब्राह्मण को निर्गुण ब्रह्म के बारे में जानने की जिद् पर ऋषि लोमश क्रोधित हो उठे और उस ब्राह्मण को 'कौआ' बनने का श्राप दे दिया। ब्राह्मण ने ऋषि के श्राप को स्वीकार करते हुए पुनः अनुरोध किया कि वह सगुण ब्रह्म के ज्ञान से अवगत करा देते तो वह उनका अत्यन्त ऋणी रहता और 'कौवे' का रूप पाकर वह मुनि के आश्रम के उपर उड़ने लगा। उसी क्षण मुनि लोमष को श्रापित ब्राह्मण पर दया आयी और उसे लौटकर वापिस आने का निर्देश दिया। कौवा लौटकर जब ऋषि के समक्ष उपस्थित हुआ तो लोमष ऋषि ने उस 'कौवे' के मन में सगुण ब्रह्म के रूप में 'श्रीराम मन्त्र के जाप' का निर्देश दिया। कौवा मुनि को धन्यवाद देते हुए वहां से उड़ गया

और कुछ दूर जाकर उसने एक निर्जन स्थान में श्रीराम के मंत्र को जपना शुरू कर दिया। ये सुनकर धीरे–धीरे और पक्षी भी वहां आने लगे और कौवे से रामकथा का श्रवण करने लगे। वहीं 'कौवा' श्री गोस्वामी तुलसीदास जी के 'श्रीराम चरित मानस' में काकभुशुण्डी के रूप में प्रसिद्ध हुआ।

भारतीय दर्शन और समाज चिन्तन में व्याप्त धरणा को महर्षि बाल्मीकि ने आर्ष रामायण में निरूपित किया है। यह सामाजिक चिन्तन है 'जो होना होगा वह होगा ही'। इसी चिन्तन को महर्षि ने 'दैविक का विधान' बताकर रामायण में समावेशित किया है। विधाता ने इस सम्पूर्ण जगत की सृष्टि की है। विधता ने ही इस सारे जगत को सुख–दुख से संयुक्त किया है। यह बात साधरण लोग भी कहते हैं और जानते भी हैं। तीनों लोकों के प्राणी विधाता के विधान का उल्लंघन नहीं कर सकते क्योंकि सभी उनके अधीन है। अतः देव और उनके अद्भुत प्रभाव को सभी जानते हैं।

देव का विधान क्या है? इस संबंध में महर्षि बाल्मीकि ने स्पष्ट किया है कि 'जिसके विषय में कभी सोचा न गया हो; 'यद चिन्तयंद्ध'। वहीं कोई भी जीव ऐसा नहीं है जो उस देव के विधान को मिटा सके। सुख दुःख, भय–क्रोध, लाभ–हानि, उत्पत्ति और विनाश तथा इस प्रकार के जितने परिणाम प्राप्त होते हैं और जिनका कोई कारण समझ में नहीं आता वे सब दैव के ही काम हैं।'

सुख दुःखे भय क्रोधै लाभा लाभौ भवा भवौ।8
यस्त किंचित तथा भूतं ननू दैवस्य कर्म तत।।

जो बात बिना सोचे विचारे अकस्मात् सिर पर आ पड़ती है और आरम्भ किये हुए कार्य में विघ्न डालकर रोक दिया जाता है तथा एक नई दुविधा पूर्ण स्थिति उत्पन्न कर दी जाती है तो यह निष्कर्ष ही निकालना चाहिए कि ऐसा होना ही विधि का विधान रहा होगा। जिससे हम अनभिज्ञ थे। उग्र तपस्वी भी, ऋषि भी, देव से प्रेरित होकर अपने नियमों और धार्मिक अनुष्ठानों को मध्य में ही छोड़ बैठते हैं और काम वासना या क्रोध वश विवश होकर अपने मर्यादा से पथ भ्रष्ट हो जाते हैं। क्या इस कष्टदायक स्थितियों से उन्मुक्त होने का कोई उपाय नहीं है? महर्षि बाल्मीकि के अनुसार तात्त्विक बुद्धि के द्वारा मन को स्थिर कर मन में व्याप्त निराशा पर संयम प्राप्त किया जा सकता है और नव उत्साह सृजित कर जीवन–अभ्युदय की नई शुरूआत कर जीवन के लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सकता है।

दैव को सब कुछ मानकर हाथ पर हाथ धरे बैठने में महर्षि बाल्मीकि का विश्वास नहीं है, वे सदैव पौरूष के महत्व को समानान्तर प्रतिष्ठित करते हैं। भवगती सीता पवन पुत्री हनुमान से जानना चाहती है कि क्या राम पुरूषोचित् कार्य करते हैं? क्या वे दैव और पुरूषार्थ दोनों का आश्रय लेते हैं या केवल देव की कृपा पाने के लिए उनकी प्रार्थना ही करते हैं? माता सीता बताती हैं कि उनकी अन्तरात्मा शुद्ध है इसलिये शीघ्र ही वह रावण के बंधन से मुक्त हो जायेंगी। वह भी पुरूषार्थ के बल से। शायद यह भी विधि का विधान ही रहा होगा। आत्मा मन में विराजमान रहती है और अच्छे–बुरे कर्मों की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट करती रहती हैं। बुद्धि आत्मज्ञान का विश्लेषण कर उसके संकेतों को स्वीकार और अस्वीकार करने के लिए व्यक्ति को हमेशा प्रेषित करती रहती है।

आत्मा

'आत्मा को जानो' – यह भारतीय जीवन का दर्शन है। भारतीय दर्शन का लक्ष्य त्रिविध दुखों अर्थात् आध्यात्मिक, आदिभौतिक और आधिदैविक–इन तीन प्रकार के दुःखों का पूर्णतः नाश एवं सत् चित् आनन्द की प्राप्ति है। वृहदारण्यकोपनिषद् में मुनि याज्ञवल्क्य का मानना है कि :

आत्मा व अरे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो, मन्तव्यों निदिध्यासितव्यः।2

अर्थात् आत्मा साक्षात् अनुभव करने योग्य है और यह अनुभव श्रवण तथा निदिध्यासन के माध्यम से सम्भव है। जो कि भारतीय दर्शन का आधर है। महर्षि बाल्मीकि ने आत्मा तत्व को परमात्म तत्व से अलग माना

है। परमात्मा सर्वव्यापी, नित्य और अविनाशी है। महर्षि ने आत्मा का विवेचन नहीं किया है। उनकी मान्यता है कि ईश्वर और जीव को समान स्तर पर नहीं रखा जा सकता। यह जीव ईश्वर के समान स्वतंत्रा नहीं है। अतः इस जगत में कोई भी व्यक्ति अपनी इच्छानुसार कार्य नहीं कर सकता। समस्त संग्रहों का अन्त विनाश है, लौकिक उन्नतियों का अन्त पतन है। संयोग का अन्त वियोग है। जो रात बीत जाती है लौटकर नहीं आती है, जैसे नदी का बहता जल समुद्र में समा जाता है वहां से लौटता नहीं। आत्मा अनन्त अविनाशी है। कठ उपनिषद में एक रूपक द्वारा आत्मा का वर्णन दिया गया है। यह शरीर रथ है जिसमें इन्द्रियरूपी घोड़े जुड़ें हैं जो विषय–रूपी मार्गों पर दौड़ा करते हैं। बुद्धि रूपी सारथी मन रूपी लगाम से इन घोड़ों को हांक रहा है। आत्मा–मन–इंद्रिय से युक्त जीव इस रथ यात्राा का भोक्ता है और आत्मा इस रथ का संचालक है। शरीर का सारा कर्म आत्मा के लिए होता हैं, आत्मा ही उन्हें प्रकाशित करता है, किन्तु उनका भोक्ता अज्ञान युक्त जीव है। परिणाम जीव को ही भुगतने होते हैं। 'जितेन्द्रिय' बनना महान सद्गुण है। ऐसा दशरथ ने श्रीराम को समझाते हुए कहा कि काम–क्रोध से उत्पन्न होने वाले दुर्व्यसनों का त्याग करना सर्वथा उचित है। इसलिए जीव को आत्मा के कल्याण हेतु साधन निहित धर्म में लगाना चाहिए क्योंकि सभी व्यक्तियों की सुख प्राप्त करने की इच्छा होती है और आत्मा के कल्याण से ही परम लक्ष्य की प्राप्ति सम्भव
है –

आत्मा सुखे नियोक्तव्यः सुख आजः प्रजाः स्मृताः3

जिस व्यक्ति को आत्मा और अनात्मा का ज्ञान प्राप्त हो जाता है वह संकट पड़ने पर भी विषाद नहीं कर सकता।4 लोक में एक प्राचीन कहावत है कि अन्तकाल में सब प्राणी मोहित हो जाते हैं – उनकी सोचने–समझने की शक्ति बिल्कुल समाप्त हो जाती है। इसलिए आत्मा की शुद्धि के लिए सत्यप्रतिज्ञ सदैव प्रयत्नशील रहते हैं। अन्तकाल तक धर्म–सम्मत शुभ कर्म करने से आत्मा की पवित्रता बनी रहती है तथा जीव अपने लक्ष्य–प्राप्ति में सफल होता है। धर्म, अर्थ और काम के साथ सदाचार को प्रभु श्रीराम ने सदैव महत्ता प्रदान की।

महर्षि बाल्मीकि जी कहते हैं कि इस सृष्टि की उत्पत्ति का वृतान्त यह है कि सृष्टि के प्रारम्भ काल में सब कुछ जलमय ही था। उस जल के भीतर ही पृथ्वी का निर्माण हुआ। तदन्तर देवताओं के साथ स्वयं भू–ब्रह्मा जी प्रकट हुए। इसके बाद उन भगवान विष्णु स्वरूप ब्रह्ा ने ही वराह रूप से प्रकट होकर जल के भीतर से इस पृथ्वी को निकाला और अपने कृतात्मा पुत्रों के साथ इस सम्पूर्ण जगत के सृष्टि की रचना की। आकाश स्वरूप परम्ब्रह्मा परमात्मा से ब्रह्मा जी का प्रादुर्भाव हुआ जो नित्य, सनातन एवं अविनाशी है।5 प्रजापति बल को देने वाले हैं। मरण और अमरता उनकी छाया है, वे मनुष्यों और पशुओं के स्वामी हैं। प्रजापति देवों के एक मात्र देव हैं जिनकी महिमा से ही सागर, हिम पर्वत, धरती, आकाश और दिशायें उत्पन्न हुए। प्रजापति ही सृष्टि–यज्ञ को विस्तृत करते हैं– ऐसा ऋग्वेद के सूक्त में स्पष्ट किया गया है। यहाँ तक कि श्रीराम भगवान विष्णु के अवतार होने पर भी, इस पृथ्वी में प्रजापति ब्रह्मा जी के निर्देशों का अंततः पालन करते हुए निर्धरित आयु सीमा के पूर्ण होने पर विष्णु लोक के तल में प्रवेश करते हैं।

वशिष्ठ ऋषि द्वारा राम को उपदेश

सोलह वर्ष की आयु में तीर्थ–यात्राा के दौरान राम विरक्त की भावना से प्रभावित होने लगे एवं धन, राज्य, माता आदि का त्याग कर प्राण त्याग करने के विचार उनके मन में आने लगे थे।

किं धनेन् मिकम्बाभिः किं राज्येन् की महिया।9

इति निश्चयमापन्न प्राण त्याग परः स्थिति।।

राम की यह विलक्षण वैराग्य वृत्ति देखकर गुरू वशिष्ठ ने उन्हें 'ज्ञान–कर्म समुच्चयात्मक' उपदेश प्रदान किया। वशिष्ठ जी ने राम को इस प्रकार समझाया –

आत्म ज्ञान एवं मोक्ष प्राप्ति के लिए मनुष्य को दैनंदिनी व्यवहार एवं कर्तव्य छोड़ने की आवश्यकता नहीं है। जीवन सफल बनाने के लिए कर्तव्य निभाने की उतनी ही जरूरत है जितनी की आत्म ज्ञान की है।

उभाभ्यामेव पक्षाभ्यां यथा रवे पक्षिणाः गति।

तथैव ज्ञान कर्मभ्यां जायते परमं पदम।।

केवलात्कर्पणो ज्ञाना{न्नहि मोक्षो{मिजायते।

किन्तुभाम्यां भवे मोक्षः साध्नं तूभयं विटुः।।[10]

आकाश में घूमने वाला पंछी जिस तरह अपने दो पंखों पर तैरता है, इसी तरह ज्ञान और कर्मों का समुच्च करने से ही मनुष्य को जीवन में परम् पद् की प्राप्ति होती है। केवल ज्ञान या कर्म की उपासना से मोक्ष प्राप्ति असम्भव है। इन दोनों का समन्वय करके ही ज्ञानी लोग मोक्ष की प्राप्ति करते हैं। यद्यपि बाल्मीकि जी ने 'मोक्ष' शब्द का प्रयोग नहीं किया लेकिन इतना अवश्य कहा है कि जैसे चन्द्रमा में शोभा, सूर्य में प्रभा, वायु में गति और पृथ्वी में क्षमा नित्य विराजमान रहती है ठीक उसी प्रकार प्रभु समस्त प्राणियों को शरण देने वाले तथा उनको परम् गति प्रदान वाले हैं। सत्य ही ब्रह्म है, तथा जिस व्यक्ति को ब्रह्म का ज्ञान प्राप्त हो जाता है वह ब्रह्म का हो जाता है। अर्थात् मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है। महर्षि बाल्मीकि ने 'काल' तत्व की विश्व संचालन में महत्वपूर्ण भूमिका को स्वीकार किया है। यहां तक कि परम् ब्रह्म विष्णु के अवतार श्रीराम भी काल के निर्णयानुसार विष्णु लोक में प्रवेश करने के लिए विवश हो जाते हैं। क्योंकि लोगों की रक्षा के लिए भगवान विष्णु ने प्रतीक्षा की थी जो श्री राम द्वारा पूरी हो गयी। काल सर्व संहारकारी कर्तव्यों का पालन करता है। काल के इस रूप को पृथ्वी वासी कभी जान नहीं पाये और न ही आज तक किसी ने देखा। परन्तु काल के प्रभाव का अनुभव सभी करते हैं। काल पितामह के आदशों का पालन करता है और प्रतिनिधि के रूप में उनके निर्देशानुसार अपने दायित्वों का निर्वहन करता है। काल को सृष्टि को व्यवस्थित करने का सारा कार्यभार सौंपा गया।

भगवान ने ही ज्ञान और क्रिया शक्ति रूपी तेज काल को प्रदान किया है।

विभीषण की पत्नी सरमा ने सीता को बताया कि 'रावण के सिर पर काल नाच रहा है, इसलिए उसके मन में मृत्यु के प्रति लोभ पैदा हो गया है।'काल के अधीन आ जाने के कारण दशमुख रावण को किसी की भी हितकर मन्त्रणा रास नहीं आयी चाहे नाना माल्यवान हो या भाई कुम्भकरण या विभीषण। समस्त भूतों की गणना करने के कारण इसे काल कहते हैं। काल आदि, विनाश रहित, रूद्र और संकषर्ण है। काल स्वयं ही देव है और सृष्टि का सृजन और संहार करने वाला भी है। काल सर्वत्र एक समान है। काल ही पुरूष को इधर–उधर रस्सी से बांध कर खींचता रहता है। नियति ही जगत में सभी कार्यों का कारण है, वहीं समस्त कर्मों का साधन भी है और काल ही समस्त प्राणियों को विभिन्न कर्मों में नियुक्त करने के कारण है। सारा जगत स्वभाव के अधीन है और स्वभाव का आधार काल है। काल भी काल का उल्लंघन नहीं कर सकता। काल कभी क्षीण नहीं होता। उसको वश में करने का कोई उपाय नहीं है। धर्म, अर्थ और काम भी कालक्रम से ही प्राप्त होता है।

परलोक

परलोक की सत्ता का खण्डन असम्भव है। भारतीय शास्त्रों में कई लोको का वर्णन मिलता है। जैसे –

स्वर्ग लोक :

स्वर्ग लोक की चर्चा तो अक्सर होती रहती है लेकिन किसी विद्वान ने स्वर्ग लोक का चित्रण कभी प्रस्तुत नहीं किया । महर्षि बाल्मीकि ने भी अन्य संतों की ही तरह स्वर्ग लोक में जाने का मार्ग बतलाते हैं तथा वे स्वयं भी देव लोक आया जाया करते थे और इन्द्र की सभा में हिस्सा लिया करते थे।

सत्यं चव धर्मं च पराक्रमं च।
भूतानुकम्पां प्रियवादितां च।
द्विजातिदेवातिथिपूजनं च
पन्थानमाहुस्त्रिादिवस्य सन्तः।।11

सत्य, धर्म, पराक्रम, समस्त प्राणियों पर दया, सबसे प्रिय वचन बोलना तथा देवताओं, अतिथियों और ब्राह्मणों की पूजा करना– इन सबको संतों ने स्वर्ग लोक का मार्ग बताया है। संतों के अनुसार धर्म का स्वरूप जानकर तथा अनुकूल तर्क से उसका यथार्थ निर्णय करके एक निश्चय पर पहुँचे हुए ब्राह्मण भली–भांति धर्माचरण करते हुए स्वर्ग लोक को प्राप्त करते हैं। इस कर्म भूमि को पाकर जो शुभ कर्म हो उसका अनुष्ठान करना चाहिए। देवराज इन्द्र सौ यज्ञों का अनुष्ठान करके स्वर्ग लोक को प्राप्त हुए।

महर्षियों ने उम्र भर तपस्या करके दिव्य लोक में स्थान प्राप्त किया है। महर्षि बाल्मीकि का यहीं दार्शनिक संदेश है कि पवित्रतापूर्वक तपोनुष्ठान करते हुए ईश्वर की आराधना करना एवं अधर्म से दूर रहना, मानव को श्रेष्ठ लोक में स्थान प्रदान करने में सहायक होता है। यह नहीं, कि स्वर्गलोक में जाने पर मानव वहां सदैव विद्यमान रहने का अधिकारी हो जाता है। वास्तव में, शुभ कर्मों यानि पुण्य कर्मों पर निर्भर करता है। पुण्य समाप्त हो जाने पर, मनुष्य पुनः धरती पर पहुँच जाता है जैसा कि राजा ययाति के समस्त पुण्यों का प्रभाव समाप्त हो गया तो उन्हें पृथ्वी पर धकेल दिया गया।

परलोक के अंतर्गत अनेकों लोगों का उल्लेख मिलता है जैसे बैकुण्ठ; विष्णु लोक, ब्रह्म लोक, देव लोक, स्वर्ग लोक, सनातन लोक; जिसका सृजन ब्रह्मा जी ने श्रीराम के साथ सरयु नदी में प्रवेश करने वाले अयोध्यावासियों, वानरों, रीछों आदि के लिए किया, तथा नरक एवं पाताल लोक आदि।

जब श्रीराम मुनि शरभंग के आश्रम में गये तो उन्होंने देखा कि भगवान इन्द्र देवता अपने रथ पर मुनि के आश्रम के उपर स्थित हो मुनि शरभंग को देवलोक ले जाने की तैयारी कर रहे थे। श्रीराम को देखकर इन्द्रदेव अन्तर्ध्यान हो गये। मुनि शरभंग ने श्रीराम के दर्शन पाकर इन्द्र के साथ जाने का विचार भी त्याग दिया। मुनि शरभंग ने इन्द्रियों को वश में कर उग्र तपस्या से ब्रह्म लोक और स्वर्ग लोक आदि अक्षय शुभ लोकों पर विजय प्राप्त किया। श्रीराम के समक्ष ही मुनि ने विधिवत अग्नि की स्थापना कर मन्त्रोच्चारण पूर्वक घी की आहुति देकर उस अग्नि में प्रविष्ट होकर विभिन्न लोकों को लांघकर ब्रह्मलोक पहुँच गये जहां पर साक्षात् ब्रह्मा जी ने प्रसन्नतापूर्वक उनका स्वागत किया।

महर्षि बाल्मीकि ने इस घटना क्रम में यह तथ्य भी प्रकट किया कि धर्म परायण पुरूष श्रीराम स्वयं किसी भी समर्थ तपस्वी और धर्माचरण में श्रेष्ठ महात्मा को स्वर्ग लोक या ब्रह्म लोक की प्राप्ति करा सकते हैं।[12]

नरक :

शास्त्रों में यह मान्यता है कि पापी जीव को नरक में जाना पड़ता है जहां पर अंधेरे वातावरण में कष्टों को भोगना पड़ता है और जीव को निकृष्ट योनियों से गुजरना पड़ता है। श्री भरत अपनी माता कैकेयी को कोसते हुए कहते हैं कि उसे नरक में जाना पड़ेगा या घोर नरक प्राप्त होगा। नरक की कल्पना पूर्णतया पौराणिक है परन्तु महर्षि बाल्मिकी ने अपने महाकाव्य में नारकीय स्थिति का उल्लेख कर उसे सामाजिक शब्दावली का रूप दिया है। यह कोई नहीं जानता कि नरक क्या है और जीव को वहां कब तक समय व्यतीत करना पड़ेगा।

संदर्भः

1. वा.रा. 1/1/1
2. वृह. उप 2/4/5
3. वा.रा. 2/105/31
4. वा.रा. 2/106/5
5. वा.रा. 2/110/3, 4, 5
6. वा.रा. 2/14/7
7. योग वशिष्ठ 6/2/35/6
8. वा.रा. 2/22/22
9. यो.व. 1/10/46
10. यो. व. 1/1/7–8
11. वा.रा. 2/109/31
12. वा.रा. 3/5/33

JSECR, Vol. 7, No. 15, July.-Dec., 2021 **ISSN : 2394-2878**
Impact Factor : 6.125(IIFS) Peer Reviewed Journal

भारतीय पारिवारिक संरचना में परिवर्तन : एक समाजशास्त्रीय विवेचन

डॉ0 जयप्रकाश यादव
असिस्टेंट प्रोफेसर, समाजशास्त्र
महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ वाराणसी

सारांश

18 वीं शताब्दी में औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप आजीविका के उपार्जन तथा नये रोजगार की तलाश में लोगों को घर, परिवार को छोड़कर बाहर जाना पड़ा, परिणाम स्वरूप शताब्दियों पुराने संयुक्त परिवार का पतन होने लगा तथा एकल परिवार की अवधारणा का प्रादुर्भाव हुआ जिसमें अधिकतम पति–पत्नी एवं अविवाहित बच्चों को ही स्वीकार किया गया। वर्तमान आधुनिक समय में औद्योगिक विकास, रोजगार के अवसर, महंगाई, व्यक्तिवादिता एवं स्वच्छन्दता के कारण परिवार का स्वरूप छोटा होने लगा है। भारत जैसे विकासशील देश में तो बढ़ती जनसंख्या मुसीबत बन गई है जो सभी समस्याओं के लिए उत्तरदायी साबित हो रही है। स्थिति यह हो गयी है कि अब तो सरकार भी मीडिया के माध्यम से जनसंख्या को नियंत्रित करने के लिए "हम दो हमारे दो" तथा "छोटा परिवार सुखी परिवार" जैसे नारों के माध्यम से लोगों को परिवार का आकार छोटा रखने के लिए प्रोत्साहित कर रही है, नतीजतन जहां पहले एक दंपत्ति के पास 8 से 10 बच्चे होते थे अब बमुश्किल 1 या 2 बच्चे पर मामला सिमट जा रहा है।

मुख्य शब्द– परिवार, रोजगार, विवाह, पति–पत्नी, औद्योगिक

प्राचीन काल से भारतीय समाज में परिवार का मतलब संयुक्त परिवार ही होता था। लेकिन वर्तमान सूचना एवं प्रौद्योगिकी युग में बढ़ती महंगाई, भौतिकतावाद, व्यक्तिवाद तथा असीमित संसाधनों को प्राप्त करने की लालसा ने हमारी पारिवारिक संरचना को प्रभावित कर अनेकों समस्याओं को हमारे सामने खड़ा कर दिया है। ये समस्याएं प्रमुखतः तब और भी भयावह हो जाती हैं जब माता–पिता दोनों ही कामकाजी हों।

वर्तमान समाज को अर्थप्रधान युग कहा जाए तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी, अतः ज्यादा से ज्यादा अर्थ के अर्जन हेतु पति–पत्नी दोनों ही प्रयासरत रहते हैं। यहीं नहीं भारतीय संविधान भी स्त्री और पुरुष दोनों को समानता के अधिकार के साथ रोजगार एवं शिक्षा के अवसर प्रदान किया है। आज स्त्रियां भी पुरुषों के समान शिक्षित हो रही है तथा रोजगार को भी प्राप्त कर रही है। आज महंगाई इतनी ज्यादा बढ़ गई हैं कि घर चलाना मुश्किल हो गया है। पति की आमदनी पर्याप्त नहीं हो पा रही है घर चलाने के लिए इसीलिए महिलाएं भी रोजगार एवं कैरियर को प्राथमिकता दे रही हैं ताकि आर्थिक रूप से स्वावलंबी बनने के साथ–साथ परिवार को चलाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सके। ऐसे में सबसे बड़ी समस्या जो आती है वो है बच्चों के पालन और पोषण की क्योंकि कामकाजी माता–पिता बच्चों को सुविधाएं और पैसा तो पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध करा देते हैं लेकिन उनको देने के लिए उनके पास समय नहीं होता है। ऐसे में बच्चों का बचपना क्रैच,आया स्कूलों, प्ले स्कूलों तथा दाई आदि के सानिध्य में गुजरता है जिससे बच्चों का सही से शारीरिक व मानसिक विकास नहीं हो पाता और वे हताशा,निराशा और अकेलेपन से जूझते रहते हैं। पहले बच्चों का बचपन दादा–दादी, नाना–नानी, जैसे बड़े बुजुर्गों की छांव में बीतता था तथा ये बुजुर्ग लोग ही इन बच्चों में संस्कार के बीज बोते थे । परंतु आज स्थिति बिल्कुल उलट गई है अब बच्चों को बड़े बुजुर्गों का साथ नहीं मिल पा रहा है या वे लेना ही नहीं चाहते। अब तो वे इन बुजुर्गों के हाथों से संस्कारित होने की वजाय टीवी,सिनेमा, कंप्यूटर, मोबाइल,इंटरनेट,वीडियो गेम के माध्यम से उत्तर आधुनिक संस्कारों को ग्रहण कर रहे हैं। बच्चे सोशल साइटों पर अपना समय बर्बाद कर रहे हैं तथा स्वयं भी बर्बाद हो रहे हैं, परिणामस्वरूप उनमें आंख की समस्या एवं अनेक मानसिक विकार उत्पन्न हो रहे हैं। उनमें हिंसक प्रवृत्ति, जिद्द करने की प्रवृत्ति, लोगों की बात न मानने तथा सामंजस्य न बैठा पाने

की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है। यह यांत्रिक एवं इलेक्ट्रॉनिक दुनिया का सच है यही कारण है कि अब बड़े महानगरों के दंपत्ति बच्चों की जिम्मेदारी नहीं लेना चाहते जिस कारण परिवार में अब एक बच्चे का प्रचलन बढ़ा है या कुछ निःसंतान ही रहना चाहते हैं या अविवाहित ही रहना चाहते हैं।

वर्तमान समय में तलाकों की संख्या में भी वृद्धि हो रही है जिसका प्रभाव पारिवारिक संरचना पर पड़ रहा है। प्राचीन काल से ही हमारे भारतीय समाज में विवाह को एक पवित्र बंधन तथा जन्म जन्मांतर का संबंध माना जाता रहा है जिसे तोड़ने के बारे में कोई सोचता तक नहीं था। पहले विवाह को एक धार्मिक संस्कार माना जाता था जिसे संपन्न होने में अनेक धार्मिक अनुष्ठान होते थे लेकिन आज विवाह कानूनी और सामाजिक समझौता बन गया है। परिणाम स्वरूप आज छोटी–छोटी बातों पर पति–पत्नी का अहम टकरा रहा है और तलाक हो रहे हैं। माता–पिता अलग हो जा रहे हैं जिसका खामियाजा बच्चों को भुगतना पड़ रहा है परिणामस्वरूप बच्चे उदंड, विद्रोही तथा अनुशासनहीन हो रहे हैं। बढ़ते विवाह–विच्छेद के मामलों से समाजशास्त्री तथा मनोवैज्ञानिक चिंतित हो रहे हैं कि कैसे परिवार को टूटने से बचाया जाय तथा परिवार को एकजुट रखा जाय। आज पारिवारिक परामर्श केंद्रों की संख्या में भी निरंतर वृद्धि हो रही है जो निःशुल्क या मोटी फीस लेकर सलाह देते हैं तथा परिवार को टूटने से बचाने का उपाय बताते हैं।

आज महिला और पुरुष साथ–साथ शिक्षा एवं नौकरी कर रहे हैं जिससे विवाहेत्तर संबंधों में भी वृद्धि हो रही है जिससे ज्ञात होता है कि पति–पत्नी के बीच आपसी विश्वास एवं प्रेम की डोर कमजोर हो रही है जिसके परिणामस्वरूप विवाह–विच्छेद की घटनाएं बढ़ रही हैं तथा परिवार टूट रहे हैं।

यही नहीं आज तो समलैंगिक संबंधों को भी कानूनी मान्यता मिल गई है कई पश्चिमी देशों में तो समलैंगिक विवाह को भी मान्यता मिल चुकी है जिसकी देखा–देखी भारतवर्ष में भी समलैंगिक संबंधों को कानूनी मान्यता मिलने के बाद से समलैंगिक विवाह की मान्यता प्राप्त करने की मांग भी जोर पकड़ रही है। यानी अब विवाह नामक संस्था के सामने भी संकट खड़ा हो गया है। अभी तक हम लोग समाजशास्त्र में विवाह के बारे में जो मूलभूत परिभाषा को पढ़ते थे वह यही थी कि विवाह दो विषमलिंगियों को पारिवारिक जीवन में प्रवेश कराने की संस्था है पर जब हमारे देश में भी समलैंगिक विवाह को मान्यता मिल जाएगी तो निश्चित ही उक्त परिभाषा को बदलना पड़ेगा।

वर्तमान समय में एक बदलाव और नजर आ रहा है जिसमें बड़े–बड़े महानगरों तथा नगरों में युवक–युवतियां बिना विवाह किये साथ–साथ पति–पत्नी की तरह रह रहे हैं जिसे लिव इन रिलेशनशिप के नाम से जाना जा रहा है। इस व्यवस्था ने विवाह जैसे पवित्र रिश्ते के सामने सुरसा जैसे मुंह बाए खड़ी है जब तक मन करे पति–पत्नी की तरह साथ रहें जब मन भर जाए छोड़कर कहीं और किसी दूसरे के साथ चल दें, न विवाह का बंधन न तलाक का भय, ऊपर से मौज–मस्ती भरा आनंद भरपूर प्राप्त हो रहा है। ऐसे रिश्तों से जो परेशानी सबसे ज्यादा है वह उन बच्चों के सामने है जो ऐसे रिश्तों से पैदा हो रहे हैं उन बच्चों की जिम्मेदारी किसकी होगी ? क्या समाज उन्हें स्वीकार करेगा ?क्या कानून उन बच्चों को वे सब अधिकार प्रदान कराएगा जो एक वैध बच्चे को प्राप्त है ?क्या बच्चे समाज में और लोगों के साथ सहज महसूस करेंगे ?ऐसे बहुत सारे यक्ष प्रश्न हमारे सामने मौजूद हैं जिनका उत्तर इस समाज को ही देना होगा।

आज युवकों एवं युवतियों पर से परिवार का नियंत्रण कमजोर हुआ है जिससे वे स्वायत्त और स्वतंत्र होना चाहते हैं। उनको पढ़ने और नौकरी के लिए घर से दूर रहना पड़ता है जहां हर समय घर वालों का उनके साथ रहना संभव नहीं है। जिससे अब प्रेम विवाह तथा अंतर्जातीय विवाह में भी बढ़ोत्तरी देखने को मिलती है इससे जाति बंधनों, अस्पृश्यता तथा दहेज जैसी समस्याओं में पर्याप्त शिथिलता देखने

को मिलती है। फिर भी हमारे परंपरागत भारतीय समाज में आज भी ऐसे विवाहों को बहुत अच्छा नहीं माना जाता । यद्यपि कुछ औद्योगिक घरानों, राजनीतिक घरानों, फिल्म इंडस्ट्री या कुछ शिक्षित परिवारों में ऐसे विवाह आपसी रजामंदी से होते दिखाई तो देते हैं परंतु परंपरागत परिवारों में माता–पिता अपनी संतान का विवाह अपनी ही जाति में करना चाहते हैं। यदि ऐसे परिवारों में प्रेम विवाह या अंतर जातीय विवाह होते भी है तो बहुत कठिनाई से स्वीकृति मिलती है तो कुछ परिवार ऐसे वैवाहिक बंधनो को कतई स्वीकार नहीं करते जिसका नतीजा ऑनर किलिंग तक पहुंच जाता है या विवाह के बाद लड़के या लड़की के घरवाले उनसे कोई संबंध नहीं रखते तथा घर से बाहर भी निकाल देते हैं। अब हमारी सरकारें जब प्रेम विवाहों तथा अंतरजातीय विवाहों को भी मान्यता प्रदान कर रही है तो ऐसे लोगों के खिलाफ जो इसका विरोध करते हैं या खाप पंचायतों के खिलाफ कठोर कार्रवाई की जानी चाहिए तथा लोगों में जागरूकता बढ़ाने के प्रयास किए जाने चाहिए।

आज स्त्री शिक्षा में प्राथमिक से लेकर उच्च शिक्षा तक सुधार हुआ है जिससे उनमें जागरूकता आई है आज की पढ़ी–लिखी महिलाएं बेमेल विवाह, बाल विवाह, दहेज प्रथा तथा दबाव में आकर विवाह करने जैसे थोपे गये कृत्यों को नकार रही हैं। पहले विवाह के मामले में लड़कियों की स्वतंत्रता, स्वायत्तता एवं उनकी मर्जी का ध्यान नहीं रखा जाता था उनके माता–पिता जहां तथा जिससे चाहते थे विवाह कर देते थे परंतु वर्तमान समय में देखा जाए तो लड़कियां अपने विवाह को लेकर काफी जागरूक हो गई हैं। अब उनकी प्राथमिकता में विवाह नहीं है बल्कि शिक्षा एवं कैरियर है तथा वे कैरियर प्राप्त करने से पहले विवाह जैसे बंधनों में नहीं बंधना चाहती। वे विवाह के प्रति उदासीनता प्रदर्शित करती हैं तथा विवाह को कैरियर का अंत मानने लगी हैं। जिससे बाल विवाहों की संख्या में कमी आई है तथा विवाह की उम्र में बेतहाशा वृद्धि देखने को मिलती है। यही नहीं विवाह के बाद संतान के उत्तरदायित्व से भी बचना चाहती हैं।

अब शिक्षित महिलाएं पर्दा प्रथा तथा घरेलू हिंसा का खुलेआम विरोध कर रही हैं । अब वे छोटे परिवार के महत्व को भी समझ रही हैं। पहले महिलाएं परिवार के दबाव में या संतानोत्पत्ति को ईश्वरीय देन मानकर 10 या 15 बच्चों को जन्म दे देती थीं पर अब वे शिक्षित हो गई हैं तथा परिवार के दबाव में भी नहीं आती परिणामस्वरूप एक या दो बच्चों पर ही विराम लगा देती हैं। अब विधवा विवाह तथा तलाक जैसे शब्द को समाज में हेय दृष्टि से नहीं देखा जाता। विधवा विवाह के प्रति भी लोगों की सोच में परिवर्तन आ गया है तथा आवश्यकता पड़ने पर तलाक को भी बुरा नहीं माना जाता। पहले परिवार में लड़कों को लड़कियों की अपेक्षा ज्यादा ध्यान तथा सम्मान दिया जाता था परंतु अब अधिकतर परिवारों में बच्चों के पालन–पोषण में लिंग भेद नहीं किया जाता। आज लड़कियों को भी लड़कों के समान पढ़ा–लिखाकर स्वावलंबी बनाने का काम परिवार कर रहा है। पहले घर का काम महिलाएं तथा बाहर का काम पुरुषों द्वारा किया जाता था परंतु अब परिस्थितियां बदल गई है अब महिलाएं घर के साथ–साथ बाहर के कामों की जिम्मेदारी भी बखूबी निभा रही हैं।

आज परिवार के सदस्यों में दिखावेपन की प्रवृत्ति बढ़ी है वे परंपरागत वस्तुओं को छोड़कर ज्यादा से ज्यादा पाश्चात्य सभ्यता एवं संस्कृति का अनुकरण करने में गर्व महसूस करते हैं। आज हम खाने में ब्रेड, पिज्जा, बर्गर, मैगी, चाऊमीन, मोमोज, जंक फूड को सम्मिलित कर मॉडर्न होने की अनुभूति करते हैं जिससे स्वास्थ्य संबंधी अनेक परेशानियां तथा बीमारियां उत्पन्न हो जा रही है। आज के एकल परिवार में अपनी समस्याओं से अपने आप खुद ही लड़ना पड़ता है जिससे डिप्रेशन, हार्ट अटैक, ब्लड प्रेशर, शुगर जैसी बीमारियां दिन– प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। आज संवेदनहीनता की प्रवृत्ति बढ़ रही है। स्टेटस मेंटेन करने की प्रवृत्ति देखा–देखी बढ़ती जा रही है जिससे बचत की प्रवृत्ति में कमी आई है। आज

हम परंपरागत भारतीय मूल्य एवं संस्कारों से दूर होते जा रहे हैं तथा पाश्चात्य संस्कृति को गले लगाते जा रहे हैं जिससे हमारे परिवार की संरचना एवं सोच में परिवर्तन आ रहा है परिणाम स्वरूप छोटी–छोटी बातों पर पारिवारिक कलह बढ़ रही है और परिवार विघटित हो रहे हैं।

पहले परिवार में बड़े बुजुर्गों का सम्मान होता था तथा परिवार को चलाने में उनके अनुभव भी काम आते थे। यही नहीं उनके आदेशों का त्वरित गति से पालन होता था। पहले परिवार के छोटे बच्चों में संस्कारों का बीजारोपण दादा–दादी, नाना–नानी किया करते थे। लेकिन अब तो बड़े बुजुर्गों के साथ समय व्यतीत करने की फुर्सत ही बच्चों को नहीं मिलती, कभी स्कूल तो कभी ट्यूशन, होमवर्क की व्यस्तता की वजह से या कहें तो वे उनके सानिध्य में रहना ही नहीं चाहते। कई परिवारों में तो बड़े बुजुर्ग साथ में रहते ही नहीं उन्हें वृद्ध आश्रम में छोड़ दिया जाता है। भौतिकतावाद और भोगवाद की तीव्रता ने बुजुर्गों के सम्मान में कमी की है। जिन बच्चों को जन्म देने से लेकर कैरियर के मुकाम तक पहुंचाने में माता–पिता ने दिन–रात एक कर खून– पसीना बहा कर पाला है वही बच्चे अपने बूढ़े माता–पिता के प्रति अपने फर्ज अदायगी से कतराते हैं तथा वृद्ध आश्रम तक पहुंचा देते हैं।

इस प्रकार देखते हैं कि वर्तमान पारिवारिक संरचना में परिवर्तन के साथ–साथ प्रकार्यात्मक परिवर्तन भी हुए हैं। व्यक्ति अपनी स्वतंत्रता और स्वायत्तता के लिए एकल परिवार को तरजीह दे रहा है तो कभी–कभी संयुक्त परिवार की कमी भी महसूस करता है। वर्तमान में पैसे का बोलबाला बढा है हर व्यक्ति अमीर होना चाहता है। वह बेहद स्वार्थी भी हो चुका है जिससे उसका काम रहता है उससे वह तुरंत संपर्क स्थापित कर लेता है काम समाप्त होते ही संबंध समाप्त कर लेता है। यहां तक कि परिवार में भी जो सदस्य कमाता है उसकी ज्यादा आवभगत होती है बनिस्पत बेरोजगार के। पेंशन धारी बुजुर्गों का भी परिवार में ज्यादा सम्मान होता है। पहले अपने बच्चों के विवाह के लिये सुयोग्य वर या वधू का चयन माता– पिता या परिवार के लोग ही करते थे अब उनकी व्यस्तता की वजह से यह काम शादी डॉट काम तथा जीवन साथी डॉट काम, मैरिज ब्यूरो तथा समाचार पत्रों के वर्गीकृत विज्ञापनों तथा दलालों ने ले लिया है।

संदर्भ सूचीः

1. प्रतियोगिता दर्पण, मार्च 2021 पृ.159
2. प्रतियोगिता दर्पण, जनवरी 2018 पृ. 156
3. सिंह बी.एन.एवं सिंह जन्मेजय, नगरीय समाजशास्त्र, 2015, रावत पब्लिकेशंस जयपुर, पृ. 146
4. सिविल सेवा मुख्य परीक्षा हेतु आधुनिक निबंध, प्रयाग पब्लिकेशंस, जार्जटाउन, इलाहाबाद, पृष्ठ 40–42
5. बघेल डी.एस. भारतीय समाज, कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल, पृष्ठ 132–137
6. निबंध बोध,2016, स्पेक्ट्रम बुक्स प्राइवेट लिमिटेड, जनकपुरी, नई दिल्ली, पृष्ठ 140–143
7. सिंह राजू, उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग, लोअर सबोर्डिनेट मुख्य परीक्षा, समाजशास्त्र प्रयाग पब्लिकेशंस
7. पांडेय एस.एस. समाजशास्त्र सिविल सेवा मुख्य परीक्षा के लिए.2009, टाटा मैग्राहिल एजुकेशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली।
9. झा.सुबोध, भारतीय समाज : एक समग्र अध्ययन, 2010–2011, पीयूष बुक पब्लिकेशन, दिल्ली, पृष्ठ. 240
10. अटल योगेश, भारतीय समाज, 2016, पीयरसन इंडिया एजुकेशन सर्विसेज प्राइवेट लिमिटेड, नोएडा, पृष्ठ 126–140
11. अटल योगेश, समाजशास्त्र समाज की समझ, 2015, डार्लिंग किंडरस्ले इंडिया प्राइवेट लिमिटेड,नोएडा
12. सिंह जे. पी. समाजशास्त्र अवधारणा एवं सिद्धांत, 2013, पीएचआई लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड दिल्ली, पृष्ठ 255–260

JSECR, Vol. 7, No. 15, July.-Dec., 2021 **ISSN : 2394-2878**
Impact Factor : 6.125(IIFS) Peer Reviewed Journal

नारी के प्रति कबीर की पुरुषवादी दृष्टि

डॉ.राम अवध सिंह यादव
स्नातकोत्तर शिक्षक–हिन्दी
केन्द्रीय विद्यालय, काशी हिन्दू वि०वि०वाराणसी ,उ ०प्र ०

जिस काल में समाज धर्म की ओर झुक जाता है उस काल में वह नारी से घृणा करता है,क्योंकि लगभग सभी धर्मो नें नारी को काम का प्रतीक मानकर आध्यात्मिकता में बाधा माना है । कबीर का भवन कागद लेखी पर आधारित न होकर आंखिन देखी की नींव पर आधारित है। इसमें निगम,आगम,पुराणादि का इतना महत्व नही जितना कि अनुभव ज्ञान का। अपने खरेपन,स्पष्टवादिता और सर्वसमावेशी चेतना के कारण मध्यकालीन हिन्दी साहित्य के निर्गुण संत कवियों में कबीर का स्थान अन्यतम है । आध्यात्मिक साधना की प्रधानता के बावजूद कबीर साहित्य में सामाजिक सापेक्षता का प्रखर स्वर सुनाई पड़ता है।

कबीर कालीन समाज निम्न वर्ग से लेकर उच्च वर्ग तक विलासिता के आनंद में आकंठ डूबा हुआ था। नारी का सहवास ही उनके लिए सब कुछ था। कबीर संत होते हुये भी अपनी सामाजिक प्रतिबद्धताओं को साथ लेकर चल रहे थे । समाज से परांगमुख होकर वे किसी साधना की सफलता भी नही स्वीकार करते । ''कबीर पापी से नहीं पाप से घृणा करते थे । इसीलिए वे स्त्रियों को पाप के तुल्यरूप मानते हुए उनसे घृणा की । वे कहतें हैं कि स्त्री का संसर्ग नरक के संसर्ग के समान है ।जो संसार उससे जुड़ता है या उसके प्रभाव में होता है वह निर्बल और निर्जीव होता है।"[1] वे कहते हैं कि नारी की परछाई मात्र पड़ने से सर्प अंधा हो जाता है,तो उस साधारण मनुष्य की क्या गति होगी जो नित ही नारी के संसर्ग में रहतें हैं–

"नारी की झाई परत, अंधा होत भुजंग ।
कबीरा तिनकी कौन गति ,नित नारी के संग ।। "[2]

कबीर ने स्त्री–पुरुष संबंधों में समानता की धारणा का कहीं भी प्रयोग नहीं किया । यह विचार ही शायद उनके समय के लिए विजातीय था। असमानता के साथ–साथ असहिष्णुता, अहंकार, धन–लोलुपता, सांसारिकता के प्रति मोह और अज्ञान को स्त्री में लक्ष्य करते हुए कबीर ने उसे वासना के तुल्य रूप देखा और वासना को समाज के दुखों और कष्टों के पीछे क्रियाशील तथा सच्चे भक्त की राह में बाधा माना। स्त्री की छबि वासना से जुड़ी थी उसे काम के प्रतीक के रूप में पढ़ा गया तथा पापिन,डाकिन और मोहिनी कहकर पुकारा गया। कबीर का विश्वास था की स्त्री के साथ काम करते हुए बहुत सावधान रहने की जरूरत है।

संतो की साधना प्रेम की अपेक्षा ज्ञान की साधना थी,जिसमे नारी बाधक थी । संत कबीर ने बड़े स्पष्ट शब्दों में कनक और कामिनी की निंदा की है। कबीर ने जहां नारी के निंदित रूप को व्यक्त किया है वहां उनका प्रयोजन नारी के कामिनी रूप से ही है । वे कहते हैं कामिनी तीनों लोकों में काली नागिन है, राम के प्रेमी ही उससे बचकर उबर सके हैं, विषयी जनों को उसने संपूर्ण रूप में खा लिया है–

"कांमणि काली नागणी,तीन्यू लोक मँझारि ।
राम सनेही ऊबरे , विषई खाए झारि ।।"[3]

जब संन्यास का आदर्श संसार त्याग ही हो गया तो एक स्त्री,जो संसार की सहस्त्रों समस्याओं को लिए हुये उसमें बाधा स्वरूप है ,अनादर की दृष्टि से देखी जाने लगी । नारी जिस नर के पास(पार्श्व) में होती है उसके तीन सुख (भक्ति– सुख ,मुक्ति –सुख, ज्ञान– सुख) नष्ट कर देती है, (उसके पार्श्व में होते हुए) भक्ति,मुक्ति और आत्म ज्ञान में कोई नहीं प्रविष्ट हो सकता है –

"नारी नसाबैं तीन सुख जा नर पासैं होइ।
भगति मुकति निज ज्ञान मैं, पैंसि न सकई कोई ।। "[4]

तत्कालीन सामान्य मनुष्य की वास्तविक स्थिति तुलसी दास के शब्दों में–'कहाँ जाई,का करी'वाली हो गई थी । कहाँ जाने और क्या करने की जो किंकर्तव्यविमूढ़ स्थिति है ,इससे उस काल का लगभग हर प्राणी गुजर रहा था। ऐसी स्थिति में एक कनक और दूसरी कामिनी, इन्हें (माया ने) विश्व फल के रूप में उत्पादित किया है इनको देखने से ही विष चढ़ता है और इन्हें खाने (इनका उपभोग करने) से तो मनुष्य मर जाता है –

"एक कनक और काँमिनी, विष फल कीएउ पाइ।
देखै ही थैं विष चढ़े , खायें सूँ मरि जाइ ॥ "[5]

धन भक्त का महान शत्रु है। यह बात कबीर ने अच्छी प्रकार समझ ली थी,यही कारण है कि उन्होंने कामनी के समान कंचन की भी घोर निंदा की है, उन दिनों कनक और कामिनी को दुर्गम घाटी की संज्ञा से अभिभूत करते हुए नारी को कबीर ने दुर्गम माना है–

" एक कनक और कामिनी दुर्गम घाटी दोय।" [6]

विषय की व्यापकता का उल्लेख करते हुए कबीर ने कहा है कि सारा संसार इसी विष में मत्त है, इसे हरि की सुधि ही नहीं, सभी मनुष्य भूले हुये हैं । इन आसक्तियों में नारी का आकर्षण सबसे प्रबल है। काम का वेग मनुष्य में सबसे प्रबल है। इसी से प्रेरित होकर वह उसके प्रति आकृष्ट होता है। कबीर स्त्रियों की आसक्ति का त्याग संत के लिए आवश्यक माना है। कामनी के अंगों से विरक्त होने पर ही हरि मिलते हैं। ऐसे लोगों को कलियुग में भी अमरत्व मिलता है। गोरखनाथ इसके साक्षी हैं –

"कामिणि अंग बिरकत भया, रत भया हरि ।
साषी गोरखनाथ जूयूं,अमर भए कलि माँहि॥ "[7]

कबीरदास जी कहते हैं कि नारी जगत की जूठन है और (उसके संबंध से) भले और बुरे मनुष्यों में अंतर होता है जो उत्तम मनुष्य है उससे अलग रहते हैं और वे नीच होते हैं जो उनके निकट रहते हैं –

"जोरू जूठणि जगत की ,भले बुरे का बीच।
उत्तम ते अलगे रहैं, निकटि ही रहैं ते नीच ॥" [8]

"कबीर कहीं–कहीं आवश्यकता से अधिक कटु हो गए है। वे नारी के प्रति नहीं अपितु,नारी जाति के प्रति अविश्वास से भर उठे हैं। उनके मत से गाय,भैंस,घोड़ी, हथिनी और गदही भी अंततोगत्वा नारी ही है ।अतः जिस घर ये में मादा पशु भी हों। वहां नहीं रहना चाहिए । "[9] उनके अनुसार तो नारी संसर्ग इतना निंद्य है कि जिस स्थान पर किसी कामिनी को जलाया गया हो उस स्थान के निकट न जाने की सलाह देते हैं क्योंकि, यदि उसकी भस्म का स्पर्श भी हो जाएगा तो शरीर संज्ञा शून्य हो जाएगा।" [10]

कबीर को स्वयं की ही नहीं सारे संसार की चिंता थी तभी तो वे जोगी को निर्देश देते हुए कहते हैं कि नारी के नेत्र रूपी बाणों से बचकर चलो क्योंकि इसने श्रृंगी ऋषि, गोरख नाथ, महादेव ,मत्स्येंद्रनाथ आदि को नहीं छोड़ा तो साधारण मनुष्य की क्या बिसात ?–

" जोगिया खेलियो बचाए के, नारी नैन चले बान ।
सिंगी की भिगी करि डारी, गोरख के लपटान।
कामदेव महादेव सतावे, कहा –कहा करों बखान।
आसन छोड़ मच्छन्दर भागे, जल में मिन समान ।

कहे कबीर सुनो भाई साधो, गुरुचरण लपटान॥ "[11]

संत जन माया का सबसे बड़ा रूप नारी को मानते हैं जो भक्त और उसके आराध्य के बीच अंतर डाल देती है–

"हरि बीच घाले अंतरा, माया बड़ी बिसास ।
कबीर माया पासणी, हरि सू करें हराम ।।"[12]

कबीर मूलतः और अंततः संत थे । उनकी वाणी में नारी और काम को एक दूसरे के पर्याय के रूप में प्रयोग किया गया है। नारी और काम का यही अन्योन्याश्रित संबंध इन संत जनों के मार्ग की सबसे बड़ी बाधा है। फिर भी जगत के साथ शाश्वत एवं सर्वकालिक गार्हस्त भाव से विरत हो जाना इतना सहज नहीं है जितना सहज इसके मूल कारण नारी को समस्त समस्याओं की जड़ बताते हुए उनकी निंदा करना है। वैसे भी आश्रम चतुष्टय की अवहेलना करके केवल सन्यास आश्रम का अवलंब लेकर ये संत जन जिस मार्ग पर चलना चाहते थे उसकी मनोवृत्ति उसके अनुकूल नहीं थी क्योंकि 'चित्त वृत्ति निरोध' जिस मानसिक परिपक्वास्था का परिणाम है उससे इन संतों का परिचय ही नहीं होता था। अतः संत जनों ने मध्यम मार्ग का अनुसरण करते हुए गृहस्थाश्रम तो स्वीकार किया किंतु 'पर नारी निषेध 'का उपदेश दिया। पर स्त्री वर्जन मूलतः एक सामाजिक आवश्यकता है। व्यभिचारी व्यक्ति अपनी हानि तो करता ही है सामाजिक व्यवस्था को भंग कर पारस्परिक अविश्वास के वातावरण की सृष्टि करता है।

कबीर साधना की पराकाष्ठा मे स्वयं स्त्री बन जाते हैं । अपने को राम की बहुरिया कहते हैं और सामान्य प्रेमी–प्रेमिका की भाँति विरह और मिलन के आध्यत्मिक अनुभव के क्षणों का एहसास करातें हैं वे ' बालम आव हमारे गेह 'और 'तुम बिन दुखिया देह रे 'जैसी पंक्तियों के मधायम से मानवीय संबंधों की उष्मा का एहसास कराते हैं । आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है कि "कबीर दास भक्त और पतिव्रता को एक कोटि में रखते थे । दोनों का धर्म कठोर हैं, दोनों की वृत्ति कोमल है, दोनों के सामने प्रलोभन का दुस्तर जंजाल है, दोनों ही कंचन धर्मी है––– बाहर से मृदु भीतर से कठोर ,बाहर से कोमल भीतर से परुष । सब की सेवा में व्यस्त पर एक ही आधारिका पतिव्रता ही भक्त के साथ तुलनीय हो सकती है। " [13] कबीर की मान्यता है कि पतिव्रता नारी कुरूप होती हुई भी अच्छी लगती है, वे उसके रूप पर करोड़ों रुपसियों को निछावर करने में जरा– सा भी नहीं हिचकते हैं–

"पतिव्रता मैली भली ,काली कुचिल कुरुप।
पतिव्रता के रूप पर , बारौं कोटि सरूप ।। "[14]

कबीर को सारे संसार में मात्र दो प्रतीक उपयुक्त प्रतीत हुए । सती और सूर । आत्मसमर्पण कबीर की सिद्धि थी । सती की प्रशंसा करते हुए वे कहते हैं कि सती चित्त में एक प्रियतम की भावना करते हुए चिता में प्रवेश करने के लिए आगे बढ़ती है । वह प्रियतम को तन– मन सब अर्पित कर देती है। इस स्थिति में दोनों के बीच की सारी दूरी मिट जाती है । दोनों एक हो जाते हैं –

"कवि सती जलन कूँ, नीकली चित्त धरि एक विवेक।
तन मन सौंप्या पीव कूँ, तब अंतर रहीं न रेख ।। "[15]

यहां पर कबीर सती प्रथा की प्रशंसा करते हुए दिखाई पड़ते हैं जो एक सामाजिक बुराई है, वे उसका समीकरण आत्मा तथा परमात्मा के पुनर्मिलन के साथ बिठाते हैं । उनके अनुसार सती एक धर्म है जिनका पालन किया जाना चाहिए। एक सती के बलिदान और साहस का गुणगान उसके अनुसार शमशान भूमि तक हुआ है ।

यह अजीब बात है कि कबीर ब्रह्म तक पहुंचने के लिए स्त्री का रूप धारण करते हैं –एक पतिव्रता स्त्री का रूप जो हर तरह के पापों से ऊपर है। भक्ति परंपरा का यह सती–पति भाव ब्रह्म के पास पहुंचने का सीधा मार्ग है इसमें किसी मध्यस्थ की जरूरत नहीं है । बिना इस रूप के, कबीर दृष्टि में पुनर्मिलन संभव नहीं । ब्रह्म को पुरुष से श्रेष्ठ रूप में देखने के लिए कबीर के पास स्त्री ही एकमात्र दृष्टिकोण है । एकमात्र वही है जो बिना कोई सवाल उठाए आत्मसमर्पण करने की गुंजाइश उन्हें प्रदान करती है । इस तरह उनके पास कोई विकल्प नहीं है। सिवाय उस स्त्री का रूप धारण करने के जिसके बिना न तो भक्ति का अस्तित्व रह जाता है न ब्रह्म का । कबीर जो निरंतर समानता और जाति प्रथा तथा वर्ण व्यवस्था के उन्मूलन के पक्ष में बोलते रहे ,स्त्री को एक ऐसे अधीनस्थ के रूप में देख सके, जो पति के समक्ष अपना सर्वस्व अर्पित कर देती है और उसे वह छूट देती है कि वह अपनी सारी शक्तियां उस पर आजमा सके। यह केवल इसलिए संभव था कि समूची मनुष्यता की समानता का कबीर का आग्रह एक निश्चित बिंदु के बाद स्त्रियों को उस मनुष्यता के बाहर कर देता है । उनके लिए यह इसलिए स्वाभाविक था क्योंकि वे अपने समूचे सुधारवादी उत्साह के बावजूद स्त्रियों की समस्या पर उतनी गंभीरता से विचार कर ही नहीं सके । बजाय इसके उनका तर्क था कि स्त्रियां समाज की समस्याओं की एकमात्र कारक है ।

दार्शनिक भूमि पर कबीर जहां एक स्त्री की भूमिका अख्तियार करते हैं वहीं सामाजिक भूमि पर वे पुरुष हो जाते हैं । "स्त्री की छवि का प्रतीकात्मक इस्तेमाल ईश्वर तक पहुंचने के लिए उन पुरुषों द्वारा किया जाता है जो उन सारी चीजों से पार पा चुके हों जिन्हें वे स्त्रियों से जोड़कर देखते हैं। लेकिन स्त्रियों के लिए इस दार्शनिक अधिकार क्षेत्र में कोई जगह नहीं, शायद इसीलिए कि स्त्री भौतिक अर्थ में वह वस्तु है जो परमात्मा तक पहुंचाने वाले मार्ग में एक रोड़ा है। "[16]

भौतिकता एवं आध्यत्मिकता में संघर्ष का कारण स्त्री का आकर्षण ही है । आकर्षण नारी का सर्वोच्च गुण है और समस्त प्रकृति इसी पर टिकी है । कोई भी अध्यात्ममार्गी इस सत्य को नकार नहीं सकता । सच्चा योगी सौंदर्य आलोक का प्रेमी होता है । कबीर की विरह वेदना में संताप के साथ भी समता का अद्भुत योग है। इसका कारण वे बताते हैं–

"हंसि– हंसि कंत न पाइए, जिनि पाया तिनि रोइ ।

जे हाँसे ही हरि मिलै, तौ नहिं दुहागिन कोइ ॥ "[17]

हंसते–हंसते अर्थात मौज उड़ाते हुए किसी ने अपने प्रियतम को नहीं पाया है । उसे जिस किसी ने पाया है उसने रोकर अर्थात वियोग की व्यथा का अनुभव करके ही पाया है, कबीर के अनुसार उस कंत को पाने के लिए व्यास मार्ग का ही अनुसरण करना होगा। यह परमात्मा प्राप्ति अनुभव का सार। कबीर को विरह वेदना की अनुभूति थी अन्यथा वे इसका वर्णन कैसे करते ? कल्पित में उनका विश्वास न था। पुरुष हो के प्रेमिका के संवेदनाओं का वर्णन यथार्थ अनुभूति से ही संभव है ।'एकमेव ह्वै सेज न सोवै,तब लग कैसा नेह रे' –यहाँ एकमेव होने का भाव नारी–नर का एकत्व है । कबीर की यह अनुभूति गृहस्थ की अनुभूति है । कबीर जहाँ एक ओर कहते हैं–हरि मेरा पीव,मैं हरि की बहुरिया वहीं दूसरी ओर 'दासौहं 'के रूप में अपने सर्व समर्थ स्वामी की छत्रछाया पाने वाले 'दुलहिन कबीर' अपने राजा राम 'भरतार' में माता का हृदय देख भगवत वात्सल्य का सुख भी पा लेते हैं और उनके बालक के रूप में दीन होकर आत्म निवेदन करते हुए अपने दोषों का उद्घाटन करते हैं –

"हरि जननी मैं बालक तेरा ।
काहे न औगुंण बकसंहू मेरा ।।
सुत अपराध करै दिन केते, जननी कै चित्त रहे न तेते ।

कर गहि केस करे जो घाता, तऊ न हेत उतारै माता।। "[18]

वे बड़ी उक्ति से हृदय की एकता स्थापित करते हैं जो किसी भी प्रकार के प्रेम संबंध का स्वभाव है –'कहे कबीर एक बुधि बिचारी, बालक दुखी दुखी महतारी' अर्थात यदि बालक को कष्ट होता है तो माता भी दुखी होती है। यहां पर कबीर दास जी पिता के अपेक्षा माता को अधिक ममतामयी सिद्ध करते हुए दिखाई देते हैं । माता ही बालक को संस्कारी बनाती है क्योंकि समाजीकरण का पहला पाठ बालक मां की गोद से सीखता है ।

विवाह जैसी सामाजिक संस्था के प्रति कबीर का दृष्टिकोण बहुत स्पष्ट था और उन्होंने कुटुंब के भीतर तथा निकट संबंधियों के बीच विवाह संबंध बनाने के लिए मुसलमानों की आलोचना की, किंतु उन्होंने कहीं भी बाल विवाह का विरोध नहीं किया, न विधवा विवाह का समर्थन और ना ही उच्च वर्ग के लोगों में प्रचलित बहुविवाह प्रथाओं का विरोध । परदे को भी उन्होंने सामान्य प्रथा की तरह देखा । स्त्री के लिए सार्वजनिक जीवन में भागीदारी के लिए कोई गुंजाइश नहीं ,उसे घर के भीतर परदे में ही रहना चाहिए। उनके अनुसार एक निष्ठावान पत्नी को चाहिए कि वह अपने पति की इच्छाओं के सामने खुद को पूरी तरह समर्पित कर दें तथा पति की इच्छित जीवन शैली के अनुरूप खुद को ढाल ले । दरअसल उसका जीवन पति के लिए ही था। उसकी उपस्थिति में ही वह हँसती और बोलती थी । कबीर ने कहा कि ऐसी निष्ठावान पत्नी को ही आंख की कठपुतली समझ कर उसकी रक्षा की जानी चाहिए । उसे हमेसा पुरुष द्वारा अर्जित की गई एक संपत्ति समझा गया ।

कबीर के यहाँ नारी के स्वतंत्र व्यक्तित्व का अभाव देखने को मिलता है । कबीर की दृष्टि में नारी का सती एवं पातिव्रत रूप प्रशंसनीय ही नहीं बल्कि बंदिनीय भी था,लेकिन सामाजिक सोपान क्रम की दृष्टि से नारी की हैसियत निम्नतम थी । मध्यकालीन जनजीवन में संन्यास की प्रवृत्ति बढ़ी तो सामंती समाज में शरीर सुखवादी विचारधारा को संरक्षण मिला । इन दोनों कारणों से नारी की प्रतिष्ठा को आघात पहुँचा । पुरुषों को आध्यात्मिक पक्ष से विरत करने वाली होने के कारण निंदा का पात्र भी समझी गई एवं माया –ठगनी –नागणी आदि नामों की संज्ञा से अभिभूत की गई । इतना होते हुए भी संतो ने नारी के उदात्त एकनिष्ठ एवं समर्पण भाव से युक्त प्रणयनिवेदन को ही उस परम तत्व तक पहुंचने का सोपान बनाया । मध्यकालीन नारी के लिए यह गौरव की बात है कि संत मार्ग में अपनी बंधनकारिता के कारण त्याज्य समझी जाती हुई भी अनेक स्त्रियोचित गुणों से साधना के लिए मानक बन गई । पुरुषों और स्त्रियों के बीच समानता का संबंध उस समय के लिए नितांत विजातीय था । माता व पुत्री के रूप में नारी की कहीं भी निंदा नहीं की गई है ,परंतु भोग्या व कामिनी रूप का कबीर साहब निःसन्देह निंदा करतें हैं ।जार कर्म का विरोध करतें हैं ,मगर इसके कारण और निवारण पर विचार नही करतें । कबीर की स्त्री पितृ सत्ता के ढाँचे पर कोई प्रहार नही करती । कबीर के प्रगतिशील सोच की यही सीमा है ।

संदर्भ–ग्रंथ सूची

1–राजकिशोर(सं०) –'कबीर की खोज' ,पृष्ट–157,वाणी प्रकाशन ,नई दिल्ली ,संस्कारण–2001
2– डॉ.राजेंद्र मोहन भटनागर –'कबीर ' ,पृष्ट–95,भारतीय ग्रंथ निकेतन , दिल्ली ,संस्कारण–1982
3– डॉ.श्यामसुंदर दास–'कबीर ग्रंथावली',पृष्ट–30,नागरी प्रचारिणीसभा,वाराणसी,संस्कारण–2032 वि०
4– डॉ.श्यामसुंदर दास–'कबीर ग्रंथावली',पृष्ट–31,नागरी प्रचारिणी सभा,वाराणसी,संस्कारण–2032 वि०
5– डॉ.श्यामसुंदर दास–'कबीर ग्रंथावली',पृष्ट–31,नागरी प्रचारिणी सभा,वाराणसी,संस्कारण–2032 वि०
6–डॉ.गोविंद त्रिगुणायत–'कबीर की विचारधारा',पृष्ट–339,साहित्य निकेतन,कानपुर,संस्कारण–सं०–2009
7–डॉ.जगदीश प्रसाद –'कबीर की प्रगतिशील चेतना',पृष्ट–119,प्रकाशक –नई कहानी ,170–अलोपीबग इलाहाबाद ,प्रथम संस्कारण–1993

8– डॉ.श्यामसुंदर दास–'कबीर ग्रंथावली',पृष्ट–31,नागरी प्रचारिणी सभा,वाराणसी,संस्कारण–2032 वि०
9– डॉ.कृष्णा गोस्वामी –'संत काव्य में नारी ', पृष्ट–103
10 डॉ.कृष्णा गोस्वामी –'संत काव्य में नारी ', पृष्ट–103
11– 'कबीर साहब की शब्दावली ' ,भाग–9,पृष्ट–32
12–डॉ.श्यामसुंदर दास–'कबीर ग्रंथावली',पृष्ट–30,नागरी प्रचारिणी सभा,वाराणसी,संस्कारण–2032 वि०
13–राम सजन पाण्डेय–'संतो की सांस्कृतिक संसृति' ,पृष्ट–91–92, लोकभरती प्रकाशन, इलाहाबाद ,संस्कारण–1996
14– 'संतवाणी संग्रह' ,पृष्ट–40
15– डॉ.रामचन्द्र तिवारी–'कबीर मीमांशा' ,पृष्ट–85, लोकभरती प्रकाशन, इलाहाबाद ,संस्कारण–1996
16– उर्वशी सूरती–'कबीररूजीवन और दर्शन',पृष्ट–105,लोकभरती प्रकाशन,इलाहाबाद,संस्कारण–1980
17– उर्वशी सूरती–'कबीररूजीवन और दर्शन',पृष्ट–105,लोकभरती प्रकाशन,इलाहाबाद,संस्कारण–1980
18– डॉ.श्यामसुंदर दास–'कबीर ग्रंथावली',पृष्ट–36,नागरी प्रचारिणी सभा,वाराणसी,संस्कारण–2032 वि०

JSECR, Vol. 7, No. 15, July.-Dec., 2021 **ISSN : 2394-2878**
Impact Factor : 6.125(IIFS) Peer Reviewed Journal

आधुनिक नगरों की समस्याएँ

अमित मालवीय
शोध छात्र समाजशास्त्र विभाग
महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ वाराणसी, उत्तर प्रदेश भारत

आधुनिक नगरों के विकास के साथ साथ नगरों को अनेक ऐसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है जिनकी कभी पहले उन्हें चिन्ता तक नहीं थी। उदाहरण के लिए जल की आपूर्ति नगर की सफाई यातायात व्यवस्था आवश्यक उपयोगी सुविधाएं आदि जैसे–जैसे नगरों की जनसंख्या में वृद्धि हो जाती है वैसे वैसे इन सुविधाओं को और अधिक जुटाने की आवश्कता बढ़ती जाती है उनकी कमी होने पर अनेक समस्यायें पैदा हो जाती हैं। बड़े बड़े नगरों में ये सामाजिक बुराइयाँ विकराल रुप धारण कर लेती है। इनमे गन्दी बस्तियाँ निवास स्थानो का अभाव बेरोजगारी की समस्या कारखानों में कार्य सम्बन्धी असन्तोषजनक दशाएँ आमोद प्रमोद तथा स्वास्थ्य सेवाओं की कमी पायी जाती है। भोजन सम्बन्धी वस्तुएं शुद्ध नहीं मिलती सामाजिकता का अभाव मिलता है सामाजिकता तथा शिष्टाचार केवल कार्य करने वालों में ही होता है। जिसको भी संघों द्वारा सदैव बनाकर रखने का प्रयास किया जाता है अन्यथा मनुष्य एक दूसरे से अपरिचित होता है।1

ममफोर्ड के शब्दों में आधुनिक बड़ा नगर तकनीकी क्षेत्र में अपने आप में सांस्कृतिक अलगाव का अपूर्व उदाहरण प्रस्तुत करता ह\। ममफोर्ड ने आगे कहा है कि एक बड़ा नगर आर्थिक दृष्टि से असन्तोषजनक होता है। प्रोफ़ेसर रोबसन का कहना है कि अधिक समय तक आधुनिक दशाओं में हाथी के समान विशाल आकार वाले नगरों के अनुपातो को न तो और अधिक सहा जा सकता है। और न ही उनकी वृद्धि ही वाछनीय है2 प्रोफ़ेसर एव डब्ल्यूव एडवुड ने बताया है कि नगरों का विशाल आकार बड़ी ही असन्तोषजनक है यह श्लीपद नामक रोग की भाति है।

उपर्युक्त सभी बातें आधुनिक नगरों की समस्याओं को देखने पर सही उतरती है नगरों में रहने वाले निवासी रोजाना सामान्य दैनिक उपभोग की आवश्यकताओं का नितान्त अभाव महसूस करते हैं प्रश्न यह उठता है कि नगरों में अनेक समस्याएँ उभरकर सामने आयी है इसके क्या कारण हो सकते हैं।

नगरों के आकार व उसके घनत्व में भारी वृद्धि का होनाः– नगर और भी बड़े होते जा रहे हैं दिल्ली नगर इसका सुस्पष्ट उदाहरण है इसकी जनसंख्या 1901 में केवल दो लाख थी जो कि 1951 में 14.5 लाख हो गयी 1961 में 23.6 लाख, 1991 में 84 लाख तथा 2001 में 128 लाख 2011 मे 163 लाख तक पहुँच गयी कोलकाता 141 लाख तथा वृहत्तर मुम्बई 184 लाख भी अपने आकार में पिछले 50 वर्षों में भारी वृद्धि कर चूके हैं। इससे नगरों में अनेक समस्याएँ पैदा हो गयी है। इनमें आये दिन दुर्घटनाए ट्रैफिक अनियन्त्रण पानी की कमी दैनिक उपभोग की वस्तुओं की कमी मकानों की भारी कमी या फिर उनके किरायों का बहुत ऊँचा होना आदि जैसी बुराइयाँ घर–कर गयी है नगरों में जनसंख्या घनत्व के आँकड़े इस बात को स्पष्ट करते हैं कि वहां पर मानव झुण्डो की भाँति एकत्रित हो गया है और नारकीय जीवन बिता रहा हैं कोलकाता में 15255 मुम्बई में 25135 चेन्नई में 17680 अहमदाबाद में 25050 दिल्ली में 16630 सूरत में 29450 पटना में 24458 कानपुर में 21340 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर में रहते हैं कुछ विशिष्ट भागों में यह घनत्व अत्यन्त अधिक है। नगरों एवं महानगरों में नगरीय जनसंख्या के असमान वितरण ने भी नगरों में अनेक समस्याएँ पैदा करने में मदद की है।

रहने के लिये मकानों की कमी एवं गन्दी बस्तियों का प्रादुर्भावः– नगरों की सबसे बड़ी समस्या रहने के मकानों की ज्वलन्त कमी का होना है। मकानों की कमी बड़े–बड़े व औद्योगिक नगरों में इतनी हो जाती है कि न केवल मकान कई मंजिलें के बनाने पढ़ते हैं वरन श्रमिकों बस्तियों में तो एक एक कमरे वाले घरों में ही अधिकांश जनसंख्या को रहना पड़ता है जिसकी लम्बाई चौड़ाई 4 से 5 और 3.5 मीटर होती है 2011 में एक अनुमान के आधार पर बताया गया है कि विश्व की 100 करोड़ जनसंख्या गन्दी बस्तियों में निवास करती है। इसी जनगणना वर्ष में भारत में 9.31 करोड़ जनसंख्या गंदी बस्तियों में निवास कर रही थी। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर स्थापित मान्यता के अनुसार प्रति व्यक्ति 35 वर्ग मीटर की रिहाइशी आवास की सुविधा होनी चाहिए इसके विपरीत भारत में मुम्बई के 70 व्यक्तियों में से एक व्यक्ति के पास मकान है 30 प्रतिशत व्यक्ति सीढ़ियों व पशुओं के रहने के स्थान में रहकर गुजारा करते हैं 10 से लेकर 15 व्यक्ति एक छोटे से स्थान 3×5 मीटर के कमरे में निवास करते हुए नजर आते हैं वह बात जो आज भारत के बारे में सही है दक्षिण पूर्वी एशिया के नगरों पर भी लागू होती हुई दिखाई देती है।

भारत के नगरों में मकानों की कमी की समस्या दिन पर दिन बिगड़ती जा रही है तथा समस्या पश्चिमी विकसित देशो से कहीं अधिक गम्भीर है देश के 16 से 19 प्रतिशत परिवार 10 वर्ग मीटर से कम जगह में रहते हैं और 51 से 54 प्रतिशत परिवार अपना गुजारा 20 वर्ग मीटर से कम जगह में करते हैं नगरीय आवास के लिए मकानों की कमी 1951 मे 24 लाख 1961 में 93 लाख 1991 में 225 लाख 2001 में 360 लाख तक पहुँच गयी थी इस प्रकार दिन पर दिन यह समस्या गम्भीर रूप धारण करती जा रही है एक राष्ट्रीय सर्वेक्षण के अनुसार नगरों में केवल 45þ मकान पक्के हैं 77 प्रतिशत घर एक या दो कमरों में है मुम्बई और कोलकाता में जनसंख्या के 60 से 70 प्रतिशत भाग को किसी भी प्रकार के स्नानागारों की सुविधा नहीं है और 8 से 12 प्रतिशत जनता को शौचालय भी सुलभ नहीं है मकानों की घोर कमी व उनका लोगों की आर्थिक स्थिति के अनुरुप न होना आदि बातों ने नगरों में गन्दी बस्तियों के निर्माण में मदद की है यह बस्ती गन्दे घने व अन्धकार युक्त क्षेत्र में होती है।3

कूपर का तो कहना है कि इनका निर्माण समाज विरोधी लोगों ने किया है जिस राक्षस यानी समाज विरोधी व्यक्ति ने इस बस्ती को बनाया वह लालची शक्ति व सम्पत्ति रखने वाला तथा नागरिक सुविधाओं से अनभिज्ञ होता है4 हाल में किये गये मुम्बई के एक सर्वेक्षण से स्पष्ट होता है कि 100 में से 18 परिवार सड़कों पर रहते हैं तथा अन्य 18 परिवार गन्दी बस्तियों में चेन्नई में ऐसे परिवारों की संख्या कुल जनसंख्या का 20 प्रतिशत है दिल्ली में 2011 की जनगणना के अनुसार दो लाख से अधिक व्यक्ति बिना मकानों के थे व्यापक पुनर्वास के बाद भी गन्दी बस्तियों में रहने वाली जनसंख्या 18 लाख के आस–पास थी वास्तु शिल्पकार मनोहर ने अपने लेख वनत कमसीपे उेंजमत चसंद– अपेपवद व िजीम दंजपवदंस बंचपजंस पद 1981′ में बताया था कि दिल्ली गन्दी बस्तियों अस्थायी व गन्दी झोपड़ियों का नगर है यहाँ पर ऐसी लगभग 300 बस्तियाँ हैं कोलकाता में कुल जनसंख्या का दो तिहाई हिस्सा घटिया आवासों में जिन्दगी बसर करता है। बेंगलुरु में 15 लाख व्यक्ति गन्दी बस्तियों में रहते है। ये गन्दी बस्तियाँ कच्ची मिट्टी के मकानों से घिरी है छत या तो झाड़फूस या फिर टीन की बनी है तथा निचले पानी से भरे क्षेत्रों में फैली है। सार्वजनिक या व्यक्तिगत उद्योगों के पास ये बस्तियाँ नहीं पायी जाती है बल्कि तालाब के चारों और इनका घना बसाव है 2011 के एक अनुमान के अनुसार भारत के नगरों में रहने वाला हर पाँचवा व्यक्ति गन्दी बस्ती में रहता है। देश के 53 बड़े नगरों की जनसंख्या 16.1 करोड़ है जो कुछ नगरीय जनसंख्या का 13 प्रतिशत भाग झोपड़ियों में 15 प्रतिशत कच्चे मकानों में व 23 प्रतिशत भाग अर्द्ध पक्के मकानो में निवास कर्ता है करता है। 2001 में किए गए एक

सर्वेक्षण के अनुसार देश के प्रथम दस बड़े नगरों में 195 लाख जनसँख्या गन्दी बस्तियों में निवास कर रही है। केन्द्रीय आवास मंत्रालय के अनुमान के आधार पर 2011 में 930 लाख व्यक्ति गन्दी बस्तियों में रह रहे थे। अगले 5 वर्षों में यह संख्या 1200 लाख तक पहुँच जाने की सम्भावना है। इन्हें शहरों का नासूर की उपाधि दी गई है कुछ लोग इन्हें महानगरों का कलंक कह कर पुकारते हैं एक अनुमान 2011 के अनुसार मुम्बई में 54 कोलकाता में 32 व दिल्ली में 26 प्रतिशत जनसंख्या गन्दी बस्तियों में रहती है लेकिन दिल्ली की यह 26 प्रतिशत जनसंख्या वर्तमान में व्यवस्थित गन्दी बस्तियों में रहने लगी है। इसी प्रकार मुम्बई व कोलकात्ता में इनकी स्थिति दयनीय है वीव एमव सिन्हा ने अपने एक लेख Between Slums and Symbol* में बताया है कि दिल्ली की 70 लाख जनसंख्या अमानवीय परिस्तिथियों में रह रही है। वर्तमान नगर रहने के स्थान पर रोजगार केन्द्र बन गए हैं इस प्रवृत्ति ने गन्दी बस्तियों को प्रोत्साहन दिया है। वह बस्तियाँ भौतिक दृष्टि से नगर को अमानवीय बना देती हैं। सम्मानजनक जीवन यापन सुविधा के अभाव में जनसंख्या का बढ़ता हुआ संकेंद्रण सामाजिक व नैतिक मोरचे पर भी अमानवीय परिस्थितियों को जन्म देता है।4

स्वास्थ्य की समस्याः– सामान्य धारणा यह है कि गांव के लोग नगरीय लोगों की तुलना में हष्ट पुष्ट और बलिष्ठ होते हैं। नगरीय लोग दुबले रोड और जल्दी बीमार होने वाले होते हैं। नगरों में स्वच्छ वातावरण का प्रभाव होता है मकानों की भीड़ भाड़ वायु प्रदूषण मिल फैक्ट्री का दूंगा स्थान की कमी बंद मकान रोशनी एवं स्वच्छ हवा का अभाव गड़गड़ाहट एवं बहरा कर देने वाला शोरगुल खटमल मच्छर आदि की अधिकता के रोग बदबूदार एवं सीलन भरे कमरे आदि सभी मिलकर स्वास्थ्य पर बुरा असर डालते हैं नगरों में मृत्यु दर गांव की तुलना में अधिक होने की यह प्रमुख कारण है। स्वास्थ्य की सुविधा जुटाने के लिए वहां पार्क बगीचों एवं खेलकूद का प्रबंध किया जाता है। प्रमुख प्रभु ने अपनी मुंबई सर्वेक्षण में यह पाया कि 61þ लोगों ने मुंबई में आने के बाद बीमार रहने की शिकायत की 30þ लोगों ने परिवार जनों की मृत्यु के लिए नगर में आने के बाद लगी बीमारी को उत्तरदाई माना है। कई लोगों ने अपर चाय एवं भूख न लगने की शिकायत की नगर मानसिक स्वास्थ्य पर भी को प्रभाव डालता है और लोग अनिद्रा एवं चिंता से परेशान रहते हैं स्वास्थ्य व चिकित्सा सुविधाओं का अभाव स्वास्थ्य की दृष्टि से नगरों की सबसे बड़ी समस्या सफाई की है। कारखानों के कूड़े करकट से सड़के व नालियाँ प्लावित रहती है यहाँ तक कि नगर के सभी भागों में पर्याप्त स्वक्षता नहीं मिलती स्वयं मनुष्य अपने घरों को अच्छी प्रकार से साफ नहीं कर पाते यही कारण है कि नगरों में सम्पूर्ण वर्ष कहीं न कहीं बीमारियाँ तथा कभी–कभी महामारीया फैलती रहती है। नगरों में चिकित्सा सुविधाओं का अभाव है यदि चिकित्सा सुविधाएँ उपलब्ध है तो आम लोग उन्हें आसानी से प्राप्त नहीं कर पाते हैं नगरों की वायु अशुद्ध रहती है वाहन औद्योगिक कारखाने घरों की तुलना में अगीठिया अतुल मात्र में धूँआ निकालकर वायुमण्डल को प्रदूषित कर देते हैं7

मल मूत्र विसर्जन की समस्याः– मल मूत्र विसर्जन एवं जल निकास की समस्या नगरों में घरेलू उपयोग हेतु कारखानों में वृहद मात्रा में पानी का प्रयोग होता है जो गंदे पानी के रूप में विसर्जित होता है सड़क की नालियों से बहता हुआ गंदा पानी गंदे नाले या सीवर पाइपों में पहुंचता है जहाँ से उसे नगर के बाहर निकालने की व्यवस्था की जाती है नगर से निकलने वाले गंदे पानी में अनेक प्रकार के विषैले पदार्थ मिले होते हैं जो मनुष्य व जीवो के लिये ही नहीं अपितु पेड़ पौधों के जीवन के लिये भी हानिकारक होते हैं सभी बड़े नगरों विशेष रूप से औद्योगिक नगरों में कारखानों से निकलने वाले गंदे जल के विसर्जन की बहुत बड़ी समस्या होती है इस प्रदूषित जल के रिसकर नीचे पहुंचने से भूमिगत जल भी प्रदूषित हो जाता है जिससे कुओं तथा नलकूपों द्वारा निकाला गया

जल भी प्रदूषित रहता है। अधिकतर नगरों में गंदे जल को निकटवर्ती नदियों या झीलों में गिराय जाता है। जिसका परिणाम यह होता है कि नदी या झील का पानी भी प्रदूषित होकर पीने योग्य नहीं रह जाता इसलिये आधुनिक नगरों में गंदे जल के विसर्जन की समस्या अत्यंत कठिन और भयंकर होती जा रही है।8

नगरों में बढ़ते हुए वाहन तथा इनसे फैलने वाला प्रदूषणः– पैट्रोल चालित वाहनों से कार्बन मोनो ऑक्साइड गैस निकलती है यदि यह मात्रा तीन प्रतिशत से अधिक होती है तो यह खतरनाक सिद्ध होती है। यह गैस रक्त में ऑक्सीजन संचारित करने की छमता घटा देती है अधिक देर तक इस गैस के सम्पर्क में रहा जाए तो सिर दर्द और उल्टी की शिकायत हो जाती हैं वायु में इस गैस की मात्रा ज्याद हो जाए तो बेहोशी तक हो जाती है। अतः आवश्यक है कि महानगरों में वाहनों की संख्या नये किस्म के सुधरे इंजन व प्रदूषण अधिक फ़ैलाने वाले वाहनों को नियंत्रित किया जाए पिछले पाँच वर्षों में दिल्ली के वाहनों में ईंधन के रूप में ब्छ.ळ गैस का प्रयोग प्रदूषण के प्रभाव को कम करने में प्रभावी रहा है वाहनो में स्कूटर व ऑटोरिक्शा प्रदूषण के प्रमुख कारण माने जाते हैं वायु प्रदूषण नगरों के सूक्ष्म जलवायविक अध्ययनो से ज्ञात हुआ है कि नगर के केन्द्रीय सघन बसे हुए भागों में अन्य भागों की तुलना में तापमान 2 से 3 सेल्सियस तक बढ़ जाता है और नगर तापीय द्वीप बन जाता है ताप वृद्धि के कारणों में संघन तथा बहुमंजिला भवनों की स्थिति जनसंख्या घनत्व की अधिकता के कारण घरों की चिमनियो एवं रसोई गृहों से निकलने वाले धुएँ वाहनों तथा कारखानों से निकलने वाले धुएँ आदि की उपस्थिति प्रमुख है। वाहनों और कारखानों के साथ ही कोयला लकड़ी आदि के जलने से निकलने वाली गैसों से निचले वायुमंडल में कार्बन डाई–ऑक्साइड मोनो ऑक्साइड ओजोन आदि की मात्रा बढ़ जाती है जो मनुष्य के अतिरिक्त अन्य जीवो तथा वनस्पतियों के लिए भी हानिकारक होती है ऊँची ऊँची इमारतों के कारण पवनों के सामान्य प्रवाह में रुकावट आती है। वायु प्रदूषण की सर्वाधिक समस्या औद्योगिक नगरों में विशेषत कारखानों के समीपस्थ क्षेत्रो में पाई जाती है।9

अपशिष्ट पदार्थों के विसर्जन की समस्याः– नगरों में वस्तुओं के उपयोग के बाद घरों से प्रतिदिन कूड़ा करकट व अनेक तरह के ठोस अपशिष्ट पदार्थ बाहर निकाले जाते हैं जिनका सड़क पर ढेर लग जाता है प्राचीन मकानों कि गिराने नालियों की खुदाई आदि से भी कूड़ा करकट एकत्रित होते रहते हैं अगर कूड़े को इकट्ठा करके नगर से बाहर नहीं किया जाता तो उनके सड़ने व बिखरने से भयंकर बीमारियों के फैलने की आशंका बनी रहती है इसके लिए सड़कों पर जगह–जगह कूड़ेदान की व्यवस्था करनी पड़ती है जहाँ घरों से निकलने वाले कूड़े इकट्ठे किये जाते हैं। और वहाँ से उन्हें गाड़ियों द्वारा हटाकर नगर के बाहर सही स्थान पर पहुंचाया जाता है वर्तमान समय में प्रत्येक नगर के प्रत्येक क्षेत्र में हाथ गाड़ियाँ घर–घर तक आती हैं उन हाथ गाड़ियों में कचरा घर से ही ले लिया जाता है फिर वहाँ से वह हाथ गाड़ियाँ कचरे को एक स्थान पर एकत्र कर वहाँ से खड़ी गाड़ियों के माध्यम से कचरा शहर से बाहर निकाला जाता है यह कचरा किसी खुली भूमि पर जलाकर भी नष्ट किया जाता है तथा कहीं–कहीं बड़े–बड़े गड्ढों में कूड़े को सडाकर खाद भी बनाई जाती है जनता की लापरवाही व अज्ञानता और नगरीय प्रशासन की उपेक्षा से अधिकांश भारत के नगरों की सड़कों पर कूड़े के ढेर दिखाई पड़ते हैं जो कभी–कभी कई सप्ताह तक अपने स्थान पर ही पड़े रह जाते हैं बरसात के मौसम में कूड़े के सड़ने से अत्यधिक दुर्गन्ध निकलने लगती है और अनेक प्रकार की बीमारियाँ फैलती है इस प्रकार नगरीय प्रशासन के सामने कूड़े जैसे अपशिष्ट पदार्थों के सफाई की भी समस्या गंभीर बनी रहती है10

घरेलू जल मल की समस्याः– घरेलू जल मल के अनुपचार की समुचित व्यवस्था न होना मल जल निकास की समुचित व्यवस्था के अभाव में यह जल नगर के खुले स्थानो में इकट्ठा होता रहता है

अथवा खुली नालियों से प्रवाहित होता हुआ धरातलीय जल स्रोतो को प्रदूषित करता रहता है। इससे नगरवासियों के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है भारत के छोटे नगरों में मल निर्यास प्रणाली का पूर्ण अभाव पाया जाता है यहाँ तक कि महानगरों में भी यह व्यवस्था परिपूर्ण नहीं है मल निर्यास की ही भांति जल निकास नगरों की प्रमुख आवश्यकता है भारत में बरसात के दिनों में जल निकास की समुचित व्यवस्था के अभाव में अथवा ठोस अपशिष्ट के निराकरण के अभाव में पाईपो और नालियों के बन्द हो जाने से नगरों के निचले इलाकों में जल भराव एक प्रमुख समस्या बन जाती है या इकट्ठा जल मच्छरों और मक्खियों का प्रजनन छेत्र बन जाता है जिससे नागरिकों को स्वास्थ्य प्रभावित होता है यही कारण है कि बरसात के समय जलानीत बीमारियों का आपतन बढ़ जाता है। प्रदूषित जल का केवल 10þ भाग ही शुद्ध किया जाता है शेष 90 प्रतिशत प्रदूषित जल नदियों में यूँ ही बहा दिया जाता है पिछले आठ वर्षों में देश में सीवेज प्रदूषित जल की मात्रा आठ गुनी बढ़ गई है इस प्रकार वर्तमान नगर नदियों के जल को प्रदूषित करने के पर्यायवाची बन गये हैं। इस प्रदूषण ने नदियों के किनारे स्थित नगरों में शुद्ध जल की प्राप्ति को दूभर बना दिया है विश्व स्वास्थ्य संगठन के पर्यावरण आयोग के अनुसार भारत के 5161 नगरों में से केवल आठ में जल मल निकास और उपचार की पूर्ण सुविधाएँ है।

गंदी बस्तियों की समस्याः– आज समस्त विश्व के नगरों में गंदी बस्तियों की समस्या विकट रूप धारण कर चुकी है नवीनतम सर्वेक्षण के अनुसार कनाडा में 242 लाख नीदरलैंड में 142 लाख ऑस्ट्रेलिया में 149 लाख श्रीलंका में 99 लाख मलेशिया में 142 लाख जनसंख्या गंदी बस्तियों में रहती है। भारतीय नगरों में तीन करोड़ जनसंख्या जो कि कुल नगरीय जनसंख्या का 36þ है आवास गृहों के अभाव में गंदी बस्तियों में रहती है 2 अक्टूबर 1952 के दिन कानपुर नगर की श्रमिक बस्तियों का निरीक्षण करते हुए पंडित जवाहरलाल नेहरू ने इसे नरक कुंड नाम से संबोधित किया था गंदी बस्तियों की समस्या ने वर्तमान समय में राष्ट्रव्यापी रूप धारण कर लिया है। इस एक समस्या ने अनेक सामाजिक समस्याओं का फैलाव करने में प्रमुख भूमिका निभाई है चूंकि इन बस्तियों में निम्न वर्ग के परिवार रहते हैं तथा इनकी आय के स्रोत एवं आय इतनी सीमित रहती है जिससे ये अपने परिवार के सदस्यों का भरण पोषण सुचारू रूप से नहीं कर पाते इन बस्तियों में अपराध बाल अपराध वेश्यावृत्ति मद्यपान मादक द्रव्यों को रखने का स्थल एवं अन्य अनैतिक कार्य होते हैं और गंदी बस्तियां अनैतिकता का अड्डा बन जाती हैं इन बस्तियों में पानी हवा बिजली रोशनी स्नानागार व शौचालय आदि की उचित व्यवस्था न होने के कारण यह बस्तियां बीमारियों का घर बन गई हैं रोजी रोजगार की तलाश में ग्रामीण पलायन कर नगर की ओर प्रस्थान करता है जिससे आवासीय समस्याओं का जन्म होता है आवासीय समस्या के कारण नगर की खाली पड़ी सरकारी भूमि पर गांव के निवासी झोपड़िया बनाते हैं इन बस्तियों में मूलतः सामाजिक व्यवस्था एवं सुविधाएं मुहैया नहीं होती हैं जिससे इन बस्तियों में गंदगी पनपने लगती है और इसे गंदी बस्ती कहा जाता है। गंदी बस्ती नगर के क्षेत्र होते हैं जहां स्वास्थ्य का समुचित प्रबंध नहीं होता मकानों में अंधेरा सीलन शौचालय स्नानागार पानी बिजली हवा और रोशनी की पर्याप्त सुविधाओं का अभाव पाया जाता है मच्छर छिपकली चूहे और बीमारियां ऐसे परिवेश की देन होते हैं स्थिति यह है कि आज गंदी बस्तियां मानव जाति की शारीरिक एवं मानसिक दृष्टि से कमजोर पीढ़ी को जन्म दे रही है गंदी बस्तियां प्रमुख रूप से एक एसा आवासीय क्षेत्र होता है जहा निवास स्थान नष्ट हो गया हो अत्यधिक भीड़ भाड़ से युक्त हो जिसका डिजाइन त्रुटिपूर्ण हो जहां रोशनदान प्रकाश एवं साफ–सफाई का अभाव हो या इनमें से कुछ कारणों के सम्मिलित प्रभाव के कारण सुरक्षा स्वास्थ्य एवं नैतिकता के लिए हानिप्रद हो।11

नगरों में पर्यावरण की समस्याएंः– मानव प्रकृति व अपने आसपास की पर्यावरण पर निर्भर है। उसके आसपास जैसा पर्यावरण होता है वह वैसा ही व्यवहार बना लेता है परन्तु वर्तमान समय में नगरों में बढ़ती पर्यावरणीय समस्याओं का प्रभाव मानव पर प्रत्यक्ष दिखाई देने लगा है दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि व्यक्ति की सम्पूर्ण जीवन शैली पर गहरा प्रभाव पर्यावरण का पड़ता है आधुनिक प्रगतिशील वैज्ञानिक और यांत्रिक संसार में व्यक्ति पर्यावरण को नियन्त्रित भी करता है। परिवर्तित भी करता है और समस्याओं को भी उत्पन्न करता है प्रकृति समय–समय पर पृथ्वी पर समस्याओं को जन्म देती है जैसे भूकम्प बाढ़ सुनामी लहरे भूस्खलन आदि ये प्राकृतिक आपदाएं नित्य नहीं घटती किन्तु नगरों की जनसंख्या जो अरबों में होती है वही साम्प्रदायिकता नगरबन्द चक्काजाम हड़ताल घेराव जैसी विविध समस्यायें नगर के सामान्य जीवन में उथल–पुथल निर्मित करती है प्रकृति ही आदमी का पर्यावरण बनाती है और यही उसके लिए जरूरी संसाधन जुटाती है आज का मशीनी इन्सान अपनी नासमझी या स्वार्थ के कारण पर्यावरणीय संसाधनों को नष्ट करता जा रहा है पिछले लगभग तीन वर्षों में वैज्ञानिकों ने यह समझने और समझाने की बहुत कोशिश की है कि समय और स्थान विशेष की सीमाओं में हमारे संसाधन असीमित नहीं है अति उपभोगी सभ्यता में औद्योगिक उत्पादन प्राकृतिक संसाधनों और ऊर्जा स्रोत भण्डारों पर आधारित है जो दोनों निश्चय ही तेजी से समाप्त होते जा रहे हैं इस प्रक्रिया में संसाधनों द्वारा ही निर्मित जीवपोशी तन्त्र सकींर्ण दूषित तथा विषाक्त होते जा रहे हैं आज विज्ञान ने हमें दो विकल्पों के चौराहे पर खड़ा कर दिया है एक विवेक मितव्ययिता और नैतिकता का लम्बा रास्ता और दूसरा भोग विलास का जिस पर पर्यावरण तथा मानव जाति का शीघ्र ही सर्वनाश निश्चित है सभी जीवधारी अपनी बुद्धि विकास व सुव्यवस्थित रूप से जीने के लिए सन्तुलित पर्यावरण पर निर्भर रहते हैं सन्तुलित पर्यावरण में प्रत्येक घटक एक निश्चित मात्रा व अनुपात में होता है यदि कभी कोई घटक कम या अधिक हो जाता है तो जीवधारियों के लिए हानिकारक होता है प्रदूषण कहलाता है प्रदूषण वायु जल एवं स्थल की भौतिक रासायनिक एवं जैविक विशेषताओं का वह अवांछनीय परिवर्तन है जो मनुष्य और उसके लिए लाभदायी दूसरे जंतुओं पौधों औद्योगिक संस्थाओं तथा दूसरे कच्चे माल इत्यादि को किसी भी रूप में हानि पहुँचाता है जहाँ भी मानव ने अपने आस–पास फैले प्राकृतिक पर्यावरण को तोड़ा है वहाँ पर्यावरण प्रदूषण की समस्याओं ने जन्म लिया है पर्यावरण प्रदूषण के विस्तृत अर्थ में दूषित हो रही हवा पानी मिट्टी दलदल रेगिस्तान या बीहड़ों का बढ़ना उथली होती जा रही नदियों का बरसात में उफनकर बहना और गर्मी में सूख जाना जंगलों को ध्वस्त करने से लेकर पेयजल का संकट गंदे पानी का निकास जैसी सारी चीजें सम्मिलित हैं जनसंख्या की वृद्धि के साथ–साथ स्वच्छता की समस्या भी पैदा हुई है बड़े–बड़े नगरों में मल मूत्र कूड़ा कचरा कारखानों की राख व रासायनिक गैसें तेजी से निकली जिससे जल वायु पृथ्वी सभी प्रदूषण से खराब होने लगे पर्यावरण जल वायु ध्वनि तथा भूमि प्रदूषण को देखते हुए अमेरिकी ने 1980 में विश्व–2000 नामक एक प्रतिवेदन प्रस्तुत किया था जिसमें कहा था कि यदि पर्यावरण प्रदूषण को नियन्त्रित नहीं किया गया तो सन 2030 तक तेजाबी वर्षा भुखमरी और प्रदूषण का तांडव नृत्य होगा और मानवता का भविष्य खतरे में पड़ जायेगा।12

निष्कर्षः– के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि उपर्युक्त समस्याएँ इस बात की ओर संकेत करती हैं कि नगरों का न केवल पुनरु द्धार किया जाये वरन नये नगरों को योजनाबद्ध प्रणाली के अन्तर्गत ही बसाया जाये नगरों को विशाल आकार में परिवर्तित होने से रोका जाये इसके साथ–साथ आधुनिक नगरों के निर्माण सम्बन्धी योजनाओं को कार्यान्वित करने के लिए एक देशव्यापी अधिनियम बनाया जाये। नगरों के वायुमण्डल को दूषित होने से रोका जाये उद्योगों को नगर से बाहर ऐसे स्थानों पर हवा के विपरीत दिशा में बसाया जाये जिससे उनका धुआँ व दुर्गन्ध नगर में न प्रवेश कर सके कोयले की स्थान पर गैस का प्रयोग घरों में ईंधन के रूप में बढ़ाया जाये वाहनों के शोर–शराबे से निवास स्थानों को दूर

बसाया जाये प्रमुख सड़क मार्गों के सहारे निवास स्थानों का निर्माण न किया जाये। सूर्य प्रकाश तापमान तथा वर्षा सम्बन्धी दशाओं की पूर्ण जानकारी प्राप्त करके ही मकानों को बनाया जाये। नगर का ढाँचा नगरवासियों की सामाजिक आर्थिक दशाओं के रूप अनुरुप विकसित किया जाये। पुराने नगरों का पुनर्निर्माण हो; विशेष रूप से मध्यवर्गीय भाग को फिर से बसाया जाये जहाँ पर अत्यधिक भीड़ भाड़ हो गयी है अनियोजित तरीके से बसें क्षेत्रों का पुनर्निर्माण किया जाये गन्दी बस्तियों की सफाई की जाये। नगरों में सड़कों और नालियों का विकास ठीक प्रकार से किया जाये यातायात व्यवस्था को इस तरह व्यवस्थित किया जाये कि सभी प्रकार के वाहन सड़कों पर बिना किसी को क्षति पहुंचाए तथा गति को बनाये रखकर विचरण कर सके। भारी वाहनों के लिए रिंग मार्ग या (त्पदह त्वंक) या बाई पास का विकास किया जाये भूमिगत रेल मार्गों का विकास किया जाये आवश्यकता हो तो खम्भों पर सड़कों व रेल मार्ग की स्थापना की जाये अर्थात फ्लाईओवर बनाए जाये। नगरों के बाह्य भागों में नगरीय गाँवो की संकल्पना को विकसित किया जाए यह बढ़ती नगरीय जनसंख्या के लिए आवासीय सुविधा प्रदान करने के साथ ही उन्हें हर प्रकार की नगरीय सुविधाएँ प्रदान करें यह बृहद नगरों के उपनगर कहलाए व नगरीय एवं देहात क्षेत्र के रहने के की परम्परा के सकारात्मक पहलुओं का समुच्चय बने।5

नगरों का निर्माण योजना निर्माण एवं उसके कार्यान्वयन के बीच समयानंतर के दौरान अल्पविकसित आधार संरचना के कारण अधिकांश नगरीय विस्तार मूलभूत सुविधाओं के बिना होता है जनसंख्या का ग्रामीण क्षेत्रों से नगरी क्षेत्रों में परिवर्तन नगरीकरण कहलाता है 21 वीं शताब्दी के आरम्भ में जनसंख्या वृद्धि में तेजी देखी गयी इसके परिणामस्वरूप नगरों में भी वृद्धि देखी गयी नगरों में जनसंख्या में प्राय प्राकृतिक वृद्धि की अपेक्षा नगरोंन्मुख ग्रामीण प्रवास से अधिक वृद्धि हो जाती है नगरों की स्थापना तथा ग्रामों के नगरों के रूप में रूपान्तरण कायान्तरण से भी नगरीय जनसंख्या में वृद्धि होती है राज्य में जनसंख्या वृद्धि के अनुपात में नागरिक सुविधाओं आवास रोजगार विद्युत एवं जल– आपूर्ति परिवहन सफाई स्वास्थ्य एवं अन्य जनोपयोगी सुविधाओं में बढ़ोतरी नहीं हो पाई है जिसके कारण नगरवासियों के सामान्य जीवन स्तर में गिरावट आयी है जहां एक ओर नगरवासियों को अपेक्षित वस्तुएँ तथा सुविधाएँ प्राप्त नहीं हो पाती है। वहीं दूसरी ओर नगर में भीड़भाड़ गंदगी बीमारी बेरोजगारी तथा अनेक सामाजिक आर्थिक एवं पर्यावरणीय समस्यायें उत्पन्न हो जाती हैं जहाँ तक आधुनिक नगरों की समस्याओं का प्रश्न है तो इन समस्याओं का कोई अन्त नहीं है। वर्तमान समय में नगरों में उत्पन्न समस्याओं में प्रमुखत आवासीय समस्याएँ गंदी बस्तियाँ झोपड़पट्टी की बढ़ती संख्या जल आपूर्ति की समस्या परिवहन की समस्या पर्यावरण प्रदूषण सरकार की उदासीनता गंदगी निष्पादन की समस्या नैतिक समस्या एवं नगरीय अपराध की समस्या जनसंख्या बेरोजगारी एवं स्वास्थ्य की समस्या इत्यादि हैं।

नगरों की जनसंख्या जैसे–जैसे बढ़ती जाती है उनके रहने के लिए अधिक मकानों की आवश्यकता होती है और खाद्य आपूर्ति से लेकर नागरिक आपूर्तियों तथा सेवाओं की माँग बढ़ जाती है। इससे नगर में भूमि महँगी हो जाती है और मकानों की कमी से आवासीय समस्याएँ उत्पन्न होती हैं जिसके कारण नगर के विभिन्न भागों में मलिन बस्तियाँ पनपने लगती हैं। ज्ञातव्य है कि मलिन बस्तियाँ स्वयं अनेक नगरीय समस्याओं की जड़ है नगर में यातायात की कठिनाई अधिक भीड़–भाड़ और यातायात अवरोध जैसी समस्याएँ भी नगर के अनियंत्रित विकास का ही परिणाम होती है। इसी प्रकार नगर में खाद्य आपूर्ति जलापूर्ति विद्युत आपूर्ति शिक्षा चिकित्सा मनोरंजन प्रशासन आदि से सम्बन्धित समस्याओं के निराकरण के लिए भी एक स्वस्थ्य नियोजन प्रणाली की आवश्यकता होती है जिसके द्वारा विभिन्न प्रकार की नगरीय समस्याओं को कम या समाप्त किया जा सके और नगर को स्वस्थ्य तथा सुविधाजनक जीवन प्रदान किया

जा सके स्वस्थ्य नगरीय जीवन का आशय यह है कि नगर में निवास करने वाले प्रत्येक व्यक्ति को वे सभी सुविधाएँ प्राप्त होनी चाहिए जिसकी उसे नगर में रहते हुए अपेक्षा होती है यद्यपि यह एक आदर्श दशा है जो सामान्यतः पूर्णरूपेण सम्भव नहीं हो पाती है अतः नगरों को वर्तमान समाज की आवश्यकता के अनुरूप बनाया जाये नगरों की व्याख्या करते हुए ममफोर्ड ने कहा है अपने पूरे अर्थ में नगर एक भौगोलिक इकाई है एक आर्थिक व्यवस्था है एक औद्योगिक प्रसारण है सामाजिक कार्य का नाट्य स्थल और सामूहिक एकता का सुन्दर समन्वय तथा चिन्ह है।6

सन्दर्भ ग्रन्थ सूचीः–

1 बंसल,डॉ0 सुरेश चन्द्र 2017–18, नगरीय भूगोल मीनाक्षी प्रकाशन मेरठ पृष्ठ संख्या 156,57,58,63 !
2 तिवारी,श्रीमती शारदा 2007, नगरीय समाजशास्त्र अर्जुन पब्लिशिग हाऊस पृष्ठ संख्या 182,185 !
3 जैन,शशी 2012 नगरीय समाजशास्त्र, रिसर्च पब्लिकेशन्स जयपुर पृष्ठ संख्या 150,151!
4 खत्री,रीया भारत में नगरीय समाजशास्त्र 2018 कैलाश पुस्तक सदन भोपाल पृष्ठ संख्या 260 263 !
5 तिवारी,आर0 सी0 अधिवास भूगोल 2017 प्रवालिका पब्लिकेशन्स इलाहाबाद पृष्ठ संख्या 319 !
6 शेखावत,डॉ0 प्रदीप सिंह नगर नियोजन एवं विकास 2019 अखण्ड पब्लिशिग दिल्ली पृष्ठ संख्य 152,153
7 सिंह,डॉ0 वी0 एन0 नगरीय समाजशास्त्र 2011 विवेक प्रकाशन जवाहर नगर दिल्ली पृष्ठ संख्या 173,175!
8 पाटिल,डॉ0 अशोक डी. ग्रामीण एवं नगरीय समाजशास्त्र 2013 मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल पृष्ठ संख्या 216 217 !
9 सैनी,डॉ0 रामेश्वर लाल नगरीय समाजशास्त्र 2003 राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी जयपुर पृष्ठ संख्या 77
10 शर्मा,डॉ0 राजेन्द्र कुमार नगरीय समाजशास्त्र 1996 एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स पृष्ठ संख्या 145
11 अग्रवाल,डॉ0 जी के ग्रामीण एवं नगरीय समाजशास्त्र 2014–15 एस0 बी0 पी0 डी0 पब्लिशिग हाऊस पृष्ठ संख्या 213 !
12 खत्री,हरीश कुमार नगरीय भूगोल 2018 कैलाश पुस्तक सदन भोपाल पृष्ठ संख्या 277 !